इकाई-1

सामाजिक नीति

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य (Objectives)
1.1 प्रस्तावना (Preface)
1.2 भूमिका (Introduction)
1.3 सामाजिक नीति की अवधारणा (Concept of Social Policy)
1.4 सामाजिक नीति के प्रकार्य (Function of Social Policy)
1.5 सामाजिक नीति का क्षेत्र (Scope of Social Policy)
1.6 सामाजिक नीति निर्धारण से सम्बन्धित प्रमुख कारक (Main Factors Related to Social Policy)
1.7 सामाजिक नीति के अभिगम (Approaches of Social Policy)
1.8 सामाजिक नीति के प्रारूप (Models of Social Policy)
1.9 सामाजिक नीति के सिद्धान्त (Theories of Social Policy)
1.10 सामाजिक नीति के निर्धारक एवं स्रोत (Determinants andSources of Social Policy)
1.11 सारांश (Summary)
1.12 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)
1.13 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप –

- सामाजिक नीति के अर्थ, विशेषताओं एवं उद्देश्य का विश्लेषण करना है।
- सामाजिक नीति के कारकों तथा प्राथमिकताओं को जान सकेंगे।
- सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपाय सम्बन्धी उपायों को समझ सकेंगे|
- सामाजिक नीति के अभिगम, प्रारूप, सिद्धान्त, निर्धारकों एवं स्रोतो के विषय में जानकारी हो जाएगी।

1.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक नीति स्थायी विकास का मुख्य आधार है, जिसके माध्यम से समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने तथा सामाजिक पूंजी को सुदृढ़ करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि राज्य व राज्य के नागरिक एक स्वस्थ्य एवं सशक्त समाज का निर्माण कर सके।

1.2 भूमिका (Introduction)

भारत की सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नियोजित विकास का सहारा लेना आवश्यक समझा गया क्योंकि यह अनुभव किया गया कि गरीबी, बेरोजगारी जैसी अनेक गंभीर सामाजिक समस्याएं उचित विकास न होने के कारण ही हमारे समाज में व्यापक रूप से विद्यमान है। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव संसाधनों का विकास करते हुए आर्थिक प्रगति की गति को और अधिक तेज करना तथा इससे होने वाले लाभों को आम जनता में न्यायपूर्ण ढंग से बांटना आवश्यक समझा गया और इसलिए सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू करे।

1.3 सामाजिक नीति की अवधारणा (Concept of Social Policy)

सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सशक्त करती है तथा परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सहभागिता के लिए सम्मिलित करती है प्रोत्साहित करती है जिससे सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। सामाजिक नीति न्याय पर आधारित होती है जिसका उद्देश्य अनुकम्पा तथा संतुष्टि के द्वारा स्थानीय समुदायों तथा वाह्य संसार को सुदृढ़ बनाना होता है।

सामाजिक नीति अवसरों में समानता के सिद्धान्त पर आधारित है जिसमें बिना किसी असमानता और भेदभाव के तथा ‘जाति,’ प्रजाति, धर्म, वर्ग, लिंग इत्यादि को ध्यान में न रखकर सभी को समान अवसर प्रदान किए जाते हैं।

सामाजिक नीति का लोक नीतियों के रूप में मुख्य उद्देश्य सूक्ष्म स्तर पर लोगों को प्राप्त होने वाले समानता के अवसर के लाभ को प्रोत्साहित करना, संस्था तथा संस्थागत लाभों को समूह तक पहुंचाना, तथा समष्टि स्तर पर क्षैतिज तथा लम्बवत् रूप में सामाजिक एकीकरण के लाभ को समाज तक पहुंचाना है। सामाजिक नीति को परिवर्तन के लिए किए जाने वाली सम्पूर्ण क्रियाओं के रूप में वर्णित किया जाता है।

सामाजिक नीति को वर्तमान में उपलब्ध साहित्य में त्रूटिपूर्ण अथवा गलत तरीके से प्रस्तुत अथवा समझा गया है तथा इसे आर्थिक नीति के पश्चात महत्वपूर्ण माना गया हैं। परम्परागत दृष्टिकोण से सामाजिक नीति को सेवाओं का साम्यपूर्ण आंकलन करने तथा समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों को आलम्बन व सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना समझा गया है। सामाजिक नीति मानव कल्याण को प्रोत्साहित करने तथा जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए निर्देशित होती है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण के आधार पर सामाजिक नीति, सामाजिक रूप में पुनर्वितरण (धनी से निर्धन, युवा से वृद्ध की ओर) सामाजिक नियमन रूप से (बाजार अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित आधारभूत नियमों को बनाने

से), तथा सामाजिक अधिकार रूप से (नागरिकों के अधिकारों व कर्तव्यों को करने के साथ आय तथा सेवाओं का आंकलन करना) हस्तक्षेप करती है।

सामाजिक नीति लोगों की कल्याणकारी आवश्यकताओं और सामाजिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने में लोचशीलता तथा कल्पना को प्रोत्साहित करती है। सामाजिक नीति, सरकारी तथा अन्य संगठनों के द्वारा मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति, मानवीय अस्तित्व के लिए आवश्यक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक पक्षों से सम्बन्धित है तथा इन पक्षों के लिए साधनों को किस प्रकार उपलब्ध कराया जाए, से भी सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति एक अन्तर-विशयक तथा व्यवहारिक विषय है जो कि सामाजिक आश्यकताओं से सम्बन्धित संसाधनों के वितरण तथा पहुंच के विश्लेषण से सम्बन्धित है। इस विषय में समाज के सदस्यों की सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मार्गो का वितरण, पुनर्वितरण, नियमन, प्रावधानों और सशक्तीकरण की संरचना एवं व्यवस्था का अध्ययन करती है।

सामाजिक नीति को न केवल शैक्षिक अध्ययन मे प्रयोग में लाया जाता है बल्कि इसका उपयोग वास्तविक जीवन में नीति निर्माताओं द्वारा सामाजिक क्रिया में भी किया जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक नीति दोनों जीवन गुणवत्ता को प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित नीति निर्माण एवं शैक्षिक अध्ययन से सम्बन्धित अपनायी जाने वाली क्रियाओं से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति विषय होने के साथ अभ्यास करने का एक क्षेत्र भी है। यहां पर यह अन्तर करना आवश्यक है,विशेषकर भ्रम होता है कि सामाजिक नीति अध्ययन करने का क्षेत्र है और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरकार, स्थानीय निकायों तथा अन्य संगठनों द्वारा नीतियों को गुच्छ रूप में अपनाये जाने से है।

इस प्रकार, सामाजिक नीति सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आर्थिक विकास और सामाजिक विकास के सूचकों व सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने और प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति के द्वारा अधिक से अधिक साम्यपूर्ण और सामाजिक स्थायी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना है। समग्र रूप से एक सामाजिक नीति नीतियों, संस्थाओं और कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना है जिससे कि आर्थिक वृद्धि के लिए समता एवं सामाजिक न्याय के संतुलन को स्थापित किया जा सके।

12.3.1 सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Social Policy)

सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा का विस्तृत विवेचन नीचे किया गया है:-

सामाजिक नीति का अर्थ

सामाजिक नीति दो शब्दों से मिलकर बना है: सामाजिक तथा नीति सामाजिक शब्द समाज से बना है। समाज का अर्थ सामाजिक सम्बन्धों के जाल से है जो इसके सदस्यों के बीच पाये जाते हैं। जहां कहीं भी हम ‹सामाजिक› शब्द का प्रयोग करते हैं वहां हमारा अभिप्राय सदस्यों के हित से और सदस्यों के सम्मिलित रूप से होता है। नीति कार्य करने के लिए स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया मार्ग है।

सामाजिक नीति सामाजिक संरचना की कमियों को दूर करती है, असंतुलन को रोकती है तथा असंतुलन वाले क्षेत्र से इसे दूर करने का प्रयास करती है। गोखले के मत में सामाजिक नीति एक

साधन है, जिसके माध्यम से आकांक्षाओं तथा प्रेरकों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि सभी के कल्याण की वृद्धि हो सके। सामाजिक नीति द्वारा मानव एवं भौतिक दोनों प्रकार के संसाधनों में वृद्धि की जाती है जिससे पूर्ण सेवायोजन की स्थिति उत्पन्न होती है तथा निर्धनता दूर होती है।

सामाजिक नीति की परिभाषाएं

सामाजिक नीति को 'लोक नीतियों' की एक श्रृखंला के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करती है। सामाजिक नीति में दोनों तात्विक तथा उपकरणात्मक मूल्य समाहित होता है। तात्विक अथवा मूलभूत रूप में समानता के अवसर का निर्माण करती है तथा उपकरणात्मक मूल्य के रूप में सामाजिक एकीकरण तथा लोक संस्थाओं की वैधता को सुदृढ़ करती है। विकासशील विश्व के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक नीति एक ऐसे सुरक्षात्मक जाल का निर्माण करती है जिससे कि आर्थिक उदारीकरण, शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्र में किए जाने वाले निवेश के द्वारा पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सके।

सामाजिक नीति को स्पष्ट करने तथा उसकी उचित परिभाषा करने का लगातार प्रयास किया जाता रहा है किन्तु अभी तक कोई भी ऐसी परिभाषा विकसित नहीं हो पायी है कि जिसमें इसकी सभी विशेषताएं पायी जाती हों। ऐसा विशेष रूप से इसलिए हुआ क्योंकि सामाजिक नीति का सम्बन्ध प्रमुख रूप से सामाजिक समाधानों से था और इसके लिए आवश्यक विशेष प्रकार के ढंग उपलब्ध नहीं थे।

कुलकर्णी के अनुसार, ''नीति कथन उस ओढ़ने के वस्त्र के ताने बाने के धागे हैं जिनकों पिरो कर चोंगा तैयार होता है। यह सूक्ष्म ढांचा होता है जिसमें सूक्ष्म क्रियाओं को अर्थपूर्ण ढंग से समाहित किया जाता है।

पान्सियान के अनुसार, ''इस प्रकार सामाजिक नीति को एक ऐसी नीति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो उस समाज के व्यक्तियों तथा समूहों की कमियों को दूर करने के लिए समाज का सतत् सुधार करती है। अपनी उत्तरोत्तर प्राप्ति में यह निर्बल लोगों की सहायता करती है, कमजोरियों को रोकती है तथा अच्छी परिस्थितियों की रचना करती है या सुधारती है।

बोल्डिंग के अनुसार, ''सामाजिक नीति'' सामाजिक जीवन के उन पहलुओं के रूप में मानी जाती है जिनकी उतनी अधिक विशेष ऐसा विनिमय नहीं होता है जिसमें एक पाउण्ड की प्राप्ति उसके बदले में किसी चीज को देते हुए की जाती है जितना कि एक पक्षीय हस्तांतरण जिन्हें प्रस्थिति, वैधता, अस्मिता या समुदाय के नाम पर उचित ठहराया जाता है।

टिटमस के अनुसार, ''सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक आवश्यकताओं की एक विविधता एवं मानव संगठन की कमी वाली परिस्थितियों में कार्य करने के अध्ययन से है जिसे परम्परागत रूप से इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज सेवायें अथवा समाज कल्याण व्यवस्था कहा जाता है।

आइडेन के अनुसार, ''तब सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक उद्देश्यों से है। यह उन उद्देश्यों जहां पहले से ही काफी हद तक एकमत होता है, को पूरा करने के वैकल्पिक साधनों की लागतों तथा लाभों को स्पष्ट करने से बहुत कम सम्बन्धित होती है।''

लेविन ने ''सामाजिक नीति को अभ्यास के रूप में स्पष्ट करते हुए कहा है कि सामाजिक हस्तक्षेप के द्वारा नागरिकों के कल्याण व जीवन गुणवत्ता को प्रोत्साहित करते हुए सामाजिक परिवर्तन के लिए तैयार करना है।'' बहुत से संगठन तथा संस्थाएं और लोग कार्य को करने अथवा लोगों के लिए करने में, सामाजिक नीतियों के निरूपण व लागू होने की प्रक्रिया में सम्मिलित होते है।

इस प्रकार सामाजिक नीति की परिभाषा ऐसे मार्गदर्शनों के रूप में की जा सकती है जो समाज के सदस्यों द्वारा मानव संसाधनों का समुचित विकास, उत्पादकता की अधिक से अधिक वृद्धि और होने वाले लाभों का न्यायपूर्ण वितरण करते हुए अधिक से अधिक व्यक्तियों के अधिक से अधिक कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिए निर्धारित किये जाते हैं।

1.3.2 सामाजिक नीति की विशेषताएं (Characteristics of Social Policy)

सामाजिक नीति की विशेषताओं को विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण के पश्चात निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है:-

1) सामाजिक नीति, एक विषय के साथ अभ्यास का एक क्षेत्र है।
2) सामाजिक नीति, एक उपकरण है।
3) सामाजिक नीति, वितरणात्मक एवं पुनर्वितरणात्मक भूमिकाओं का प्रतिपादन करती है।
4) सामाजिक नीति, संसाधनों का हस्तांतरण समाज के एकविशेष वर्ग से अन्य दूसरे वर्ग को करती है।
5) सामाजिक नीति समाज के कमजोर एवं दुर्बल वर्ग से सम्बन्धित है।
6) सामाजिक नीति, एक दूसरे से सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति, एक विषय के साथ अभ्यास का एक क्षेत्र है

सामाजिक नीति एक विषय है न कि एक विशेष शाखा। अध्ययन के क्षेत्र को विकसित करने के लिए विभिन्न समाज विज्ञान शाखाओं से ज्ञान को अर्जित किया है। वाल्स स्टीफेन और मूल (2000) ने सामाजिक नीति को एक विषय माना है जिसके मूल समाज विज्ञानों में निहित है। इन समाज विज्ञानों की शाखाओं यथा समाजशास्त्र, समाजकार्य, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, प्रबन्धन इतिहास, दर्शन और विधि ने अपना योगदान दिया है। सामाजिक नीति सापेक्ष रूप से शैक्षिक अध्ययन का एक नया क्षेत्र है। यह एक अन्तर-विशयक समाज विज्ञान विषय है जिसने विशेषकर समाजशास्त्र, राजनीति और अर्थशास्त्र से विचारों तथा अवधारणा को प्रस्तुत किया है। एक विषय के रूप में सामाजिक नीति उन मार्गो को केन्द्रित करती है जिससे सरकारें लोगों के जीवन को समृद्ध बनाने के लिए, परिवर्तन के लिए प्रयास करती है। सामाजिक नीति को अध्ययन के क्षेत्र के रूप में विशेषकर:-

1) लोगों, समाज तथा समाज कल्याण से सम्बन्धित विचारों, मूल्यों व विश्वासों
2) वास्तविक जीवन व समकालीन सामाजिक समस्याओं,
3) समाज कल्याण मुद्दों और सरकार के कार्य विधियों एवं अभिगमों,

4) सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में सामाजिक नीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन से सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति, लोगों की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करने वाली नीतियों, कार्यान्वयन और विकास के व्यावहारिक अध्ययन से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति प्रत्यक्ष रूप से विचारों से सम्बन्धित है जो कि औपचारिक रूप से विशेषकर विचारधारा पर आधारित है। अभ्यास के रूप में सामाजिक नीति का लक्ष्य सामूहिक रूप से कल्याणकारी सेवाओं के द्वारा मानवीय जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि लाना और प्रोत्साहित करना है।

सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में

सामाजिक नीति को एक उपकरण के रूप में सरकारों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है जिससे कि सामाजिक संरचनाओं और बाजार संस्थाओं का नियमन किया जा सके। सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में सिद्धान्त पर अस्वीकार है क्योंकि यह सामाजिक लक्ष्यों के महत्व पर आधारित है। सामाजिक नीति संसाधनों को लामबन्द करने के परिप्रेक्ष्य में सक्रिय भूमिका निभाती है। सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में विस्तृत कार्य क्षेत्र यथा वित्तीय नीति, भूमि सुधार, सामाजिक विधान, कल्याण उपयों तथा अन्य द्वारा विभिन्न सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लायी जाती है। यह किसी भी राष्ट्र को राजनैतिक और विचारात्मक संरचना पर आधारित होती है। सामाजिक नीति को एक परिवर्तन के, एक सकारात्मक उपकरण के रूप में देखा जा सकता है।

सामाजिक नीति वितरणात्मक और पुनर्वितरणात्मक भूमिका का प्रतिपादन करती है

सामाजिक नीति से सम्बन्धित विभिन्न विचारकों के दृष्टिकोण के अनुसार जिसमें टिटमस, डानिसन और बोल्डिंग ने इस बात पर बल दिया है कि सामाजिक नीति की प्रकृति वितरणात्मक अथवा पुनर्वितरणात्मक है। इस आधार पर सरकार द्वारा बनायी गयी सभी नीतियां एक अथवा दूसरे अर्थ में पुनर्वितरणात्मक प्रकृति की होती है। जिसका मुख्य उद्देश्य और प्राथमिक कार्य लोगों के मध्य सामाजिक संसाधनों का पुनर्वितरण करना है। जिसके लिए सरकार निश्चित मापदंड तय करती है। डानिसन के दृष्टिकोण में (1975) किस प्रकार समाज नीति से अलग है, वास्तव में यह विभिन्न वर्गों व समूहों के मध्य अवसरों तथा संसाधनों के वितरण से तालमेल स्थापित करने से है, जो कि सामाजिक पक्ष से सम्बन्धित है। जबकि दूसरे अर्थ में सामाजिक नीति हमेशा अन्य पक्षों जो कि अधिक लोगो के लिए अत्यधिक महत्वूर्ण होती है।

सामाजिक नीति संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्ग विशेष से अन्य वर्ग विशेष की ओर करती है

सामाजिक नीति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्ग विशेष से अन्य वर्ग विशेष की ओर किया जाता है। यह विचार बोल्डिंग के मस्तिष्क में तब आया जब वह सामाजिक व आर्थिक नीति के मध्य अन्तर स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे। आपने बताया है कि ‘‘सामाजिक नीति को एकीकृत व्यवस्था के धागे की एक विशेषता के रूप में समझा जा सकता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकार का मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय व अवसरों में समानता को स्थापित करना होता है। सरकार के लिए आवश्यक है कि समाज के सभी वर्गों तक संसाधन पहुचें

विशेषकर समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के बीच। इसके लिए यह आवश्यक है कि निर्धन व धनी के बीच व्याप्त खाई को कम किया जाए। इस प्रकार यह सरकार पर निर्भर करता है कि संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्गविशेष से अन्य वर्ग विशेष पर करे।

सामाजिक नीति समाज के दुर्बल व कमजोर वर्ग से सम्बन्धित होती है

सामाजिक नीति समाज के कमजोर व दुर्बल वर्ग के लोगों यथा निर्धन, महिलाएं, बच्चे, अयोग्य पिछड़े वर्गों और अन्य जो कि सामाजिक जीवनधारा से दूर है, से सम्बन्धित है। इस प्रकार सामाजिक नीतियों का उद्देश्य समतावादी समाज की स्थापना होना चाहिए जहां पर असमानता को न्यूनतम स्तर तक लाया जा सके।

सामाजिक नीति एक दूसरे से सम्बन्धित है

सामाजिक नीति की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता एक दूसरे पर अन्योन्यश्रियता है, अर्थात् सामाजिक नीतियों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। एक सामाजिक नीति तभी ज्यादा प्रभावी हो सकती है जब वह अन्य किसी दूसरी नीति से सम्बन्ध रखे। यह निर्धारण किसी भी राष्ट्र की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिदृश्य पर निर्भर करता है। यहां तक कि उस राष्ट्र की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों एवं वैश्वीकरण के इस काल में अधिकतर नीतियों की प्रकृति वैश्विक होती है और इसके फलस्वरूप पड़ने वाले प्रभाव अन्य दूसरे स्थानों पर भी पड़ते हैं।

केनेथ के द्वारा प्रस्तुत सामाजिक नीति की विशेषताएं

केनेथ (2004) ने सामाजिक नीति की विशेषताओं की चर्चा की है। जो कि निम्नवत् हैः-

1) सामाजिक नीति एक नीति है जिसका निर्माण जीवन के पक्षों के निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु किया जाता है जिससे कि जीवन को सुरक्षित बनाया जा सके।
2) सामाजिक नीति समाज कल्याण वस्तुओं के प्रति उन्मुख होती है जिसका सकारात्मक लक्ष्य मानव जीवन को सुखमय बनाना है। जिसे मानवीय आवश्यकताओं, योग्यताओं, सक्रिय सहभागिता, समता, न्याय इत्यादि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।
3) सामाजिक नीति विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के नीति उपकरणों का संचालन करती है। जिसमें मुख्य रूप से भूमि सुधार, कृषि कार्यक्रमों, शिक्षा व सामाजिक संरक्षण कार्यक्रमों को शामिल किया जा सकता है।
4) सामाजिक नीति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित कर्ताओं द्वारा निरूपित व कार्यान्वित किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक नीति का क्षेत्र राज्य या राष्ट्र तक सीमित नहीं है बल्कि क्षेत्र से स्थानीय स्तर की ओर और संगठनों को लगता है कि जहां इसकी पहचान की जा सकती है इसे ऊपर की ओर और वैश्विक स्तर पर पहुंचाया जा सकता है।

1.3.3 सामाजिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Social Policy)

एक सामाजिक नीति विशिष्ट सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर बनायी जाती है। ये सामाजिक उद्देश्य औपचारिक राष्ट्रीय सर्वसम्मति को प्रदर्शित करते है जो राष्ट्र के संविधान के अनुरूप होते है।

एक समाज कल्याण नीति समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के लिए होती है जोकि सामान्य कार्यक्रमों का लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। तारलोक सिंह ने सामाजिक नीति के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा है कि उसके दृष्टिकोण के तीन आधार बताये है।

प्रथम यह कि कार्यक्रमों एवं उपयों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक सेवाओं का विस्तार तथा गुणात्मक वृद्धि करने, दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों का कल्याण एवं विकास, सामाजिक सुधार एवं सामाजिक परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। द्वितीय यह कि जनसंख्या के विभिन्न वर्गों के रूप में देख सकते है, तृतीय यह कि समाज का विशेष वर्ग जो विकास के लिए विशेष आवश्यकता रखता है और जो सामाजिक दृष्टिकोण से सम्पूर्ण समुदाय के लिए महत्वपूर्ण हो। एक प्रजातांत्रिक समाज में यथा हमारा देश जो समाजवादी दृष्टिकोण पर आधारित है में शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा के उपायों यथा बेरोजगारी की समस्या, अयोग्यता, वृद्ध और आर्थिक असमानता के लिए एकीकृत एवं विस्तृत सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है, प्रक्रिया को स्थापित किया जाता है|

सामान्य रूप से सामाजिक नीति का उद्देश्य ग्रामीण तथा नगरीय, धनी तथा निर्धन, समाज के सभी वर्गों को अपना जीवन स्तर ऊँचा उठाने के अवसर प्रदान करना तथा विभिन्न गम्भीर सामाजिक समस्याओं का समुचित निदान करते हुए उनका निराकरण करना है ताकि किसी भी वर्ग के साथ अन्याय न हो। तारलोक सिंह का मत है ‘‘ सामाजिक नीति का मूल उद्देश्य ऐसी परिस्थतियों का निर्माण करना होना चाहिए जिनमें प्रत्येक क्षेत्र, नगरीय अथवा ग्रामीण तथा अपनी विशिष्ट एवं पहचाने जाने योग्य समस्याओं सहित प्रत्येक समूह अपने को ऊपर उठाने, अपनी सीमाओं को नियंत्रित करने तथा अपनी आवासीय स्थितियों एवं आर्थिक अवसरों को उन्नत बनाने और इस प्रकार समाज सेवाओं के मौलिक अंग बनने में समर्थ हो सके।

सामाजिक नीति का केन्द्रिय लक्ष्य ग्रामीण अथवा नगरीय, प्रत्येक समूह की पहचानने योग्य समस्याएं, लोगों की जीवन दशाओं में वृद्धि तथा आर्थिक अवसरों की दशाओं को उत्पन्न करना है। इसका उद्देश्य प्रत्येक मानव की आर्थिक जरूरतों, स्वास्थ्य का उच्च स्तर तथा अनुकूल जीवन निर्वाह दशाएं, विचारों की स्वतंत्रता, अवसरों में समानता, पूर्ण विकास तथा आत्मसम्मान की रक्षा करना है।

सामाजिक नीति का उद्देश्य मानव कल्याण में वृद्धि तथा मानवीय आवश्यकताओं यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास व सामाजिक सुरक्षा को पूरा करने से है। अध्ययन के दृष्टिकोण से सामाजिक नीति का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य तथा सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप नीतियों की श्रंखला से है।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर सामाजिक नीति के उद्देश्य निम्नलिखित है:-

1) सामाजिक परिवर्तन
2) सामाजिक एकीकरण
3) जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि
4) अवसरों में समानता लाना
5) संसाधनों का साम्यपूर्ण वितरण करना
6) सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करना

भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत सामाजिक नीति के उद्देश्य

भारत सरकार ने सामाजिक नीति तथा नियोजित विकास के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया है:-

- उन दशाओं का निर्माण करना जिनसे सभी नागरिकों का जीवन स्तर ऊँचा उठ सके।
- महिलाओं तथा पुरूषों दोनों को समान रूप से विकास और सेवा के पूर्ण एवं समान अवसर उपलब्ध कराना।
- आधुनिक उत्पादन संरचना का विस्तार करने के साथ-साथ स्वास्थ्य, सफाई, आवास, शिक्षा तथा सामाजिक दशाओं में सुधार लाना।

1.4 सामाजिक नीति के प्रकार्य (Goal and Functions of Social Policy)

सामाजिक नीति के निम्नलिखित लक्ष्य एवं कार्य हैं:-

1) वर्तमान कानूनों को अधिक प्रभावी बनाकर सामाजिक निर्योग्यताओं को दूर करना।
2) जन सहयोग एवं संस्थागत सेवाओं के माध्यम से आर्थिक निर्योग्यताओं को कम करना।
3) बाधितों को पुनर्स्थापित करना।
4) पीडित मानवता के दुःखों एवं कष्टों को कम करना।
5) सुधारात्मक तथा सुरक्षात्मक प्रयासों में वृद्धि करना।
6) शिक्षा-दीक्षा की समुचित व्यवस्था करना।
7) जीवन स्तर में असमानताओं को कम करना।
8) व्यक्तित्व के विकास के अवसरों को उपलब्ध कराना।
9) स्वास्थ्य तथा शोषण स्तर को ऊँचा उठाना।
10) सभी क्षेत्रों में संगठित रोजगार का विस्तार करना।
11) परिवार कल्याण सेवाओं में वृद्धि करना।
12) निर्बल वर्ग के व्यक्तियों को विशेष संरक्षण प्रदान करना।
13) उचित कार्य की शर्तों एवं परिस्थितियों का आश्वासन दिलाना।
14) कार्य से होने वाले लाभों का साम्यपूर्ण वितरण सुनिश्चित करना।

1.5 सामाजिक नीति का क्षेत्र (Scope of Social Policy)

सामाजिक नीति के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं, जिनके कार्यों को समुचित निर्देशन देना तथा उन्हें पूरा करना आवश्यक समझा जाता है:

सामाजिक कार्यक्रम तथा उनसे सम्बन्धित कार्य

1) समाज सेवाओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पोशण, आवास, इत्यादि की लगातार वृद्धि एवं सुधार करना।
2) निर्बल वर्ग तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कल्याण तथा उनके सामाजिक आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना।
3) स्थानीय स्तर पर पूरक कल्याण सेवाओं के विकास के लिए नीति निर्धारित करना।
4) समाज सुधार के लिए नीति प्रतिपादित करना।
5) सामाजिक सुरक्षा के लिए नीति बनाना।
6) सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाना-आय तथा धन के असमान वितरण में कमी लाना, आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण पर रोक लगाना तथा समान अवसर उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करना।

समुदाय के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित सामाजिक नीति

प्रत्येक ऐसे समुदाय में जहां औद्योगीकरण तथा आधुनिकीकरण तीव्रगति से होता है, दो वर्गों का अभ्युदय स्वाभाविक है। एक वर्ग ऐसा होता है जो उत्पन्न हुए नये अवसरों से पूरा लाभ उठाता है। उदाहरण के लिए, उद्योगपति, बड़े-बड़े व्यवसायी, प्रबन्धक तथा बड़े कृषक । दूसरा वर्ग वह होता है जो जीवन की मुख्य धारा से अलग होता है और जिसे वर्तमान योजनाओं के लाभ नहीं मिल पाते। उदाहरण के लिए, भूमिहीन खेतीहर मजदूर, जन-जातियों के सदस्य, मलिन बस्तियों के निवासी, असंगठित उद्योगों में लगे हुए मजदूर इत्यादि।

12.8.3 सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समाज के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित सामाजिक नीति

प्रत्येक समाज के कुछ ऐसे महत्वपूर्ण वर्ग होते हैं जिनका कल्याण आवश्यक माना जाता है। उदाहरण के लिए, कम आयु के बच्चे, विद्यालय का लाभ न उठा पाने वाले बच्चे, अध्ययन के दौरान ही कुछ अपरिहार्य कारणों से विद्यालय को छोड़कर चले जाने वाले बच्चे तथा नौजवान।स

1.6 सामाजिक नीति निर्धारण से सम्बन्धित प्रमुख कारक (Main Factors Related to Social Policy)

सामाजिक नीति का निर्धारण करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है:

- विकास स्वयं में एक प्रक्रिया है। यह सतत् चलने वाली सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया के एक इच्छित दिशा में निर्देशित किये जाने पर प्रारम्भ होती है। यह आवश्यक अभिवृद्धि एवं सामाजिक प्रगति दोनों के लिए आवश्यक है। सामाजिक

परिवर्तन की मूलभूत प्रक्रिया पर आधारित होने के कारण विकास की प्रक्रिया का सही दिशा निर्देशन आवश्यक है।

- विकास के सिद्धान्तों को समाज की स्थिति को ध्यान में रखते हुए अपनाया जाना चाहिए। किसी भी विकासशील अथवा विकसित देश को किसी अन्य देश की परिस्थितियों में सफल सिद्ध हुई विकास की पद्धतियों एवं उपकरण का अंधा अनुकरण नहीं करना चाहिए।
- सामाजिक नीति के निर्धारण तथा कार्यान्वय में जन सहभागिता,विशेष रूप से युवा सहभागिता आवश्यक होती है क्योंकि ऐसी स्थिति में जो भी योजनाएं एवं कार्यक्रम बनाये जाते हैं उनके प्रति लोगों का लगाव होता है और वे इनकी सफलता के लिए तन, मन और धन प्रत्येक प्रकार से अपना अधिक से अधिक योगदान देते हैं।

1.6.1 सामाजिक नीति की प्राथमिकताएं (Priorities of Social Policy)

विकास की गति तथा उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि सामाजिक नीति के अन्तर्गत क्या प्राथमिकतायें निर्धारित की गयी है। भारत जैसे विकासशील देश जिसमें विकास के अनेक आयाम तथा समस्यायें हैं, प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण परम आवश्यक है। कोई भी नीति चाहे कितने अच्छे ढंग से क्यों न निर्धारित की जाये किन्तु यदि प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण न किया जाये तो नीति असफल हो जाती है। प्राथमिकता निर्धारण के लिए निम्नलिखित 4 सिद्धान्तों का निरूपण किया जा सकता है।स

- केवल समायोजन पर बल न देते हुए बाल-कल्याण तथा सम्पूर्ण विकास को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए।
- उपचारात्मक सेवाओं के स्थान पर निरोधात्मक सेवाओं के प्रसार को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए।
- केवल विशिष्ट समूहों को सेवायें न प्रदान कर सम्पूर्ण समुदाय को सेवायें उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
- दीर्घकालीन अथवा अल्पकालीन सहायता पहुंचाने के स्थान पर समाज सेवाओं को निरोधात्मक तथा पुनर्स्थापन सम्बन्धी कार्यों में लगाया जाना चाहिए।

1.6.2 सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपाय (effective Measures of Social Policy)

क्योंकि सामाजिक नीति का प्रमुख उद्देश्य लोगों को सामाजिक न्याय दिलाते हुए चौमुखी सामाजिक-आर्थिक विकास करना है, इसीलिए इसे प्रभावपूर्ण बनाने की दृष्टि से निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं:-

1) कल्याणकारी राज्य की नींव मजबूत करने तथा उसके पुष्पित एवं पल्लवित होने के लिए उपयुक्त मार्ग प्रशस्त करने के लिए राज्य को समाज सेवाओं विशेष रूप से

समाज कल्याण सेवाओं के क्षेत्र में प्रमुख भूमिका निभानी होगी ताकि आवश्यक सुविधाएं समाजके सभी वर्गों को प्राप्त हो सके और इनका दुरूपयोग न हो सके।

2) किसी भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राज्य को अपना कल्याणकारी रूप परावर्तित करने के लिए इसके माध्यम से सामाजिक नीति का निर्माण करना होगा।
3) सामाजिक नीति के समुचित प्रतिपादन हेतु आवश्यक तथ्यों का संग्रह करने के लिए सामाजिक सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन को समुचित महत्व प्रदान करना होगा।
4) शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, मनोरंजन जैसी समाज सेवाओं तथा निर्बल एवं शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लिए अपेक्षित सेवाओं के बीच आवश्यक संतुलन स्थापित करना होगा ताकि समाज का समुचित विकास सम्भव हो सके।
5) राज्य को समाज सेवियों एवं समाज कार्यकर्ताओं के प्रति अपने वर्तमान सौतेले व्यवहार को बदलते हुए उन्हें इच्छित सामाजिक स्वीकृति प्रदान करनी होगी।
6) सामाजिक नीति का निर्धारण इस बात को ध्यान में रखकर करना होगा कि आर्थिक दशाओं में सुधार तभी हो सकता है जबकि सामाजिक दशाओं में वांछित परिवर्तन लाया जाये।
7) सुधारने के लिए सुझाव आदि भी देने चाहिए।

1.7 सामाजिक नीति के अभिगम (Approaches of Social Policy)

सामाजिक नीति के आदर्शात्मक अभिगम क्या है इसके विषय में कह पाना अत्यन्त कठिन है। सामाजिक नीति से सम्बन्धित अभिगमों की संख्या कई है। प्रत्येक अभिगम सामाजिक नीति की कार्यविधियों को एक विशेष आधार प्रदान करते हैं। सामाजिक नीति के मुख्य अभिगमों की चर्चा निम्नवत् हैः-

1. नवाधिकार अभिगम
2. सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम
3. आमूल परिवर्तनकारी अभिगम
4. नारीवाद अभिगम
5. अप्रजाति अभिगम

1.7.1 नवाधिकार अभिगम (New Right Approach)

सामाजिक नीति का यह अभिगम बाजार अथवा आर्थिक उदारवाद, एक नव संरक्षणवादी अथवा असामूहिक अभिगम की ओर संदर्भित करता है। यह शब्द अमेरिका में सन्1970 के दशक में सामने आया। नवाधिकार अभिगम इसमें विश्वास करता है कि सरकार व्यक्तियों के जीवन को नियमित करने में आने वाली आवश्यकता को नकार सकती है। नवाधिकार अभिगम व्यक्तिगत आजादी तथा स्वतंत्रता पर अत्यधिक बल देती है। नवाधिकार नीति निर्माता इसमें विश्वास करते हैं कि सरकार उन सामाजिक समस्याओं पर हस्तक्षेप करती है जो बदतर समस्याएं होती है। जिसे सामान्यतः बाजार

प्राथमिकता प्रदान करता है। नवाधिकार विचारक और नीति निर्माताओं का ध्यान अधिकतर एक ओर वे व्यक्तिगत जो कल्याणकारी सेवाओं तथा सहायता की योग्यता रखते है और दूसरी ओर ऐसे लोगों को जानने का प्रयास किया जाता है जिन लोगों ने सरकार द्वारा कल्याण और सहायता न प्राप्त की हो के मध्य वितरण होता है।

यथा यदि कोई निर्धन है तो उसमें उसका कोई दोष नहीं है कि वह कल्याणकारी सेवाओं और सहायता को न प्राप्त करे जबकि कोई व्यक्ति इसलिए निर्धन हैं क्योंकि वे जानबूझकर नौकरी से वंचित है अथवा ऐसे लोग जो जानबूझकर धन अथवा योग्यता को आलस्य के कारण अयोग्य बना रहे हो। नवाधिकार अभिगम व्यक्तियों के उत्तरदायित्व और चयन पर अत्यधिक बल देता है तथा समाज कल्याण सेवाओं को प्रदान करने वाले तथा प्राप्त करने वालों पर प्रेरणादायक प्रभाव पड़ता है। नवाधिकार विचारधारा को मानने वाले विचारक राज्य द्वारा प्रयोजित सेवाओं और कल्याण व्यवस्थाओं के विचारों का विरोध करते हैं तथा इस बात का तर्क प्रस्तुत करते हैं कि वर्तमान में जब लोक व्यवस्था को कम किया जाना अधिकार अभिगम को स्वीकार किया गया जिसमें नीतियों को इस प्रकार से विकसित किया जाता है कि वे प्रोत्साहित होकर निजी सेवा प्रदान करने वालों अथवा स्वैच्छिक पोषित दातव्य सेवाओं को उपयोग करने वालों से खरीद सके।

1.7.2 सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम (Social Democratic Approach)

सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम सामाजिक उदारवाद और सामूहिक अभिगम की अवधारणा पर आधारित है। सामाजिक नीति का यह अभिगम राज्य द्वारा प्रदान की जाने वाली वृहत् स्तर की सामाजिक कल्याणकारी सेवाओं के परिणाम पर निर्भर करती है और उन लोगों के जीवन का नियमन करती है जिन्होंने नवाधिकार विचारकों को अस्वीकार किया है। सामाजिक नीति निर्माता समाज का प्रबन्धन करने महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम से प्रेरित होते है और यह विश्वास करते हैं कि राज्य नागरिकों की निर्धनता से रक्षा करेगा और विकास के अवसर देगा तथा समाज में व्याप्त सामाजिक और आर्थिक असमानता को कम करेगा।

सामाजिक प्रजातांत्रिक नीतियों का मुख्य उद्देश्य सिद्धान्तों तथा निर्देशों में समानता लाना है। नवाधिकार विचारकों का मानना है कि वित्तीय रूप से सफल व्यक्ति अपने लिए सम्पन्नता का चयन स्वतंत्र होकर कर सकते हैं। जबकि सामाजिक प्रजातांत्रिक विचारकों का मानना है कि आवश्यकताग्रस्त व्यक्ति को सहायता प्रदान करना राज्य का कर्तव्य है। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक प्रजातांत्रिक नीति निर्माता यह वकालत करते हैं कि अत्यधिक आय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों पर अत्यधिक कर लगाया जाना चाहिए और इसके एकत्रित कोश का उपयोग समाज कल्याण सेवाओं के लिए किया जाना चाहिए।

1.7.3 आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम (Radical Socialist Approach)

आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम मार्क्सवाद, नवमार्क्सवाद अथवा संघर्ष अभिगम पर आधारित है जिसमें आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी दृष्टिकोण को मानने वाले पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विरोध करते है और यह आरोप लगाते है कि कुछ धनी लोगों के द्वारा प्राप्त लाभों से ही असमानता व सामाजिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

नार्मन जिन्सबर्ग (1998) ने स्पष्ट किया है कि जो सामाजिक नीति की सामाजिक विचारधारा को स्वीकार करते हैं वे पूंजीवाद से सम्बन्धित दो मान्यताओं को निर्मित करते हैं। प्रथम यह कि पूंजीवादी समाजों से सभी लोगों की समाज कल्याण आवश्यकताएं पूरी नहीं हो सकती हैं क्योंकि यह माना जाता है कि पूंजीवादी आधार प्रतियोगात्मक व्यक्तिवाद पर होता है। दूसरा यह कि पूंजीवाद में असमानता तथा विभाजिता का तत्व होता है जो कि सैद्धान्तिक रूप से अस्वीकार करता है। सामाजिक अभिगम सामूहिकता के सिद्धान्त को स्वीकार करता है। समाजवादी सामाजिक व्यवहारों का भी अध्ययन करते हैं। इसका प्रभाव यह होता है कि समाजवादी योजनाओं के द्वारा एक ऐसा वातावरण तैयार होता है जिससे कि लोग अपने को विकसित कर सकते हैं। आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम का लक्ष्य पूंजीवाद का हस्तांतरण करना है जिससे राज्य द्वारा वृहत् स्तर पर पूंजीवाद व्यवस्था में हस्तक्षेप किया जाता है। इसके अन्तर्गत नये अधिक रूप से सामूहिक सहायता युक्त, और समतावादी समाज की स्थापना की जाती है। सामाजिक नीति का एक मुख्य लक्ष्य समाज में सम्पन्नता और संसाधनों का पुनर्वितरण करना जिससे कि समानता और कल्याण के उपाय सार्वभौमिक हो सके।

1.7.4 नारीवाद अभिगम (Feminist Approach)

सामाजिक नीति का विश्लेषण करने के लिए सापेक्ष रूप से नारीवाद को नये अभिगम के रूप में प्रस्तुत किया गया है। लेविस (1998) का कहना है कि सामाजिक नीति के एक अभिगम के रूप में पहचान को स्थापित करना अथवा सोचना गलत है। महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न मार्गों के आधार पर चुनौतीपूर्ण मान्यताओं तथा सामाजिक नीति के अभ्यासों के द्वारा कल्याणकारी महिलाओं के परिप्रेक्ष्य से सम्बन्धित सामाजिक मुद्दों की विशेषताओं को स्पष्ट करता है। लेविस (1998) ने स्पष्ट किया है कि सामाजिक नीतियों में नारीवादी विश्लेषण का आरम्भ 1970 के दशक में हुआ। नारीवादी विचारधारा के लोगों का मानना है कि कल्याणकारी राज्य अपने उत्तरदायित्व में असफल रहा है और पारम्परिक समाज विशेषकर पुरुष मानसिकता के द्वारा किए जाने वाले प्रयास सफल नहीं हो सके हैं। नारीवादी विचारकों के विश्लेषण के आधार पर पुरुष मान्यताओं ने हमेशा प्रश्नचिन्ह लगाया है और जिसे पितृसत्तात्मक में लागू किया गया है। नारीवादी विश्लेशक सामाजिक नीति के महिला केन्द्रित अभिगम का पक्ष लेते हैं। सामाजिक नीति में जिसका उद्देश्य महिला असमानता को दूर करना और महिलाओं से सम्बन्धित विशिष्ट उद्देश्यों के आधार उनकी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना है।

12.7.5 अ-प्रजाति अभिगम (Anti- Racist Approach)

अप्रजाति सामाजिक नीति का केन्द्रीय लक्ष्य है। यह अभिगम इस बात पर बल देता है कि प्रभावी सामाजिक नीति उपायों के उपयोग से सकारात्मक मार्गों से व्यक्तिगत संगठनात्मक और सामाजिक प्रजाति के आधार को अवक्रमित करती है।

अप्रजाति सामाजिक नीति विशेषकर काले लोगों तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों की स्थितियों पर केन्द्रित होती है। अप्रजाति सामाजिक नीति के द्वारा लोग चाहते है कि सरकार इस तथ्य को स्वीकार करे कि प्रजाति एक मुख्य सामाजिक समस्या हैं।

सामाजिक नीति के अप्रजाति अभिगम को जब पूर्व में तथा वर्तमान में सामाजिक नीति उपायों के साथ लागू किया जाता है और कल्याणकारी व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप से देखा जाता है तो प्रजाति की समस्या का समाधान करने के लिए कल्याणकारी उपायों तथा विचारों को इसमें शामिल किया जाता है। अप्रजाति एक अभिगम के रूप में असमानता को पूरा करने का प्रयास करता है। यह इस अवधारणा पर आधारित है कि प्रजाति संस्थागत है और प्रत्येक लोगों के जीवन से सम्बन्धित है। यह अभिगम इस बात पर बल देता है कि प्रजाति की चुनौती को सामाजिक नीतियों द्वारा दूर करने और परिवर्तन के मार्गो को तैयार करना जिससे कि उपायों के द्वारा समाज में तालमेल स्थापित किया जा सके।

टालट तथा मिदग्ले (2004) ने सामाजिक नीति के विभिन्न अभिगमों की चर्चा की है जो निम्नवत् है:-

- जनाधिकार अभिगम
- उद्यम अभिगम
- सांख्यविद् अभिगम
- सम्पूर्ण अभिगम

1.8 सामाजिक नीति के प्रारूप (Models of Social Policy)

सामाजिक नीति के प्रारूप सभी सामाजिक नीतियों पर आधारित है। सामाजिक नीति प्रारूप अधिकारिक रूप से पहचान तथा प्रक्रियाओं और इनके मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों को व्यक्त करता है। साधारण रूप में सामाजिक नीति को सामाजिक क्षेत्रों से सम्बन्धित नीतियों के रूप में जाना जा सकता है और प्रारूप को सामाजिक नीति के रूप में समानता, वितरण, सामाजिक न्याय तथा सामाजिक और जीवन निर्वाह सुरक्षा को मूर्त रूप प्रदान करने से है।

रिचर्ड टिटमस ने सामाजिक नीति के तीन प्रारूपों का उल्लेख किया है जो कि निम्नवत् है:-

1.8.1 आवासीय कल्याण प्रारूप (Residential Welfare Model)

आवासीय कल्याण प्रारूप में कल्याण की आवासीय अवधारणा से तात्पर्य राज्य सहायता के आंशिक रूप से न्यूनतम आवश्यकता के लिए तथ्यों तथा सभी प्रकार की सहायता के अवसर समाप्त होने के पश्चात उपलब्ध होती है। आवश्यकता के कारण ही वास्तव में एक व्यक्ति को परिभाषित करना कि वह आवश्यकताग्रस्त है। समाज कल्याण संस्थानों की विचार धारा ने ही परिवार तथा निजी बाजार की सहायता करने के लिए आवासीय कल्याण प्रारूप की रूपरेखा तैयार की थी। अपना कल्याण करने में व्यक्ति को बहुत महत्वपूर्ण इकाई और उपकरण माना जाता है। इस प्रारूप में यह माना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति के पास पर्याप्त अवसर उपलब्ध है और इन अवसरों को प्राप्त करने में वह अपने सामर्थ्य का प्रयोग करता है। यदि अवसरों को प्राप्त करने में किसी प्रकार की विफलता होती है तो वह व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी होता है तथा समाज की आर्थिक एवं सामाजिक प्रक्रियाओं का मूल्यांकन संस्थाओं अथवा अवसर संरचनात्मक के साथ नहीं होता है। वास्तव में क्या आवश्यक है, इस प्रारूप के अनुसार यह एक आंशिक सहायता होती है जो कि तनाव से ग्रसित व्यक्ति को दी जाती

है जिससे कि वह योग्य हो सके तथा उपलब्ध अवसरों का उपयोग कर सके और आत्मनिर्भर बन सके।

1.8.2 उपलब्धि निष्पादन प्रारूप (Achievement Performance Model)

उपलब्धि निष्पादन प्रारूप इस मान्यता को स्वीकार करता है कि सामाजिक आवश्यकताओं की प्राप्ति मेरिट अर्थात् गुणों के आधार पर अर्जित स्थिति कार्य निष्पादन तथा उत्पादकता के आधार पर होनी चाहिए। इसके साथ ही समुदाय के पास वृहत् स्तर पर वित्तीय तथा तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता होनी चाहिए जिससे कि सामाजिक एवं कल्याणकारी सेवाओं को प्रोत्साहित और विकसित करने के उत्तरदायित्व को निभाया जा सके। जबकि बाजार में उपलब्ध किसी भी प्रकार की सेवाओं का भुगतान लाभ प्राप्तिकर्ता द्वारा किया जाना चाहिए। इस प्रकार इन सेवाओं की प्राप्ति व्यक्ति की भुगतान क्षमता पर निर्भर करती है। साथ ही इन सेवाओं से सम्बन्धित संसाधनों का उपयोग वह किसी भी समय पर कर सकता है। बहुत सी ऐसी व्यवस्थाएं है जिसके द्वारा भुगतान करने की योग्यता क्षमता में वृद्धि हो सकती है। इस संदर्भ में टिटमस का कहना है कि वित्तीय एवं व्यावसायिक कल्याण योजनाएं उन लोगो के लिए उपलब्ध है| स्थानीय कार्य संरचना में स्थित है और अन्य संसाधनों पर अपना अधिपत्य रखते हैं। आवासीय किराये के लिए आर्थिक सहायता, स्वास्थ्य के लिए निशुल्क अथवा आंशिक योगदान का प्रावधान, अवकाश, कार्यालय मनोरंजन लेखा इत्यादि प्रकार की सेवाएं उपलब्ध रहती है। वित्तीय कल्याणकारी योजना में करों में छूट, आवासीय ऋण, व्यवसायिक व्यय, जीवन बीमा प्रीमियम अलग से आयकरों में छूट इत्यादि को शामिल किया जा सकता है। लोगों में संसाधनों का उपभोग करने व वितरण की इन सेवाओं का प्रभाव असमानता की खाई को बनाये रखना और निर्मित करने से होता है।

1.8.3 संस्थागत पुनर्वितरण प्रारूप(Institutional Redistributive Model)

संस्थागत पुनर्वितरण प्रारूप सामाजिक न्याय की अवधारणा के सिद्धान्त पर आधारित है तथा लोगों को इस बात का अधिकार प्रदान करता है कि उनको सामाजिक और कल्याकारी सेवाएं प्राप्त हो सके चाहे उनकी भुगतान करने की क्षमता है या नहीं। इस प्रकार इस प्रारूप का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसके अन्तर्गत सार्वभौमिक रूप से लोगों को सेवाएं प्रदान की जाती है। बजाय आय, शिक्षा और जाति की स्थिति के आधार पर। नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सेवाएं मुख्य रूप से राज्य का एक आवश्यक कार्य है। संस्था द्वारा पुनर्वितरण प्रारूप में, सेवाएं चयन के आधार पर प्रदान की जाती है,विशेषकर ऐसे समूह जोकि विशेष देखभाल चाहते हो। इस प्रकार ये सेवाएं बिना किसी सामाजिक अथवा आर्थिक मापदण्ड की योग्यता के आधार पर प्रदान की जाती है। ये सेवायें समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के लिए अन्तर्गत भी उपलब्ध होती है। जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था में संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

- कल्याण की संस्थागत अवधारणा को समाज के कार्यक्रमों के रूप में देखा जा सकता है जो सामाजिक व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करती है। इस प्रारूप में आवश्यकता को आवश्यक तथ्यों पर स्थापित किया जाता है बिना आवश्यकता के कारणों को ध्यान में रखते हुए।

- इस प्रकार सामाजिक नीति के लक्ष्यों को सार्वभौमिक बिना मानवीय सीमाओं अथवा मानव द्वारा निर्मित नियमों, कानूनों और प्रजाति के प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। इसमें सामाजिक वृद्धि के अवसर सबको प्राप्त होते हैं यह प्रारूप मुख्य रूप से सिद्धान्तों तथा सामाजिक न्याय की अवधारणा पर आधारित है जो कि यह मानकर चलता है कि एक अकेला व्यक्ति नहीं है बल्कि वह समूह और संगठन का सदस्य है।

1.9 सामाजिक नीति के सिद्धान्त (Theories of Social Policy)

सन् 1969 में डा. श्रीमती इंगा थार्सन ने अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण परिषद के समक्ष अपने विचार व्यक्त करते हुए सामाजिक नीति के 5 प्रमुख सिद्धान्तों का निरूपण किया हैः-

1. एकीकृत सामाजिक नीति का उद्देश्य आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करना होना चाहिए।
2. आर्थिक वृद्धि के लिए सामाजिक कारकों, सामाजिक स्थितियों तथा आवश्यकताओं का क्रमबद्ध एवं विस्तृत विश्लेषण प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए।
3. ऐसे अवांछनीय सामाजिक कारकों जो सामाजिक आर्थिक विकास, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण उत्पन्न होते हैं, के आधार पर सामाजिक नीति के लक्ष्यों का निर्धारण किया जाना चाहिए।
4. सामाजिक नीति के उद्देश्यों को इनकी उपयुक्तता, वास्तविक स्थिति, समानता, स्थानीय परिस्थितियों एवं अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों के आधार पर निश्चित किया जाना चाहिए।
5. सामाजिक नीति का यह कार्य होना चाहिए कि वह सामाजिक संरचनाओं, संस्थाओं, समितियों,सम्प्रेरकों तथा मनोवृत्तियों में पायी जाने वाली कमियों का विकास के लिए निवारण एवं निराकरण करें।

उपरोक्त के अतिरिक्त सामाजिक नीति के अन्य सिद्धान्त निम्नवत् हैः-

1. एकात्मकता का सिद्धान्त,
2. अधिकार का सिद्धान्त,
3. न्याय का सिद्धान्त,
4. स्वतंत्रता का सिद्धान्त,
5. प्रजातंत्र का सिद्धान्त एवं
6. राज्य का सिद्धान्त

1.10 सामाजिक नीति के निर्धारक एवं स्रोत(Determinants and Sources of Social Policy)

सामाजिक नीति राजनैतिज्ञों के धार्मिक विचारों और धर्म द्वारा प्रभावित हो सकती है। सामाजिक नीति में व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाले प्रयासों तथा निजी उद्यमों के पक्ष में राजनैतिक संकुचित सोच वाले लोग अधिकतर पारम्परिक अभिगम का पक्ष लेते हैं। जबकि दूसरी राजनैतिक उदारवादी समान अधिकार का आश्वसान तथा राज्य नियमन के पक्ष में अपने सोच को रखते है। सामाजिक नीति के निर्धारक तत्व निम्नवत् हैः--

1. आर्थिक कारक
2. राजनैतिक एवं संस्कृतिक कारक
3. परिवार
4. उत्सव
5. परम्परा एवं परिवर्तन
6. अन्तर्राष्ट्रीय अनुदान
7. अहंभाव
8. लालफीताशाही
9. कठोर एवं व्यवस्थित अनुशासन तथा नियंत्रण
10. वेतन एवं पेंशन अधिकार
11. अवैयक्तिक सम्बन्ध
12. अधिकारिक रिकार्ड
13. विशेषज्ञता

सामाजिक नीति के स्रोत (Sources of Social policy)

सामाजिक नीति एक अध्ययन की प्रक्रिया के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, देखभाल, आवास, आय इत्यादि के अनुभव से लोग अपने जीवन में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में लाभ का आंकलन करते है। सामाजिक नीति, मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने, बनाए रखने व परिवर्तन लाने की दिशा-निर्देश की ओर इंगित करता है। मानव कल्याण से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने के लिए सामाजिक नीति को निम्नवत् स्रोतो का सहारा लेना पड़ता हैः-

- संविधान,
- विधान,
- प्रशासन एवं
- राष्ट्रीय योजनाएं

1.11 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में सामाजिक नीति एक अध्ययन की प्रक्रिया के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, देखभाल, आवास, आय इत्यादि के अनुभव से लोग अपने जीवन में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में लाभ का आंकलन करते है। सामाजिक नीति, मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने, बनाए रखने व परिवर्तन लाने की दिशा-निर्देश की ओर इंगित करती है।

1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

1 सामाजिक नीति से आप क्या समझते हैं?

2 सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालिए।

3 सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपायों का वर्णन कीजिए।

4 सामाजिक नीति की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

5 सामाजिक नीति के अभिगमों से आप क्या समझते हैं?

6 सामाजिक नीति के प्रारूपों के महत्व पर प्रकाश डालिए।

7 सामाजिक नीति के सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

8 सामाजिक नीति के निर्धारकों पर प्रकाश डालिए।

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

- Martin, R.k, Social Policy, Random House, New York, 1970.
- Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol Ii Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
- Singh, S., Mishra, P.k, D.k, and Singh, A.k, N.k, Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
- Bhartiya, A.k,K .k. Introduction to Social Policy, NRBC, Lucknow, 2009.
- Alock, P.k, Social Policy in Bretain, Mcmillan, New York, 2003.
- Adams, R.k, Social Policy for Social Work, Palgrave, New York.
- äake, R.k, F.k, The Principles of Social Policy, Palgrave, New York
- साइमन, एच.ए. (1946), द प्रोवर्ब ऑफ एडमिनिस्ट्रेसन, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेसन रिव्यू: विन्टर।

- ड्रकर, पी.एफ (1975), मैनेजमेन्ट: टास्क, रिसपान्सबिलिटिज, प्रैक्टिस, बाम्बेः एलाइड पब्लिर्स।
- टेलर, एफ.डब्ल्यू, (1911) द प्रिसिंपल ऑफ साइंसटिफिक मैनेजमेन्ट, न्यू यार्क: हार्पर ब्रदर्स।
- योडर, डी. (1959) पर्सनेल प्रिंसिपलस् एण्ड पालिसिस, एन्गलीवुड क्लिफस् एन.जे.: प्रेन्टिस हॉल।
- ब्रीच, इ.एफ.एल. (1967), मैनेजमेन्ट - इटस् नेचर एण्ड सिग्निफिकेन्स, लन्दन: पिटमैन पेपरबैक्स।
- अवस्थी, अमरेश्वर एवं श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनरायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
- सिंह, निर्मल, प्रिन्सिपल ऑफ मैनेजमेन्ट, दीप एण्ड दीप पबिल्केशन, नई दिल्ली।
- शर्मा एम. एल., केजरीवाल, बी. के. एवं अग्रवाल, अनुपम, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004.
- अग्निहोत्री इन्द्रा एवं अवस्थी, अरविन्द, आर्थिक सिद्धान्त, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 1999।

इकाई - 2

सामाजिक, आर्थिक एवं समाज कल्याण नीतिः विभिन्नताएँ एवं समानताएँ

इकाई रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 सामाजिक नीति

2.3 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति

  2.3.1 आर्थिक नीति के उद्देश्य

  2.3.2 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति में समानताएं तथा विभिन्नताएं

2.4 सामाजिक नीति तथा समाज कल्याण नीति

  2.4.1 समाज कल्याण नीति निर्धारण के सिद्वान्त

2.5 भारत में सामाजिक कल्याण नीति क्षेत्र, समस्याएँ

  2.5.1 भारत में समाज कल्याण नीति के क्रियान्वयन में समस्याएं

  2.5.2 प्रभावपूर्ण समाज कल्याण नीति के सुझाव

2.6 सांराश

2.7 शब्दावली

2.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पष्चात् आप-

- सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति को जान पाऐगें
- आर्थिक नीति के महत्त्व, उद्देश्य को जान पाऐगे
- आर्थिक नीति, सामाजिक नीति तथा सामाजिक कल्याण नीति में सम्बन्ध को समझ पाएगें

2.1 प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास के लिये ना सिर्फ आर्थिक पहलु पर ध्यान देना होता है बल्कि सामाजिक विकास तथा समाज कल्याण के समस्त पहलुओं पर भी ध्यान देना आवश्यक होता है। कोई भी देश सिर्फ आर्थिक दृष्टि से मजबूत होने पर पूर्णतया विकसित नहीं कहा जा सकता है। यह जरूरी होता है कि देश के आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक नीतियाँ तथा समाज कल्याण नीतियाँ भी प्राथमिकता से तय की जाएं। जहाँ आर्थिक नीतियाँ देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करती हैं, वहीं सामाजिक तथा समाज कल्याण नीतियाँ समाज विकास को बढ़ावा देती हैं।

2.2 सामाजिक नीति

सामाजिक नीति किसी भी राष्ट्र में व्यक्ति, समूह तथा समुदाय में सामाजिक अक्षमताओं, असमायोजन तथा असमानताओं को दूर करने का प्रयास करती है। समाज के प्रत्येक वर्ग को आगे बढ़ने के समान अवसर प्रदान करने में सामाजिक नीतियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सामाजिक नीति सामाजिक संरचना में निहित मुल्यों, विश्वासों तथा मनोवृत्तियों से सम्बन्धित रहती हैं। यह नीतियाँ सामाजिक संरचना में परिवर्तन व सुधार पर बल देती है। यहसंसाधनों के समान वितरण तथा पुनर्वितरण पर विश्वास करती है। जिससे कि विकास की धारा में कमजोर, निर्बल, पिछड़े वर्ग भी आगे बढ़ पाएँ। सामाजिक नीति के क्षेत्र में शिक्षा , स्वास्थ्य, शोषण , स्वच्छता, मनोरंजन, निशक्तजन, पिछड़े वर्ग, सामाजिक सुरक्षा, श्रमिक कल्याण, महिला एवं बाल विकास आदि आते है। सामाजिक नीति का मुख्य उद्देश्य लोगों के जीवन स्तर में वृद्धि करते हुए राष्ट्र का सर्वांगीण विकास करना होता है। सामाजिक नीतियाँ समाज में एक ऐसी व्यवस्था निर्माण का प्रयास करती है जिसमें व्यक्ति का व्यक्ति से, व्यक्ति का समूह से तथा समुदाय से जो सम्बन्ध है वह समान स्तर पर हो। किसी भी तरह की विसंगतियाँ नहीं हो कर सामाजिक समरूपता को बढ़ावा दे। श्रमिकों, निषक्तजनो, निराश्रितों, कमजोर व पिछड़े वर्गो को आगे बढ़ने के समान अवसर प्रदान करने की व्यवस्था सामाजिक नीति के द्वारा ही संभव है।

2.3 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति

उद्विकास की औद्योगिक स्थिति में नियोजित रूप से विकास किये जाने के प्रयासों के परिणामस्वरूप विविध सामाजिक समस्याओं को उनकी आर्थिक पृष्ठभूमि में देखा जाने लगा है। उदाहरण के लिये यदि अनुसूचित जातियों को समान अवसर न मिलने की बात उठती थी अथवा अनुसुचित जनजातियों की जनसंख्या के अन्य श्रेणीयों से पृथकता का प्रश्न उठता था तो इसके कारण आर्थिक नीति में सन्निहित कमियों में ही खोजे जाते थे। इसी प्रकर विभिन्न सामाजिक समस्याओं चाहे वे नयी हो अथवा पुरानी के कारण आर्थिक नीति में ही खोजे जाते थे। किन्तु वस्तु-स्थिति यह है कि आर्थिक विकास को तब तक प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता, जब तक कि इसके अपेक्षित मानवीय संसाधन न हों, सामाजिक संरचना इसके अनुकूल न हो, तथा समाज के विभिन्न वर्गो का सहयोग न प्राप्त हो और धीरे-धीरे इस बात को व्यापक रूप से स्वीकार किया जाने लगा कि वास्तविकता में सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं में पृथक न किये जाने योग्य अन्योन्याश्रितता पायी जाती है इसलिए समीचीन यह होगा कि जिस प्रकार सामाजिक समस्याओं के लिए आर्थिक कारकों को उत्तरदायी माना जा रहा

है, उसी प्रकार आर्थिक समस्याओं के लिए सामाजिक कारकों को उत्तरदायी माना जाए। इसका परिणाम यह हुआ कि इस बात को भी सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई कि आर्थिक नीति के मूल में सामाजिक विकास सम्बन्धी तत्त्वों तथा सामाजिक नीति की तह में आर्थिक विकास के तत्त्वों के महत्त्व को देखा जाने लगा तथा दोनों के बीच उचित संतुलन स्थापित करने की चेष्टा की जाने लगी। तारलोक सिंह का यह कथन सत्य है: “इस प्रकार सामाजिक नीति के मूल में आर्थिक विकास के सामाजिक पहलूओं को तथा सामाजिक तथ्यों एवं नीतियों के आर्थिक आशयों को एक साथ समझने तथा इनके बीच उचित संतुलन प्राप्त करने की आवश्यकता पायी जाती है।” उपलब्ध संसाधनों के उपयोग के साथ लोगो के आर्थिक विकास में वृद्धि के उद्देश्य के लिए आर्थिक नीति की कल्पना की जाती है।

2.3.1 आर्थिक नीति: उद्देश्य

(1) आजीविका के साधनों में वृद्धि करना

आर्थिक एवं तकनीकी विकास के परिणाम स्वरूप बेरोजगारी बढ़ती है। इसलिए आर्थिक नीति को इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिए ताकि रोजगार के अधिक अवसर प्राप्त हो सकें।

(2) आय तथा धन का साम्यपूर्ण वितरण

सार्वजनिक क्षेत्र के अनेक अर्थो में निजी क्षेत्र पर आश्रित होने के कारण आर्थिक संसाधन कुछ व्यक्तियों के पास संकेन्द्रित हो जाते हैं जिसके कारण निर्धन और अधिक निर्धन होता जा रहा है तथा धनी और अधिक धनी, ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि राज्य कुछ ऐसे कदम उठाये ताकि आर्थिक असमानताऐं कम से कम हो सके और धन तथा आय का साम्यपूर्ण वितरण संभव हो सके। समाज सेवाओं का विकास तथा इनके क्षेत्र का प्रसार इसलिये किया जाता है ताकि ये असमानतायें दूर हो सकें।

(3) गरीबी उन्मुलन

मिश्रित अर्थव्यवस्था मे बढ़ती इुई अर्थिक असमानतायें निर्धनों को और अधिक निर्धन बनाती है और उन्हें ऐसी स्थिति में संतोष करने के लिए बाध्य करती हैं। निर्धनता को तब तक दूर नहीं किया जा सकता जब तक इस बात को ध्यान में रखकर आर्थिक नीति का निर्धारण नही किया जाये। गरीबी उन्मुलन किसी भी आर्थिक नीति का केन्द्र बिन्दु होमा चाहिए।

(4) संसाधनों का समुचित प्रयोग

विकासशील देशों में संसाधनों - भौतिक तथा मानवीय दोनो के सीमित होने के कारण आर्थिक उन्नति के लिए यह बाधक होता है कि जो भी संसाधन उपलब्ध हैं उनका अधिक से अधिक सदुपयोग किया जाये और किसी भी स्थिति में संसाधनों का दुरूपयोग न होने दिया जाये ।

(5) संतुलित क्षेत्रिय विकास

किसी भी देश के विभिन्न क्षेत्र आवश्यकताओं तथा संसाधनों दोनों ही दृष्टियों से भिन्न होते हैं। कुछ विकास सम्बन्धि प्रयासों की अपेक्षा अधिक रखते हैं और कुछ कम। इसलिए यह आवश्यक होता है कि उन क्षेत्रों के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाए जो साक्षेपतया पिछड़े हुए है।

(6) विकास की तीव्र गति

कुछ परिस्थितियों में सम्पूर्ण देश में तथा कुछ विशिष्ट प्रकार के क्षेत्रों के अन्तर्गत विकास के तीव्र गति से चलाये जाने की आवश्यकता होती है। यह तभी संभव है जबकि आर्थिक नीति में इस आशय के विशिष्ट प्रावधान किये जायें।

(7) आर्थिक स्थिरता बनाये रखना

अनेक ऐसे आतंरिक एवं बाह्य कारक तथा शक्तियाँ पायी जाती है जो अर्थव्यवस्था में अस्थिरता उत्पन्न करती है। उदाहरण के लिए कुछ विदेशी शक्तियों की द्वेशपूर्ण तथा निहीत स्वार्थ वाली प्रवृति अनेक प्रकार के आकस्मिक संकट पैदा करती हैं। इसलिये देश में आर्थिक अस्थिरता का अनुरक्षण आर्थिक नीति का एक स्पष्ट उद्धेश्य होना चाहिए।

2.3.2 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति में समानताएं एवं विभिन्नताएं

सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति में निम्न समानताएं है।

(1) सामाजिक व आर्थिक नीति का समान लक्ष्य है लोगों के जीवन स्तर को उन्नत बनाना व देश का सर्वांगीण विकास करना।

(2) दोनों नीतियों का सम्बन्ध व्यक्ति, समूह, समुदाय तथा सम्पूर्ण समाज से है। लोगों के रहने तथा उनके जीवन में रचनात्मक परिवर्तन लाना है।

(3) दोनों नीतियों की समान विषय वस्तु है कि लोगों के जीवन के मानक में समान रूप से वृद्धि करना।

(4) दोनों के विकास, क्रियान्वयन तथा परिवर्तन की प्रक्रिया में समानता है।

(5) दोनो ही समाज में स्थायित्व लाने से सम्बन्धित है।

(6) कल्याणकारी राज्य में दोनों ही जनता की सहायता से सम्बन्धित है।

(7) दोनो की सफलता जन सहभागीता पर आधारित है।

सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति में असमानताएं

	सामाजिक नीति	**आर्थिक नीति**
1.	यह मुल्यों, विश्वासों तथा मनोवृतियों जैसे सामाजिक विषय से सम्बन्धित है।	1. यह पूर्ण रूप से आर्थिक क्रिया तथा आर्थिक गतिविधि पर आधारित है।

2.	यह सामाजिक परिवर्तन एवं समाज सुधार पर बल देती है।	2. यह विशेषतह सकल राष्ट्रीय उत्पाद व प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि पर बल देती है।
3.	इसका क्षेत्र विस्तृत (शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि) है।	3. इसका क्षेत्र सीमित (उत्पादन आदि) है।
4.	प्राथमिकता सामाजिक विकास को	4. प्राथमिकता आर्थिक विकास को

2.4. सामाजिक नीति तथा समाज कल्याण नीति

समाज कल्याण नीति प्रारम्भ से ही भ्रमित करने वाली रही है। कभी इसे जननीति कहा गया है तो कभी सामाजिक नीति से इसका अभिप्राय निकाला जाता है। विद्वान टेªकर ने नीति शब्द का प्रयोग क्रिया के व्यक्त मार्ग के रूप में किया है तो फाज में उद्देश्यों , इरादों एवं शर्तों के कथन के रूप में व्यक्त किया है। पान्सियन ने इसे जानबुझ कर की जाने वाली एक अनवरत क्रिया के रूप में किया है| इसका उद्देश्य समाज के दबे हुए, पिछड़े व्यक्तियों, समूहों तथा वर्गों को उपर उठाना है।

1. समाज कल्याण नीति की परिभाषा एवं विशेषताएं

(अ) कुलकर्णी ने समाज-कल्याण नीति के सम्बन्ध में यह विचार व्यक्त किया हैः "समाज-कल्याण नीति की परिभाषा समाज-कल्याण सेवाओं के कार्यान्वयन हेतु अपनायें गये साधनों एवं ढंगो को परिलक्षित करने वाली क्रिया हेतु रणनीति के रूप में की जा सकती है।"

(ब) सुरेन्द्र सिंह के अनुसार समाजकल्याण नीति की परिभाषा एक ऐसी नीति अर्थात क्रिया के व्यक्त मार्ग के रूप में की जा सकती है जो समाज के निर्बल, पिछड़े हुये तथा शोषण का सरलता पूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लोगो के व्यक्तित्व के समुचित विकास हेतु विशेष रूप से आयोजित की जाने वाली समाज कल्याण सेवाओं के प्रावधानों को निर्देशित करता है।"

समाज-कल्याण नीति की निम्नलिखित विशेषताएं बतायी जा सकती है।

1. यह एक व्यक्त किया हुआ क्रिया का मार्ग है।
2. यह मार्ग समाज-कल्याण सेवाओं के आयोजन को निर्देशित करता है।
3. ये समाज-कल्याण सेवायें समाज के निर्बल, पिछड़ें हुये तथा शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लिए आयोजित की जाती है।
4. ये समाज कल्याण सेवायें निरोधात्मक , उपचारात्मक एवं पुनर्वासात्मक हो सकती है।

समाजिक नीति एवं समाज-कल्याण नीति में अन्तर

समाजिक नीति एवं समाज-कल्याण नीति दोनों भिन्न है। सामाजिक नीति से हमारा अभिप्राय क्रिया में व्यक्त किये गये ऐसे मार्ग से हैं जो समाज सेवायें अर्थात उन सेवाओं जो शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, मनोरंजन सम्बन्धी सेवाओं इत्यादि के रूप में समाज के सभी वर्गों के लोगों के समुचित व्यक्तित्व के विकास के लिए आयोजित की जाती है जो कि आयोजन को निर्देशित करता है जबकि समाज-

कल्याण नीति से हमारा अभिप्राय क्रिया के उस व्यक्त मार्ग से है जो समाज कल्याण सेवाओं अर्थात वे सेवाएं जो समाज के निर्बल, पिछड़ेहुए एवं शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लोगों के लिए विशेष रूप से आयोजित की जाती है जो कि आयोजन को निर्देशित करता है।

2.4.1 समाज-कल्याण नीति निर्धारण के प्रमुख सिद्धांत

सुरेन्द्र सिंह के अनुसार समाजकल्याण नीति को निर्धारित करते समय निम्नलिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाना चाहिए:

1. समाज-कल्याण नीति सामाजिक -सांस्कृतिक संरचना तथा विधानों के अनुरूप होनी चाहिये।
2. समाज-कल्याण नीति में कार्यान्वयन से सम्बन्धित कार्यकर्ताओं को नीति-निर्धारण की प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाना चाहिए।
3. समाज-कल्याण नीति के निर्धारण में उन सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञों की सम्मिलित सहभागिता होनी चाहिये जिन क्षेत्रों में इस नीति के अधीन समाज-कल्याण सेवायें आयोजित की जानी है।
4. समाज-कल्याण नीति को समाज के निर्बल, पिछड़े हुये एवं शोषित वर्गों के लोगों की आवश्यकताओं तथा समाज में उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप होना चाहिये।
5. समाज कल्याण नीति का निर्धारण करते समय एक व्यापक कार्यकारी समिति के निर्माण किये जाने की आवश्यकता है। जिसके अन्तर्गत कार्यान्वयन से सम्बन्धित व्यक्ति तथा विशेषज्ञों के अतिरिक्त निर्बल, पिछड़े हुये एवं शोषण का सरलता पूर्वक शिकार बननें वाले वर्गों के प्रतिनिधी भी सम्मिलित हों।

2.5 भारत में समाज कल्याण नीति के क्षेत्र, समस्याएँ व सुझाव

भारत में समाज कल्याण नीति के क्षेत्र निम्नलिखित हैं:

1. शारीरिक विकलांग एवं निशक्तजन के कल्याण सम्बन्धी नीति
2. मानसिक विमंदित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति
3. सामाजिक रूप से दुर्बल व उपेक्षित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति
4. सामाजिक-आर्थिक रूप से बाधित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति
5. शारीरिक एवं आर्थिक रूप से निर्बल व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति
6. महिलाओं एवं श्रमिकों के कल्याण सम्बन्धित नीति
7. विचलित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति

1. शारीरिक विकलांग एवं निशक्तजन के कल्याण सम्बन्धी नीति

शारीरिक रूप से विकलांग एवं निशक्तजन व्यक्तियों के अन्तर्गत नेत्रहीन, मूक एवं बधिरों तथा अस्थि-चिकित्सकीय दृष्टि से बाधित व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है।

नेत्रहीनों के कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिए सर्वप्रथम 1942 में केन्द्र सरकार ने नेत्रहीनता के अध्ययन हेतु एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की। 1951 में केन्द्रीय ब्रेल प्रेस की स्थापना की गई तथा नेत्रहीनों की शिक्षा के लिए एक राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का गठन किया गया। 1953 में एक समायोजन समिति बनायी गई तथा शिक्षा मन्त्रालय के अधीन छात्रवृत्तियों की योजना चलाई गयी। 1954 में केन्द्रीय ब्रेल प्रेस में अपेक्षित उपकरणों को बनाने के लिये कार्यशाला बनाई गई।

1958 में बाधित व्यक्तियों के लिए विशेष सेवायोजना कार्यालय खोलने की योजना बनी तथा केन्द्रीय ब्रेल वितरण पुस्तकालय की स्थापना की गई। 1959 में राष्ट्रीय नेत्रहीनता निवारण समिति की स्थापना की गई। नेत्रहीनों के शिक्षकों की राष्ट्रीय अकादमी की भी स्थापना की गई। तीसरी पंचवर्षीय योजना में नेत्रहीनों के कल्याण हेतु 21.5 लाख रूपये की धनराशि निर्धारित की गई। चौथी पंचवर्षीय योजना में नेत्रहीनों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम को अधिक प्रभावशाली बनाया गया, विशिष्ट सेवायोजना कार्यालयों की स्थापना को प्राथमिकता प्रदान की गई तथा स्वैच्छिक संगठनों को सहायता प्रदान की गई। 1976 में नेत्रहीनों को रोजगार देने वाली और नेत्रहीन कार्यकर्ताओं को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करने की योजना बनायीं गयी। 1977 में नेत्रहीनों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण प्रदान किया गया। पाँचवी पंचवर्षीय योजना में बाधितों के लिये छात्रवृत्तियों का विशेष उल्लेख किया गया। छठी पंचवर्षीय योजना में व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं, बच्चों में अंधेपन को रोकने के लिये विटामिन 'ए' के वितरण तथा दुर्घटनाओं की रोकथाम के लिये सघन शैक्षिक कार्यक्रम को प्राथमिकता प्रदान की गयी। एकीकृत शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा पुनर्वास के अवसर उपलब्ध कराये गये। छात्रवृत्तियों की योजना का विस्तार किया गया। प्रशिक्षु प्रशिक्षण योजना के अधीन सभी प्रकार के असमर्थ व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया। व्यावसायिक पुनर्वास केन्द्र की स्थापना की गयी। सेवायोजना हेतु व्ययवसायिक प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। नेत्रहीनों के राष्ट्रीय संस्थान को और अधिक सुदृढ़ बनाया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना में असमर्थताओं की रोकथाम तथा बाधितों में प्रकार्यात्मक निपुणताओं का विकास करने पर बल दिया गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत टीकाकरण के कार्यक्रम, विटामिन ए, आयोडिन एवं खून की कमी से निपटने के लिए कार्यक्रम, बाधित व्यक्तियों के इलाज की व्यवस्था, बाधितों की शिक्षा से सम्बन्धित एकीकृत शिक्षा कार्यक्रम प्रमुख रूप से चलाये गये।

नौवीं पंचवर्षीय योजना में बाधिताओं से ग्रस्त व्यक्तियों से सम्बन्धित अधिनियम, 1995 के प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन के लिए सम्पूर्ण प्रयास किए गये। बाधित व्यक्तियों के लिए स्थापित राष्ट्रीय संस्थानों को शक्तिमान बनाया गया। बाधित व्यक्तियों के लिए संयंत्र उपलब्ध कराने के विशेष प्रयास किये गये।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम, काली खांसी, खसरा आदि के लिए कार्यक्रम चलाए गये। शारीरिक रूप से बाधित व्यक्तियों (जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं) को सेवायें पहुँचाने की व्यवस्था की गई। विभिन्न सेवा योजनाओं तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम से प्राप्त लाभों में बाधित व्यक्तियों के लिए लाभ सुनिश्चित किया गया।

2 मानसिक रूप से विमन्दित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति

मानसिक रूप से मन्दित बच्चों के लिये विशेष प्रकार के विद्यालय खोले गये हैं तथा इनके उपचार एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी है।

केन्द्र सरकार द्वारा गठित बाधित व्यक्तियों की शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय सलाहकार परिषद बाधित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति का निर्धारण करती है।

3. सामाजिक रूप से उपेक्षित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति

सामाजिक दृष्टि से बाधित व्यक्तियों के अन्तर्गत सामाजिक दृष्टि से आश्रित व्यक्तियों यथा अनाथ, उपेक्षित, विधवा, निःसहाय तथा अनैतिक व्यापार से मुक्त करायी गयी महिलाओं को सम्मिलित किया जाता है। सरकार ने उपेक्षित बच्चों के कल्याण हेतु किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के अधीन बाल कल्याण परिषदों के गठन का प्रावधान किया है। विधवाओं के लिये अनेक राज्य सरकारों ने सहायता की व्यवस्था की है। अनैतिक व्यापार से मुक्त करायी महिलाओं के लिये अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम के अधीन व्यवस्था की गयी है; और उनके पुनर्वास की योजना चलायी गयी है।

4. सामाजिक-आर्थिक रूप से बाधित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति

सामाजिक-आर्थिक दृष्टी से बाधित व्यक्तियों के अन्तर्गत अनुसूचित जातियो, अनुसूचित जनजातियों,निर्दिष्ट जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गो को सम्मिलित किया जाता है।

अनुसूचित जातियों के कल्याण हेतु भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 16(2), 16(4), 17, 23, 29, 46, 330, 333, 335, 340 एवं 341 में विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं। 1946 में जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम 1955 में अस्पृष्यता अपराध अधिनियम तथा 1976 में नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम जो वर्तमान समय में लागू है, पारित किये गये; और इनके कल्याण हेतु नाना प्रकार के कार्यक्रम चलाये गये हैः यथा नि:शुल्क शिक्षा, छात्रवृत्तियाँ, शिक्षा संस्थाओं एवं सेवाओं में आरक्षण, प्रशासकीय सेवाओं से सम्बन्धित प्रतियोगितओं में सम्मिलित होने वाले काम्पोनेन्ट प्लान रोजगार करने वाली विभिन्न योजनाएं इत्यादि।

5. शारीरिक एवं आर्थिक से निर्बल व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धि नीति

शारीरिक एवं आर्थिक दृष्टि से निर्बल व्यक्तियों के अन्तर्गत बच्चों एवं वृद्धों को सम्मिलित किया जाता है। बच्चों के लिये भारतीय संविधान के अन्तर्गत अनुच्छेद 24, 39सी, 39एफ, तथा 45 मे विशेष प्रावधान किये गये है। 22 अगस्त 1974 को राष्ट्रीय बाल नीति प्रस्ताव पारित किया । राष्ट्रीय बाल नीति के अन्तर्गत यह घोषणा की गयी: ‘‘बच्चे सृष्टि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण सम्पति है। उनका पालन शोषण एवं देख-रेख हमारा उत्तरदायित्व है।’’ राष्टीय बाल नीति के निम्नलिखित उद्वेष्य हैः

(1) बच्चों के विकास एवं कल्याण को राष्टीय मान्यता प्रदान करते हुए इसके उतरदायित्व को स्वीकार करना।

(2) बच्चों की समस्याओं के समाधान हेतु बाल विकास एवं कल्याण कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान करना।

(3) बाल विकास एवं कल्याण हेतु जन सहयोग सहभागिता एवं संसाधनों को प्राप्त करना।

(4) निर्बल एवं उपेक्षित बच्चों के कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान करना।

(5) बाल कल्याण के लिये उपलब्ध अवसरों से सभी बच्चों को लाभान्वित कराने के लिये बाल-कल्याण संस्थाओं में समन्वय स्थापित करना।

वृद्धों के कल्याण के लिये कर्मचारियों एवं श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने वाली योजनाओं के अन्तर्गत प्रदत लाभों के अतिरिक्त विभिन्न राज्य एवं संधीय क्षेत्रों की सरकार द्वारा वृद्वावस्था पेंशन योजनायें चलायी गयी है। और सरकार तथा स्वैच्छिक , संस्थाओं द्वारा निराश्रित वृद्वों के लिये गृह स्थापित किये गये हैं।

6. महिलाओं एवं श्रमिकों के कल्याण सम्बन्धी नीति

शोषण का सरलतापूर्वक शिक्षणकार बनने वाले व्यक्तियों के अन्तर्गत महिलाओं, श्रमिकों और युवकों के अनुच्छेद 14, 15, 16, 23, 39 ए, 39 डी, तथा 42 के अन्तर्गत विशिष्ट प्रावधान किये गये है। इसके लिये अतिरिक्त समय-समय पर अनेक विधान बनायें गयें हैं जिनमें महिलाओं एवं लड़कियों में अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956 (जिसे अब परिवर्तित कर अनैतिक व्यापार (निरोधक) अधिनियम 1976 है। महिलाओं के कल्याण हेतु अनेक प्रकार के कार्यक्रम चलायें गये है यथा लड़कियों के लिये माध्यमिक स्तर तक की निःशुल्क शिक्षा, महिलाओं की प्राथमिक शिक्षा हेतु पृथक शिक्षा संस्थाओं की स्थापना, पा्रविधिक शिक्षा एवं सेवायोजन के क्षेत्र में आरक्षण इत्यादि।

श्रमिको के कल्याण हेतु भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23, 39 ई, 42 तथा 43 में विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं। इनके हितों के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु समयसमय पर अनेक विधान बानाये गये है जिनमें कर्मकार क्षतिपुर्ति अधिनियम 1923, ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926, मजदूरी भुगतान अधिनियम 1936, ओद्योगिक बिवाद अधिनियम 1947, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948, बन्दरगाह श्रमिक (सेवायोजन विनियमन) अधिनियम 1948, कारखाना अधिनियम 1948, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, बागान श्रम अधिनियम 1951, खान अधिनियम 1952 कर्मचारी भविष्य निधि एवं विविध प्रावधान अधिनियम 1952 मात्त्व हित लाभ अधिनियम 1961, बोनस भुगतान अधिनियम 1965, गेच्युटी भुगतान अधिनियम 1972, अनुबंधित श्रम (विनियमन एवं उन्मुलन अधिनियम 1976, बंधुआ श्रम व्यवस्था (उन्मुलन) अधिनियम 1976, बाल श्रम (निशेध एवं विनियम) अधिनियम 1986 उल्लेखनीय है। श्रमिको के कल्याण हेतू समय-समय पर दनके कल्याण से विशिष्ट रूप से सम्बन्धित अधिनियम बनाये गये हैं यथा, अभ्रक खान श्रम कल्याण कोश अधिनियम 1946, कोयला खान श्रम कल्याण कोश अधिनियम 1947, चुना-पत्थर तथा डोलोमाईट खान श्रम कल्याण कोश अधिनियम 1972, बीड़ी श्रमिक कल्याण कर अधिनियम 1976, लौह खनिज एवं मैगनीज खनिज खान श्रम कल्याण कर अधिनियम 1976, लौह खनिज एवं मैगनीज खनिज खान श्रम कल्याण कोश अधिनियम 1976 उललेखनीय है। श्रमिको के

कल्याण के लिये कार्य स्थल पर तथा उसके बाहर और उनके परिवार के सदस्यों के कार्यक्रम सरकार, मालिको में, श्रमिक संघो तथा स्वैच्छिक संगठनों द्वारा आयोजित किये जा रहें है।

भारत में युवकों के लिये एक राष्ट्रीय युवा नीति बनाई गई है जिसके निम्नलिखित लक्ष्य हैं

(1) युवाओं में हमारे संविधान में निहित सिद्वान्तों और मुल्यों के लिये जागरूकता और सम्मान पैदा करना, तथा उनमें राष्ट्रीय दकीकरण, अहिंसा, धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के प्रति वचनबद्वता से विधि नियमों के प्रति अधिक निष्टा उत्पन्न करना।

(2) युवाओं में हमारी ऐतिहासीक और सांस्कृतिक धरोहर के प्रति जारूकता पैदा करना और उनमें पर्यावरण और परिस्थितिकी विज्ञान की समृद्धि सहित उनके संरक्षण के लिये वचनबद्वता के साथ स्वाभिमान तथा राष्ट्रीय पहचान की भावना उत्पन्न करना।

(3) युवाओं में अनुशासन, आत्म-सम्मान, नयाय और ईमानदारी, सार्वजनिक हित के लिये चिन्ता, खेल-भावना उत्पन्न करना और अतिरिक्त उनकी विचारधारा और कार्य में वैज्ञानिक प्रवति विकसित करना ताकि वे अन्य बातों के साथ-साथ रूढिवाद, अंधविश्वास तथा उनके सामाजिक कुरितियों जिन्होंने राष्ट्र को घेर रखा हैं, को मिटा सकें।

(4) युवाओं को ऐसी शिक्षा अधिक से अधिक सुलभ कराना जिससे वे अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को विकसित कर सकें, उपर्युक्त व्यवसायिक प्रशिक्षण ले सकें और स्व-रोजगार के अवसरों से लाभान्वित हो सकें।

(5) अन्तराष्ट्रीय मुद्दों के प्रति युवाओं को जागरूक करना तथा उन्हें विश्व शान्ति, सुझबुझ बढ़ाने और अन्तराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में सम्मिलित करना ।

7. विचलित व्यक्तियों के कल्याण सम्बन्धी नीति

विचलित व्यक्तियों के अंतर्गत बाल अपराधियों , सफेदपोष अपराधियों, वेश्याओं, भिखारियों को सम्मिलित किया जाता है। इनके उपचार, पुर्नवास एवं उतर-रक्षा हेतू समय-समय पर विधान बनाये गये है जिनमें अपराधी परिविक्षा अधिनियम1956 (जिसे 1986 में परिवर्तित कर किर न्याय अधिनियम कर दिया गया है।) महिलाओं एवं लड़कियों में अनेतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956 (जिसे 1986 में परिवर्तित कर अनैतिक व्यापार (निरोधक) अधिनियम कर दिया गया है), भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 उल्लेखनीय है। इस श्रेणी में आने वाले व्यक्तियों को सेवायोजन हेतु तैयार कराने के लिये आवश्यक एवं प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। सेवायोजन में लगाने हेतु वितिय सहायता एवं संसाधन प्रदान किये जाते है और समाज में सामंजस्य स्थापित करने हेतु आवश्यक मार्गदर्शन किया जाता है।

2.5.1 समाज-कल्याण नीति के क्रियान्वयन में कठिनाईयाँ

ये कठिनाईयाँ निम्नलिखित है:-

(1) सरकार की वर्तमान प्राथमिकताओं में समाज कल्याण को जो स्थान प्राप्त होना चाहिए, वह उपलब्ध नहीं हैं। स्थिति इतनी गम्भीर है कि न केवल वित्तिय विनियोजन की दृष्टि से समाज कल्याण को निम्न प्राथमिकता प्रदान की गयी है बल्कि समाज कल्याण के प्रभावपूर्ण आयोजन के लिये अपेक्षित उपयुक्त कर्मचारियों के चयन की दिषा में भी सरकार द्वारा उचित प्राथमिकता नहीं प्रदान की गयी है। भारतीय प्रशासकीय सेवा जिसके माध्यम से प्रशासकीय अधिकारियों के पदों पर चयन करने हेतु प्रतियोगितात्मक परीक्षा का आयोजन किया जाता है कि परीक्षा योजना में समाज कार्य को एक विशय तक के रूप में आज भी मान्यता नहीं प्राप्त हो पायी है।

(2) सरकारी तंत्र में समाज-कल्याण नीति निर्धारण के लिए उत्तरदायी जन प्रतिनिधी एवं अधिकारी समाज कल्याण के सफल आयोजन के लिये आवश्यक ज्ञान, मुल्यों और मनोवृत्तियों की कमी से ग्रस्त है जिसके निराकरण के लिये उनके समुचित अभिमुखीकरण की आवश्यकता है।

(3) समाज-कल्याण नीति के निर्धारण हेतु ऐसा संगठन उपलब्ध नहीं है जो समाज-कल्याण के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित विभागों के जन प्रतिनिधियों तथा अधिकारियों एवं अपेक्षित विषेशज्ञ और निर्बल, पिछड़े एवं शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गो के प्रतिनिधियों से युक्त हो।

(4) समाज-कल्याण नीति के निर्धारण एवं कार्यान्वयन के लिये अपेक्षित कुशल एवं प्रशिक्षित तथा समाज-कल्याण अभिमुखीकरण रखने वाले कार्यकर्ताओं की कमी है।

(5) समाज-कल्याण के लिये अपेक्षित वित्तिय संसाधन उपलब्ध नहीं है। सरकार द्वारा समाज-कल्याण हेतु किया गया विनियोजन नितान्त अपर्याप्त है। ऐच्छिक समाज-कल्याण संस्थाओं को केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के माध्यम से प्रदान की जाने वाली वित्तिय धनराशि अपर्याप्त है। सबसे दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि पहले लोकोपकारी व्यक्तियों तथा संगठनों द्वारा समाज-कल्याण के लिये ऐच्छिक रूप से नकद एवं वस्तुओं के रूप में जो सहायता प्रदान की जाती थी, आज वह भी उपलब्ध नहीं है क्योंकि लोगों की मनोवृत्तियों एवं मुल्यों में पर्याप्त परिवर्तन तो हुआ ही है, साथ ही समाज-कल्याण के प्रोत्साहन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने वाले तथाकथित समाज-सेवियों ने भी एकत्रित किये धन के दुरूपयोग से सम्बन्धित ऐसे कुकृत्य किये हैं जो निस्सन्देह शर्मनाक है।

(6) प्रभावपूर्ण समाज-कल्याण नीति के निर्धारण एवं सफल कार्यान्वयन हेतु अपेक्षित अन्तर्सगंठन समन्वय का नितान्त अभाव है। इसका परिणाम यह है कि कुछ भौगोलिक क्षेत्रों समाज कल्याण के कुछ विशेष क्षेत्रों में अनेक प्रकार की संस्थाओं के कार्यरत होने के कारण धन, प्रयासों एवं समय की बर्बादी को उत्पन्न करने वाली सेवाओं की पुनरावृत्ति हो रही है, तथा कुछ उपेक्षित पड़े हुए हैं।

(7) समाज-कल्याण नीति के उचित प्रतिपादन एवं प्रभावपूर्ण हेतु अपेक्षित जनसहभागिता अनुपस्थित है क्योंकि समाज-कल्याण के क्षेत्र में, चाहे वह निजी क्षेत्र हो अथवा सार्वजनिक समाज कल्याण का उत्तरदायित्व ग्रहण करने वाली ऐजेन्सियाँ जन स्वीकृति प्राप्त करने में असमर्थ रही हैं और उन्होंने सच्चाई के साथ जन सहभागिता को प्राप्त करने की दिषा में समुचित प्रयास भी नहीं किये।

2.5.2 समाज कल्याण नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये सुझाव

ये सुझाव निम्नलिखित है:-

(1) विभिन्न समाज-कल्याण सेवाओं की प्राथमिकताओं को इंगित करने वाले एक समाज-कल्याण नीति प्रस्ताव के अविलम्ब अपनाने जाने की आवश्यकता है ताकि समाज-कल्याण संस्थाओं एवं जनता दोनों की अभिरूचियों को प्रभावपूर्ण ढ़ंग से पूरा किया जा सके। इससे समाज-कल्याण कार्यक्रमों के प्रति जनता आकर्षित होगी और इनके कार्यक्रमों के आयोजन में आने वाली कठिनाईयाँ कम होंगी।

(2) समाज-कल्याण नीति को विकसित करने के लिये एक राष्ट्रीय समाज-कल्याण फोरम स्थापित किया जाना चाहिए जिसमें सम्बन्धित मन्त्री, प्रशासकीय अधिकारी, प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ता, राष्ट्रीय स्तर के समाज-कल्याण संगठन, संसद के प्रतिनीधि तथा शिक्षाविद् हों।

(3) समाज-कल्याण सेवाओं के आयोजन का उत्तरदायित्व निजी क्षेत्र पर टालने के बजाय सरकार को प्रमुख दायित्व स्वंय ग्रहण करना चाहिये। तथापि, वित्तिय दृश्टि से सुदृढ़ ऐच्छिक समाज-कल्याण संस्थाओं को सरकार के निर्देशन एवं नियंत्रण में इसके प्रयासों के पूरक के रूप में सीमित भूमिका निभाने देना चहिये।

(4) समाज-कल्याण सेवाओं के प्रावधान का प्रमुख दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा ग्रहण किया जाना चाहिये ओर इसके लिये संविधान की सातवीं अनुसूचि में संशोधन करते हुए समाज-कल्याण विषय को संघीय सूची में डाला जाना चाहिए।

(5) समाज-कल्याण कार्यक्रमों को सघन बनाया जाना चाहिये। छुट-पुट रूप से आयोजित करने के बजाय एक दार्घकालीन योजना बनायी जानी चाहिये।

(6) समाज-कल्याण सेवाओं में प्रशासन का दायित्व नीति निर्धारण के उच्चतम स्तर से लेकर क्षेत्र में कार्यान्वयन तक प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं को दिया जाना चाहिये। समाज कल्याण विभागों एवं निदेशालयों के अध्यक्ष के रूप में प्रशिक्षित व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता नियुक्त किये जाने चाहिये।

(8) वर्तमान समय में विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों द्वारा प्रदान की जाने वाली समाजकल्याण सेवाओं कों समाज कल्याण मंत्रालय में ही रखा जाना चाहिये ताकि समाज-कल्याण सेवाओं को और अधिक कुशल और समन्वित बनाया जा सके।

(9) राज्य एवं समाज-कल्याण संगठनों द्वारा सच्चाई के साथ जन सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

2.6 सारांश

सामाजिक नीति, आर्थिक नीति तथा सामाजिक कल्याण नीति तीन अलग-अलग पर अन्र्तसम्बन्धित अवधारणाएँ है।। इनमें से एक की भी अनुपस्थिति में राष्ट्र का सर्वांगीण विकास असम्भव है। सामाजिक नीति का क्षेत्र गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य, शोषण, स्वच्छता, पर्यायवरण से सम्बन्धित है तो आर्थिक नीति उत्पादन, प्रति व्यक्ति आय, वितरण आदि पर केन्द्रित रहता है। सामाजिक कल्याण नीति शारीरिक विकलांग, मानसिक, विमंदित, सामाजिक रूप से उपेक्षित श्रमिक तथा विचलित वर्गों के उत्थान पर केन्द्रीत रहती है।

2.7 शब्दावली

- **निर्धारण** - निर्माण करना, बनाना
- **निराश्रित** - अनाथ, बेसहारा
- **निशक्तजन** - अपंग (शारीरिक या मानसिक)

2.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 सामाजिक नीति पर निबन्ध लिखिए।

2 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीति में अन्तर करते हुए आर्थिक नीति के उद्देश्यों को लिखिए।

3 सामाजिक नीति तथा आर्थिक नीतियों में समानताएँ व विभिन्नताएँ लिखिए।

4 सामाजिक नीति तथा समाज कल्याण नीति पर लेख लिखिए।

5 भारत सामाजिक कल्याण नीति की समस्याएँ व उन्हें दूर करने के उपाय बताईये।

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

- मोंगिया जे. एन. (1987) "इन्साइक्लोपिडिया आफ सोशल वर्क इन इण्डिया, मिनिस्ट्री आफ वेलफेयर,, नई दिल्ली।
- गोर्वनमेंट आफ इण्डिया, सातवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग
- गोर्वनमेंट आफ इण्डिया, आठवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग
- गोर्वनमेंट आफ इण्डिया, नवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग
- कुलकर्णी पी. डी. (1959) सोशल पालिसी इन इण्डिया" इण्डियन जर्नल आफ सोशल वर्क, वोल्यूम 23
  - सिंह मिश्र सिंह, सामाजिक नीति नियोजन एवं विकास, देवा पब्लिकेशन, लखनऊ

इकाई - 3

भारतीय संविधान एवं पंचवर्षीययोजनाओं में सामाजिक नीति

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सामाजिक नीति तथा भारतीय संविधान

  3.2.1 मूलभूत अधिकार

  3.2.2 राज्यों के नीति निर्देशक तत्त्व

3.3 पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई में के अध्ययन पश्चात आप -

- भारतीय संविधान में वर्णित मुलभूत अधिकारों को जान पांएगे।
- राज्यों के नीति निर्देशक तत्त्व का समझ पांएगे।
- पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति को समझ पांएगे।

3.1 प्रस्तावना

स्वतन्त्रता के बाद भारत में सामाजिक नीति की व्याख्या के लिये कई प्रयास किये गए। सामाजिक नीति के निर्धारण के कई स्त्रोत है। भारतीय संविधान में मुलभूत अधिकारों तथा नीति निर्देशक तत्त्व वर्णित है जो कि भारत में सामाजिक नीति निर्धारण के प्रमुख स्त्रोत हैं। संविधान के अनुच्छेद 14 से अनुच्छेद 35 में नागरिको के मुलभूत अधिकार वर्णित है जो कि नागरिकों के हितों की रक्षा हेतु सामाजिक नीति निर्धारण के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करती है।

3.2 सामाजिक नीति तथा भारतीय संविधान

भारत के संविधान में सामाजिक नीति निर्माण में महत्त्वपूर्ण भुमिका है। संविधान की प्रस्तावना में की घोषणा कल्याणकारी राज्य के प्रति वचनबद्धता प्रदर्शित करती है। यह घोषणा इस प्रकार है:

“भारतवर्ष संप्रभुता सम्पन्न समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है जिसमें विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और उपासना की स्वतन्त्रता है तथा प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता है।

2.2.1 संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार-

(1) **समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18) -** धर्म, मूलवंश जाति, लिंग के आधार पर विभेद नही किया जा सकता। लोकसेवा योजना में अवसर की समानता प्रदान की गयी तथा अश्पृश्यता को समाप्त किया गया।

(2) **स्वतन्त्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22):-** बोलने की स्वतन्त्रता, अपराधों के लिये दोष नीति से सम्बन्धित संरक्षण, प्राण तथा दैहिक स्वतन्त्रता।

(3) **शोषण के विरूद्ध संरक्षण (अनुच्छेद 23-24):-** मानव व देहव्यापार, बेगार, 14 वर्ष से कम आयु के श्रमिकों का खतरनाक जगह पर कार्य करने पर प्रतिबंध|

(4) **धर्म की स्वतन्त्रता (अनुच्छेद 25-28):-**धर्म के मानने और प्रचार करने की स्वतन्त्रता, धार्मिक कार्य में प्रबन्ध की व्यवस्था, शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा अथवा धार्मिक उपासना में उपस्थित होने की स्वतन्त्रता।

(5) **संस्कृति तथा शिक्षा सम्बन्धी अधिकार (अनुच्छेद 29-30):-** अल्पसंख्ययों के हितों को संरक्षित किया गया। शिक्षण संस्थानों की स्थापना तथा प्रचार करने का अधिकार अल्पसंख्यकों को दिया गया।

(6) **संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32-35):-** प्रदत्त अधिकारो को लागू कराने के लिये उपाय उपलब्ध कराये गये हैं, अधिकारों में संशोधनों की शक्ति संसद को है। सेना विधी लागू होने की दषा में इस भाग में अधिकारो को सीमित किया गया है।

3.2.2 राज्य के नीति निर्देशक तत्व

1 अनुच्छेद 38 - राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा -

(1) राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था कि जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रमाणित करे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।

(2) राज्य विशिष्टतया, आय की असमानताओ को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यष्टियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।

2 अनुच्छेद 39 - राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्त्व- राज्य अपनी नीति का विशिष्टतया इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से-

(1) पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;

(2) समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियन्त्रण इस प्रकार किया जाए जिससे सामुहिक हित की सर्वोत्तम रूप से पूर्ति हो;

(3) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पाद्न साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेद्रण न हो;

(4) पुरूष और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिये समान वेतन हो;

(5) पुरूष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवष होकर नागरिकों को ऐसे रोजगार में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हो;

(6) बालकों को स्वतन्त्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ्य विकास के अवसर और सुविधाएँ दी जांए और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाये।

3. **अनुच्छेद 39 (क)-** समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता -

राज्य यह सुनिश्चित करेगा की विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे की समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह विशिष्टतया यह सुनिश्चित करने के लिये की आर्थिक यो किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नारिग न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित ना रह जाये, उपर्युक्त विधान या स्कीम द्वारा किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।

4. **अनुच्छेद 40-** ग्राम पंचायतों का संगठन-

राज्य ग्राम पंचायत का संगठन करने के लिये कदम उठायेगा और उसे ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उसे स्वायत्त शासन की ईकायों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिये आवश्यक हो।

5. **अनुच्छेद 41** -कुछ दशाओं में काम , शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार राज्य अपने आर्थिक सामाजिक और विकास की सीमाओं के भीतर काम पाने और शिक्षा पाने और बेकारी, बुढ़ापा, बिमारी व निःशक्तता तथा अन्य अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने के प्रभावी उपबन्ध करेगा।

6. **अनुच्छेद 42 -** काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं तथा प्रसुति सहायता का उपबन्ध

राज्य का काम, न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिये और प्रसुति सहायता के लिये उपबन्ध करेगा।

7. **अनुच्छेद 43-** कर्मकारों के लिये निर्वाह मजदूरी आदि।

राज्य उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्यरीति से कृषि के , उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मजदूरी शिक्षा, जीवन स्तर और अवकाश का संपुर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशायें व सामाजिक और

सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटिर उद्योग को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

8. **अनुच्छेद 43 (क)** -उद्योगों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना

राज्य किसी उद्योग में लगे उपक्रमो, स्थापनों व अन्य संगठनों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करनें के लिये उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठायेगा।

9. **अनुच्छेद 44-** नागरिकों के लिये समान सिविल संहिता

10. **अनुच्छेद 45-** छः वर्ष से कम आयु के बालकों के लिये प्रारम्भिक बाल्यावस्था देख-रेख और शिक्षा का उपबन्ध

राज्य सभी बालको के लिये छः वर्ष की आयु परी करनें तक प्रारम्भिक बाल्यावस्था देख-रेख और शिक्षा देने के लिये उपबन्ध करने का प्रयास करेगा।

11. **अनुच्छेद 46-** अनुसूचित जातियों , अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी हितो की अभिवृद्धि

राज्य जनता के दुर्बल वर्गों के विशिष्टतया अनूसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के षोशण से उनकी सुरक्षा करेगा।

12. **अनुच्छेद 47-** पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य-

राज्य अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया मादक पेयो और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधिय प्रायजनों से भिन्न उपभोग का प्रतिशेध करने का प्रयास करेगा।

13. **अनुच्छेद 48-** कृषि और पशुपालन का संगठन-

राज्य, कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा और विशिष्टया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिशेध करने के लिए कदम उठाएगा।

14. **अनुच्छेद 48 (क)**-पर्यावरण का संरक्षण तथा संवर्धन और वन तथा जीवों की रक्षा-

राज्य देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।

15. **अनुच्छेद 49-** राष्ट्रीय महत्त्व के संस्मारकों, स्थानों और वस्तु का संरक्षण-

सांसद द्वारा बनाई गई विधि द्वारा उसके अधिन राष्ट्रीय महत्त्व वाले घोषित किए गये। कलात्मक या ऐतिहासिक अभिरूचि वाले प्रत्येक संस्मारक या स्थान या वस्तु का

यथास्थिति लुप्त, विरूपण, विनाश, अपसारण, व्ययन या निर्यात संरक्षण करना राज्य की बाध्यता होगी।

16. **अनुच्छेद 51-** कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण-

राज्य की लोक सेवाओं में न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करने कि लिए राज्य कदम उठाएगा।

17. **अनुच्छेद 52-** अन्तराष्ट्रीय शांती और सुरक्षा की अभिवृद्धि-

राज्य

(क) अन्तराष्ट्रीय शांती और सुरक्षा की अभिवृद्धि का

(ख) राश्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबन्ध को बनाए रखने का

(ग) संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों को अन्तराष्ट्रीय विधि और संधि-बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का और

(घ) अन्तराष्ट्रीय विवादों के माध्यस्थम् द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

3.3 पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति-

प्रथम योजना (1951-56)-

स्वतन्त्रता के बाद भारत ने नियोजित आर्थिक विकास का मार्ग अपनाया। 1951 में प्रथम पंचवर्षीय योजना बनायी गई जिसमें आर्थिक विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के साथ-साथ समाज कल्याण के लिए भी प्रभावशाली योजनाएँ स्वीकार की गई। योजना के आलेख में कहा गया था कि "प्रजातान्त्रिक राज्य में नियोजन एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें एक सीमा तक प्रत्येक नागरिक को भाग लेने का अवसर होना चाहिए। "(प्रथम पंचवर्षीय योजना में अपनाई गई सामाजिक नीति का लक्ष्य जनता के रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठाना था। इसमें यह स्वीकार किया गया था कि विभिन्न योजना का लक्ष्य केवल बड़ी-बड़ी मशीनों का उत्पादन करना मात्र ही नहीं है वरन् स्वास्थ्य, सफाई और शिक्षा में विकास करना तथा व्यापक सांस्कृतिक प्रगति के लिए सामाजिक परिस्थितियाँ तैयार करना है।)" । भारतीय जनता की वैध आकांक्षाओं की संतुष्टिकि लिए तीव्र गति से राज्य के आर्थिक और सामाजिक दायित्वों में वृद्धि की गई।

द्वितीय योजना (1956-61)-

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मूल उद्योगों के विस्तार के साथ-साथ यह स्वीकार किया गया कि विकास की प्रक्रिया एवं रूप में कुछ सामाजिक मुल्य एवं लक्ष्य अभिव्यक्त होने चाहिए। विकास द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक असमानताएँ प्रजातान्त्रिक तरीके से दूर करनी चाहिए। आर्थिक लक्ष्यों को सामाजिक लक्ष्यों से अलग नहीं किया जा सकता। योजना द्वारा लोगों की वैध आकांक्षाओं को संतुष्ट किया जाना चाहिए।

तृतीय योजना (1961-66)-

तृतीय पंचवर्षीय योजना में एक नई समाज व्यवस्था की स्थापना का लक्ष्य अपनाया गया। इसमें यह माना गया कि गरीबी भारतीयों के लिए अभिषाप है जो अनेक बुराइयों की जन्मदाता है। गरीबी का निराकरण सामाजिक तथा आर्थिक दोनों प्रकार के विकास द्वारा किया जा सकता है जिसके लिए तकनीकी रूप से ऐसी समाज व्यवस्था बनानी होगी जो सभी नागरिकों को विकास के समान अवसर प्रदान कर सके। मूलभूत सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन करने होंगे तथा पुरानी परम्परावादी व्यवस्था को गत्यात्मक समाज के रूप में बदलना होगा। केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा रहन-सहन को अपनाना ही पर्याप्त नहीं है वरन् सामाजिक रीति-रिवाजों एवं सा संस्थाओं में भी परिवर्तन करने होंगे। तृतीय पंचवर्षीय योजना में समाजवाद को अधिक महत्त्व दिया गया । यह माना गया कि समाजवाद की दिशा में प्रगति अनेक पक्षों पर निर्भर करती है। समाजवाद अर्थ-व्यवस्था में प्रत्येक नागरिक को अवसर की समानता प्राप्त होती है। प्रारम्भ में यह मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करती है, जैसे- भोजन, काम, शिक्षा के लिए अवसर, स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ, आय का न्यूनतम स्तर आदि। प्रजातन्त्र और समाजवाद के आधार पर विकास करने वाला समाज, समाजिक मूल्यों तथा अभिप्रेरणाओं पर अधिक जोर देता है तथा समाज के सभी विभागों में सामान्य हित एवं दायित्व का भावना विकसित करता है। भारत में जाति-व्यवस्था के कठोर बन्धनों के कारण आर्थिक विकास में अनेक बाधाएँ तथा हित-संघर्श आड़े आ जाते हैं। देश में आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन साथ-साथ चलने चाहिए, अन्यथा दोनों में जो पीछे रहता है वही आगे वाले को पाँव पकड़ कर खींच लेता है।

चोथी योजना (1969-74)-

चोथी पंचवर्षीय योजना का मूल लक्ष्य लोगों के जीवन-स्तर में दु्रतगामी परिवर्तन करना था। यह परिवर्तन उन प्रयासों द्वारा किया जाए जो समानता एवं सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने वाले हैं। इस योजना में जन-साधारण, कमजोर वर्गो तथा कम अधिकार प्राप्त वर्गो की ओर विशेषध्यान दिया गया। योजना के आलेख में यह कहा गया कि आर्थिक विकास का लाभ समाज के कम विषेशाधिकार प्राप्त लोगों को मिलना चाहिए, विषेशतः अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों को, जिनके आर्थिक और षैक्षणिक हितों को सामाजिक सजगता के साथ प्रोत्साहित किया जाता है। योजना में जो भी आर्थिक विकास के कार्यक्रम अपनाए गए थे, उन सभी का एक लक्ष्य सामाजिक न्याय की स्थापना माना गया। इसके लिए सामाजिक-आर्थिक संस्थाओं के नवीनीकरण की बात कही गई। योजना आलेख के अनुसार, "नियोजन के मुख्य उद्देष्यों की परिभाशा समानता और सामाजिक न्याय की ओर निरन्तर प्रगति करते हुए दु्रतगामी आर्थिक विकास के रूप में तथा आर्थिक और सामाजिक प्रजातन्त्र की स्थापना के रूप में की जा सकती है।"

पाँचवी योजना (1974-79)-

चोथी पंचवर्षीय योजना अपने लक्ष्यों की पूर्ति में बहुत कुछ असफल रही और पाँचवीं योजना जो समय से एक वर्ष पूर्व ही समाप्त कर दी गई (1974-78) में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया कि गरीबी दूर करने की दिशा में चोथी योजना की असफलता का एक बड़ा कारण यह रहा कि औद्यौगिक उत्पादन और कृषि योजना दर में प्रर्याप्त वृद्धि नहीं हुई। अन्य बातों के अलावा पाँचवीं योजना की रीति-नीति में इन बातों का विशेषध्यान रखा गया- (1) कुल घरेलू उत्पादन में 5.5 की

वृद्धि उत्पादन बढ़ाने वाले रोजगार का विस्तार, (2) न्यूनतम आवश्यकताओं का एक राष्ट्रीय कार्यक्रम, (3) समाज कल्याण कार्यक्रमों को और आगे बढ़ाना, (4) कृषि तथा ऐसे बुनियादी और विशेष उद्योगों के विस्तार पर जोर, जो जन-साधारण के उपभोग की चीजे बनाते हैं, (5) गरीब लोगों के लिए उचित भावों पर उपभोग्य वस्तुएँ मिल सकें- इसके लिए पर्याप्त वसूली और वितरण की प्रणाली, (6) निर्यात की वृद्धि और आयात होने वाली चीजों की जगह देशी चीजे पैदा करने का जोरदार प्रयत्न, (7) अनिवार्य उपभोग पर कड़ाई से पाबन्दी, (8) कीमतों, वेतनों और आयों का समुचित सन्तुलन एवं (9) सामाजिक, आर्थिक और क्षेत्रिय असमानताएँ घटाने के लिए संस्थागत, वित्तीय तथा अन्य उपाय। स्पष्ट है कि पाँचवीं पंचवर्षीय योजना का मूल लक्ष्य भी लोगों के जीवन-स्तर में द्रुतगामी परिवर्तन करके आत्म-निर्भरता उत्पन्न करना और गरीबी हटाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रगति करना था। इस प्रकार योजना में समानता और सामाजिक न्याय को प्राप्त करने का आश्वासन दिया गया। यह कहा गया कि "भारत जैसे विशाल देश में गरीबी एक बहुत बड़ी और जटिल समस्या है, जिसे किसी एक पंचवर्षीय योजना में समाप्त नहीं किया जा सकता। पाँचवीं योजना में इसे समाप्त करने की प्रक्रिया तेज की जाएगी और आत्म-निर्भरता प्राप्त करने तथा गरीबी हटाने कि लिए उत्पादन के ढ़ाँचें में अनुकूल परिवर्तन लाया जाएगा। पाँचवीं योजना समाजवादी लक्ष्य की ओर एक बढ़ता हुआ कदम था।" योजना का उद्देश्य आर्थिक शक्ति के चन्द हाथों में केन्द्रित हो जाने को कम रखना रखा गया था। इसके लिए आवष्यक समझा गया कि कुषल गतिषील सार्वजनिक क्षेत्र खड़ा किया जाए और वित्तिय संस्थाओं का स्वामित्व सरकार के हाथ में अधिकाधिक रखते हुए समुचित सामाजिक नियन्त्रण लागू किया जाए। सामाजिक न्याय की प्राप्ति में शिक्षा और रोजगार के निकट का तालमेल है तथा पाँचवीं योजना में शिक्षा के ढाँचें में कुछ अनिवार्य परिवर्तन करते हुए निम्न बिन्दुओं पर जोर देने की बात कही गई- (1) सामाजिक शिक्षा सम्बन्धी अवसरों को सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने की समग्र योजना का अंग समझना, (2) शिक्षा प्रणाली, विकास की आवश्यकताओं और रोजगार के बीच निकट का तालमेल करना, (3) शिक्षा स्तर में सुधार और (4) विद्यार्थियों सहित शिक्षा से सम्बद्ध समुदाय को सामाजिक और आर्थिक विकास के नामों में षामिल करना। सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन देने के लिए प्राथमिक एवं प्रौढ़ शिक्षा पर जोर दिये जाने की बात कही गई। यह आश्वासन दिया गया है कि समाज के दुर्बल वर्गों के बच्चों को अधिक से अधिक संख्या में स्कूल जाने और बीच में पढ़ाई न छोड़ने को आवष्यक प्रोत्साहन दिया जाएगा।

पाँचवीं योजना में स्वीकार किया गया कि देश की 30 से अधिक आबादी अत्यन्त गरीब है तथा चिकित्सा और स्वास्थ्य सुविधाओं के नाते देहाती और शहरी इलाकों में बहुत अधिक असंतुलन है। पाँचवी योजना में सार्वजनिक स्वास्थ्य की न्यूनतम सुविधाओं की पूर्ति का निष्चय किया गया और देहाती तथा पिछड़े इलाकों पर विशेषध्यान दिया गया। समाज कल्याण के क्षेत्रों में पाँचवीं योजना पिछली योजनाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावी और व्यावहारिक दृष्टिकोण लिए हुई थी। प्रथम तो यह स्वीकार किया गया कि पिछले दो दशकों में समाज कल्याण का काम मुख्यतः स्वयंसेवी संस्थाओं ने किया है, जिसमें सरकार ने सहायता की है। ऐसी संस्थाओं का काम यद्यपि हर पंचवर्षीय योजना में बढ़ता चला गया है, किन्तु पाँचवीं योजना नीति समाज कल्याण और समाज के विकास का समन्वय करना है। पाँचवी योजना में इसके लिए निम्न मुख्य उपाय किये गये- (1) समाज कल्याण के रक्षा और विकास के कार्यक्रम का विस्तार, (2) दुर्बल वर्गो, विषेशकर बच्चों और स्त्रियों के लिए किए जाने वाले सामाजिक और आर्थिक आयोजन में समन्वय, (3) रोजगार कार्यक्रम द्वारा कल्याण

सेवाओं की वृद्धि, (4) परिवारों को बुनियादी स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध करना, (5) जिन स्त्रियों और बच्चों को संरक्षण की आवश्यकता है, उनके लिए कल्याण के कार्यक्रम और वृद्धों तथा अषक्तों के लिए सहायता। इसी प्रकार पाँचवीं योजना में पुनर्वास के क्षेत्र में प्रभावी कार्यक्रम अपनाए जाने की बात कही गई है।

छठी योजना (1980-85)-

जनता सरकार ने सम्पूर्ण नियोजन प्रणाली पर पुनर्विचार किया और पाँचवीं योजना को 31 मार्चख् 1979 की बजाय 31 मार्च, 1978 को समाप्त कर 1 अप्रेल, 1978 से नई राष्ट्रीय छठी योजना लागू कर दी। जनवरी, 1980 में श्रीमती गाँधी के नेतृत्व में काँग्रेस पुनः सत्तारूढ़ हो गई और नई सरकार ने छठी योजना के प्रारूप का पुनर्मूल्यांकन कर इसे नया रूप दिया और छठी योजना की अवधि 1980-1985 रखी। छठी योजना का मुख्य उद्देश्य गरीबी को दूर करना, हालाँकि यह भी स्वीकार किया गया कि इतना बड़ा कार्य पाँच वर्ष की छोटी-सी अवधि में पूरा नहीं किया जा सकता। इस योजना के लिए ऐसी नीति अपनाई गई जिससे कृषि और उद्योग दोनों क्षेत्रों की संरचना सुदृढ़ हो ताकि पूँजी निवेश, उत्पादन और निर्यात बढ़ाने के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार हो सके और उद्देश्य से तैयार किए गए विशेषकार्यक्रमों के द्वारा ग्रामीण और असंगठित क्षेत्रों में रोजगार अवसरों में वृद्धि हो सकती है, जिससे लोगों की जरूरतें पूरी हो सकें। सभी सम्बद्ध समस्याओं को अलग-अलग के बदले समेकित रूप से सुलझाने, प्रबन्ध दक्षता बढ़ाने, सभी क्षेत्रों का गहन पर्यवेक्षण करने और स्थानीय स्तर की विशेषविकास परियोजनाओं में लोगों का सक्रिय सहयोग प्राप्त करने तथा इन परियोजनाओं के निवेश और प्रभावी कार्यान्वयन पर जोर दिया गया है। छठी योजना में सामाजिक नीति योजना में सामाजिक नीति के निम्नलिखित उद्देश्य थे-

1. अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर में महत्त्पुर्ण वृद्धि करना, संसाधनों के उपयोग में कुशलताको बढ़ाना और उत्पादकता में सुधार करना।
2. आर्थिक और शिल्फ वैज्ञानिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए आधुनिकीकरण की गति को बढ़ाना।
3. गरीबी और बेरोजगारी के सूचकांक में उत्तरोत्तर कमी करना।
4. ऊर्जा के देशीय संसाधनों का तेजी से विकास करना जिसमें ऊर्जा के उपयोग के संरक्षण और कुशलतापर उचित बल दिया गया हो।
5. न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के द्वारा जिसकी प्राप्ति इस प्रकार की है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि देश के सभी भाग निर्धारित अवधि में राष्ट्रीय रूप में स्वीकृत स्तरों को प्राप्त कर लेंगे, विषेशकर आर्थिक और सामाजिक दृश्टि से पिछड़ी जनसंख्या और सामान्य लोगों के जीवन-स्तर में सुधार करना।
6. लोक/सरकारी नीतियों और सेवाओं में पुनर्वितरणात्मक आधार को इस प्रकार मजबूत करना, जिससे गरीबों को लाभ हो तथा आय और धन की असमानताओं में कमीं हो।
7. विकास की गति और शिल्फ वैज्ञानिक लाभ प्रदान करने में क्षेत्रीय असमानताओं में उत्तरोत्तर कमी करना।

8. छोटे परिवार के आदर्श को स्वेच्छा से स्वीकार करने के जरिए जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने वाली नीतियों को बढ़ावा देना।

9. पारिस्थितिकीय और पर्यावरणीय परिसम्पत्तियों के संरक्षण और सुधार को बढ़ावा देकर विकास के अल्पावधि और दीर्घावधि लक्ष्यों के बीच सामंजस्य स्थापित करना।

10. उपयुक्त शिक्षा, संचार और संस्थागत कार्यनीतियों के जरिए विकास की प्रक्रिया में सभी वर्गों के लोगों की सक्रिय सहभागिता को बढ़ाना।

स्पष्ट है कि छठी योजना में एक ऐसी सामाजिक नीति को पूर्वापेक्षा अधिक पुष्ट किया गया जिससे देश में समाजवादी समाज की स्थापना की दिशा में तेजी से आगे बढ़ा जा सके। समाज के गरीब और पिछड़े वर्ग को ऊपर उठाने, आर्थिक विशमताओं को दूर करने और लोक-कल्याणकारी कार्यक्रमों का विस्तार करने पर पूरा बल दिया गया। छठी योजना में निहित समाज कल्याण कार्यक्रमों का उद्देश्य समाज के सुविधाहीन वर्गों को अपनी सामाजिक, आर्थिक एवं शारीरिक असमर्थताओं पर काबू पाने और अपने जीवन-स्तर में सुधार करने के योग्य बनाना है। ये कार्यक्रम सामान्य रूप से गरीबी और बेकारी की समस्याओं से निपटने में विकास कार्यक्रमों के पूरक है। छठी योजना में एक ऐसी नीति अपनाई गयी है कि जिससे गरीबी पर तेजी से प्रहार किया जा सके और सभी निहीत शक्तियों को एक अधिक शक्तिषाली और अधिक निश्पक्ष समाज बनाने के लिये संगठित किया जा सके। यह माना गया हे कि अनुसूचित जातियों और अनुसुचित जनजातियों को, जो जनसंख्या के गरीब वर्गों का अधिकांश भाग है, योजना कार्यक्रमों से अपना पुरा हिस्सा मिल सके।

सातवी योजना (1985-90) -

इस योजना में देश की सामाजिक नीति के अन्तर्गत उन नीतियों और कार्यक्रमों पर विशेषध्यान केन्द्रित किया गया जो देश में रोजगार के अवसर में वृद्धि करे, गरीबी की समस्या को कम करे, ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में रहने वाले निर्धनो के जीवन स्तर को उच्च बनाये। अतः इस योजना में सामाजिक नीति का मुख्य उद्वेष्य रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना तथा समाज सेवा और मानव संसाधनों का विकास करना था।

सातवी योजना की सामाजिक नीति के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये सरकार ने दो विशेष कार्यक्रम चलाये -

(1) **एकिकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम -** इस कार्यक्रम में ग्रामीण निर्धनों के परिसम्पति विकास तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार वृद्वि करने के लिण् राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन गारन्टी कार्यक्रम के क्रियान्वन पर विशेष बल दिया गया।

(2) **शहरी निर्धनता स्वरोजगार कार्यक्रम -** यह कार्यक्रम शहरों में रहने वाले गरीबों को आत्म-निर्भर बनाने तथा उनकी आम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए साधन जुटाने हेतू था। इसे प्रधान मंत्री की स्वरोजगार योजना कार्यक्रम भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार वृद्वि के लिए 'नेहरू रोजगार योजना' तथा 'जवाहर रोजगार योजना' प्रारम्भ की गई।

देश में कमजोर वर्गों , अनुसुचित जातियों, जनजातियों, पिछड़े वर्गों , महिलाओं, बच्चों, विकलांगो के कल्याण हेतु चल रही योजना एवं कार्यक्रमों को व्यापक बनाया गया। इन

कार्यक्रमों से वंचित रहने वाले लोगों के विशेष हेतु सभी योजनाओं को मिलाकर ‘20 सुत्री कार्यक्रम बनाया गया तथा नई कल्याणकारी योजनाएँ प्रारम्भ की गई। अल्पसंख्यकों के विकास हेतु ‘15 सुत्री कार्यक्रम’ की क्रियान्विति पर विशेष बल दिया गया।

इस प्राकर सांतवी योजना में सामाजिक नीति को व्यवहारिक और व्यापक बनाया गया तथा इसे प्रभावी बनाने हेतु इसमें शोध एवं मुल्यांकन कार्यक्रमों पर विशेष जोर दिया गया।

आंठवी योजना (1992-97) -

इस योजना में सभी विकासात्मक प्रयासों में मानव विकास पर विशेष बल दिया गया। इस योजना में सामाजिक नीति के अन्तर्गत निम्न समाज कल्याण कार्यों पर विशेष बल दिया गया , स्वास्थ्य , साक्षरता , बुनियादी आवश्यकताएँ, पीने के पानी की व्यवस्था, कमजोर वर्गों के लिए आवास एवं कार्यक्रम।

आंठवी पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति के निम्नलिखित प्रमुख उद्वेष्य निर्धारित किये गये।

(1) बेरोजगारी की समस्या के निराकरण हेतु पर्याप्त रोजगार के अवसर पैदा करना तथा अगले 10 वर्षों मे सभी को रोजगार उपलब्ध कराना।

(2) जनसंख्या वृद्वि की समस्या पर अंकुष लगाना।

(3) प्राथमिक शिक्षा पर विशेषजोर देना तथा निरक्षरता का उन्मूलन करना।

(4) सभी को स्वच्छ पीने का पानी उपलब्ध कराना।

(5) बेहतर स्वास्थ्य प्रदान करना तथा सन् 2000 तक प्रमुख संक्रामक रोगों को समाप्त करना।

(6) कमजोर वर्गों (बच्चों, महिलाओं, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति) को व्यापक सुरक्षा प्रदान करना तथा विकास करना।

उपरोक्त उद्वेष्यों की प्राप्ति के लिए सामाजिक नीति के अन्तर्गत निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गये।

(1) गरीबी उन्मुलन के लिए रोजगारों के अवसरों में वृद्वि करना तथा अगले 10 वर्षों में सभी को काम उपलब्ध कराना।

(2) जनसंख्या नियंत्रण के लिए राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का निर्धारण करना। योजना के अन्त तक वर्तमान जन्म दर 30.5 प्रति हजार को घटाकर 25 प्रति हजार करना।

(3) योजना के अन्त तक 15 से 35 वर्ष की आयु वर्ग के 114 करोड़ लोगों को साक्षर बनाने हेतु साक्षरता एवं उतर साक्षरता अभियान मे तेजी लाना। जनसाधारण की प्राथमिक शिक्षा, ग्रामीण महिलाओं को साक्षर बनानें तथा आदिवासीयों के लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था की गई।

(4) सन् 2000 तक सभी वर्गो को स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

(5) विकास योजना एवं कार्यक्रमों में समाज के कमजोर वर्गों का विशेष ध्यान रखना एवं संरक्षण प्रदान करना।

(6) देश के सभी गांवों में स्वच्छ पीने के पानी की व्यवस्था करना।

(7) एक करोड़ ग्रामीण परिवारों में प्रत्येक को बिजली कनेक्षन देना।

(8) मेला ढोने की कुप्रथा को समाप्त करना।

आंठवी योजना में समाजिक नीति के कुछ महत्वपुर्ण क्षेत्रों - जनसंख्या, रोजगार, साक्षरता, चिकित्सा, शिक्षा आदि के विकास की जाँच हेतु राष्ट्रीय विकास परिषद की 6 समितियों के गठन किया गया। इस योजना की सामाजिक नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित कार्यक्रमों में कुछ पर विशेष ध्यान दिया गया है तथा कुछ नये कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये। -

(1) नेहरू रोजगार योजना

(2) भूमि सुधार कार्यक्रम

(3) अकालग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम

(4) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

(5) ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम

(6) रोजगार गारन्टी कार्यक्रम

(7) मजदूरी रोजगार कार्यक्रम

(8) ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों एवं बच्चों के विकास का कार्यक्रम

(9) ग्रामिण युवकों को स्वंय का रोजगार के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम

(10) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

नवीं योजना (1997-2002)

इस योजना में आंठवी पंचवर्षीय योजना की सामाजिक नीति को यथावत तथा कृषि क्षेत्र पर विशेष जोर देनें की लक्ष्य रखा गया। जिससे अधिक उत्पादक रोजगार में वृद्धि हो और गरीबी की समस्या का निवारण हो। नवीं योजना का लक्ष्य ‘‘वृद्धि के साथ समाजिक न्याय और समानता था। नौवीं याजना के विशिष्ट लक्ष्य जो बाजार शक्तियों पर अधिक विश्वास और सार्वजनिक नीति की अनिवार्यताओं से उत्पन्न होतें हैं। निम्नलिखित है-

(1) कृषि और ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना ताकि पर्याप्त उत्पादक रोजगार कायम हो सकें और गरीबी को दूर किया जा सके।

(2) कीमतों में स्थिरता के साथ अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को त्वरित करना।

(3) सभी के लिये खाद्य और पोष्टिक सुरक्षा उपलब्ध कराना और ऐसा करते हुये समाज के कमजोर वर्गों का विशेषरूप से ध्यान रखना।

(4) सभी को समय-बद्व रूप से बुनियादी न्युनतम सेवायें उपलब्ध कराना इनमें पीने का सुरक्षित पानी, प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा सुविधायें, सर्वव्यापक प्राथमिक शिक्षा, आवास और यातायात एवं परिवहन द्वारा सभी से सम्बन्ध स्थापित करना।

(5) जनसंख्या की वृद्धि दर पर नियंत्रण प्राप्त करना।

(6) जनसहभागिता को प्रोन्नत एवं विकसीत करना और इसके लिये सहभागी संस्थानों अर्थात् पंचायतीराज संस्थानों, सहकारिताओं और अन्य स्वतः सहायता समुहों को बढ़ावा देना।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तिम प्रारूप मे कहा गया है, ''दसवीं योजना नयी सहस्त्राब्दि के प्रारम्भ में, विगत मे प्राप्त उपलब्धियों को उपर उठाने तथा उभर कर सामने आयी कमजोरियों को दूर करने का अवसर प्रदान करती है।'' इस योजना ने स्वीकार किया है कि, ''देश में इस तथ्य को लेकर धैर्य कम होता जा रहा है कि नियोजन के पांच दशक बीत जाने के बावजुद हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग निर्धनता के गर्त में डुबा हुआ है तथा सामाजिक उपलब्धियों में खतरे की घंटी देने वाले अंतराल मौजुद है।''

दसवीं याजना में समता एवं समाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिये त्रिसुत्रीय नीति अपनाई गयी:

(1) कृषि विकास को योजना का प्रमुख तत्व देखा जाना चाहिए, क्योंकि इस क्षेत्र के विकास का विस्तार अधिक व्यापक , विशेष रूप से ग्रामीण निर्धनों को लाभ पहुँचाना होता है।

(2) योजना की विकास रणनीति उन क्षेत्रों के तीव्र विकास पर केन्द्रित है, जो लाभकारी रोजगार सृजित करते है, यह क्षेत्र हैं: निर्माण, पर्यटन, परिवहन, लघुउद्योग, खुदरा व्यापार, सुचना प्रौद्योगिकी तथा संचार सम्बन्द्ध सेवायें।

(3) सामान्य विकास प्रक्रिया से पर्याप्त रूप से लाभन्वित न हों पाने वाले विशेष कार्यक्रमों को योजनाकाल में प्रारम्भ करना।

दसवीं योजना के प्रमुख बिन्दु निम्नावार थे:

1. दसवीं योजना का कुल सार्वजनिक व्यय 15,25,639 करोड़ रूपये लेकिन संसाधन 15,92,300 करोड़ रूपये (केन्द्र का व्यय 9,21,291 करोड़ रूपये व राज्यों का 6,71,079 करोड़ रूपये)
2. विकास दर का लक्ष्य 8 प्रतिशत वार्षिक रखा गया है।
3. निर्यात वृद्धि दर 12.38 प्रतिशत वार्षिक तक लाना।
4. आयात वृद्धि दर 17.13 प्रतिशत वार्षिक तक लाना।
5. गरीबी अनुपात को 5 वर्षों में 26.1 से घटाकर 19.3 प्रतिशत तक लाना।
6. साक्षरता दर को वर्ष 2007 तक बढ़ाकर 75 प्रतिशत करना।
7. सभी गाँवों को पेयजल मुहैया कराना॥
8. षिषु मृत्यु दर को 45 हजार तथा 2012 तक 28 प्रति हजार जीवित जन्म तक काम करना।
9. योजना काल में 5 करोड़ व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराना।
10. निवेश दर ; की 28.41 प्रतिशत, घरेलु बचत दर की 26.84 प्रतिशत तथा बाहरी बचत 1.57 प्रतिशत करना।
11. नदियों के प्रदूशित हिस्सों की सफाई करना।

12. जनसंख्या वृद्धि दर को घटाकर 16.2 प्रतिशत करना।

13. विद्युत पर योजना व्यय का 26.4 प्रतिशत व्यय करने का प्रावधान है। जिससे विद्युत की कुल 41,110 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता को सृजन का लक्ष्य निर्धरित किया गया है। इसमें 25,417 मेगावाट क्षमता परमाणु ऊर्जा की।

14. इस योजना में उदारीकरण पर जताई जा रही चिन्ताओं पर ध्यान दिया गया है। योजना में रोजगार और समानता के आर्थिक मार्ग को चुना गया है। इसमें कृषि, कृषि पर आधारित उद्योग, लघु और कुटिर उद्योग तथा असंगठित क्षेत्र में होने वाली तमाम गतिविधियों पर ध्यान दिया गया है। इस क्षेत्र में संसाधन उपलब्ध कराने और असंगठित क्षेत्र में आने वाली अड़चनों को दूर करने पर भी जोर दिया गया है।

3.4 सारांश

एक देश की सामाजिक नीति तय करने की प्रक्रिया का सबसे पहला चरण है कि विद्यमान परिस्थितियों की आवष्यक जानकारी प्राप्त की जाए। नीति सदैव भविष्य का कार्यक्रम है। एक ऐसा कार्यक्रम है जो वर्तमान की समस्याओं की समस्याओं तथा अभावों का निस्तारण कर सके तथा सुखद भविष्य का आधार बन सके। यह वर्तमान परिस्थितियों का अगला कदम है। भारत में सामाजिक नीति के निर्धारण में भारतीय संविधान में वर्णित मूलभुत अधिकार तथा नीति का आश्वासन देते है। और यही सामाजिक नीति के निर्धारण के मुख्य स्त्रोंत भी है।

3.5 शब्दावली

- **मुलभूत** : मौलिक , आधारभूत
- **अभिव्यक्ति** : विचार, मत, बात
- **भ्रातत्व** : भाईचारा

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामाजिक नीति तथा भारतीय संविधान पर निबंन्ध लिखिए।
2. भरतीय संविधान में वर्णित मुलभुत अधिकरों को लिखिये।
3. समाजिक नीति के स्त्रोंत के रूप में भारतीय संविधान की भुमिका लिखिए।
4. भारतीय संविधान में वर्णित नीति निर्देशक तत्वों को लिखिए।
5. भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नीति को लिखिए।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , छठी पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , सातवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , आठवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार

- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , नौवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , दसवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया , बारहवीं पंचवर्षीय योजना , योजनाआयोग भारत सरकार
- सिंह, मिश्र सिंह (2006) सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास, देव पब्लिकेशन, लखनऊ

इकाई - 4

भारत में सामाजिक नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य (Objectives)
4.1 प्रस्तावना (Preface)
4.2 भूमिका (Introduction)
4.3 भारत में सामाजिक नीति (Social Policy in India)
4.4 सारांश (Summary)
4.5 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)
4.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

4.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप -

- भारत में बच्चों एवं वृद्धों से सम्बंधित सामाजिक नीति के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
- भारत की बिभिन्न महत्वपूर्ण सामाजिक नीतियो जैसे – स्वस्थ्य नीति , शिक्षा नीति , आवास नीति , जनसंख्या नीति की भूमिका एवं महत्व से परिचित हो जायेंगे||

4.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक नीति सामाजिक संरचना की कमियों को दूर करती है, असंतुलन को रोकती है, तथा असंतुलन वाले क्षेत्र से इसे दूर करने का प्रयास करती है। सामाजिक नीति का मुख्य आधार स्थायी विकास है, जिसके माध्यम से समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने और सामाजिक पूंजी को सुदृढ़ करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि राज्य व राज्य के नागरिक स्वस्थ्य एवं सशक्त हो सके।

4.2 भूमिका (Introduction)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व देश में समाज में अनेक तरह की समस्याएं विद्यमान थीं। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक ऐसी नीतियों की आवश्यकता थी जिसके आधार द्वारा इन समस्याओं से छुटकारा पाया जा सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए यह अनुभव किया गया कि गरीबी, बेकारी, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास जैसी अनेक गंभीर सामाजिक समस्यायें उचित विकास न होने के कारण ही हमारे समाज में व्यापक रूप से विद्यमान हैं। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू किया जाए।

4.3 भारत में सामाजिक नीति (Social Policy in India)

भारत की सामाजिक नीति से अभिप्राय क्रिया के ऐसे व्यक्त मार्ग से है जो भारत में समाज सेवाओं अर्थात् ऐसी सेवाओं जो जनसंख्या के सभी वर्गों के व्यक्तियों के लिए उनके व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए उपयुक्त अवसर उपलब्ध कराने हेतु प्रत्यक्ष रूप से प्रदान की जाती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सशक्त करती है तथा परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सहभागिता के लिए सम्मिलित करती है प्रोत्साहित करती है जिससे सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। सामाजिक नीति न्याय पर आधारित होती है जिसका उद्देश्य अनुकम्पा तथा संतुष्टि के द्वारा स्थानीय समुदायों तथा वाह्य संसार को सुदृढ़बनाना होता है।

4.3.1 राष्ट्रीय बाल नीति

बाल विकास का मुख्य लक्ष्य सभी बच्चों का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास करना है ताकि वे अपनी समस्याओं एवं कठिनाईयों का समाधान करते हुए परिवार, पड़ोस, समुदाय एवं अन्तिम रूप से समाज के साथ समायोजन की स्थिति में आ सके तथा एक पूर्ण एवं विकसित जीवन बिता सके।

भारत में राष्ट्रीय बाल नीति 22 अगस्त, सन् 1974 को स्वीकार की गई। जिसमें यह प्रावधान किया गया कि राज्य का यह उत्तरदायित्व होगा कि जन्म से पूर्व तथा पश्चात में बच्चों के विकास के लिए सभी प्रकार की पर्याप्त सेवाएं प्रदान करेगा।

राष्ट्रीय बाल नीति, 2001 में बाल विकास से सम्बन्धित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपायो को स्पष्ट किया गया है। जो कि निम्नवत् है:-

1. जीने का अधिकार
2. स्वास्थ्य का अधिकार
3. शोषण का अधिकार
4. का अधिकार
5. खेलने और आनन्द प्राप्त करने का अधिकार
6. शिक्षा का अधिकार
7. आर्थिक शोषण से संरक्षण प्रदान करने का अधिकार
8. समानता का अधिकार

4.3.2 वर्द्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति, 1999

व्यक्ति की वृद्धावस्था का अर्थ बूढ़े हो जाने की अवस्था या आयु है जिसमें व्यक्ति की शारीरिक शक्ति एवं मानसिक सतर्कता में ह्रास होता है। सामान्यतया, इस अवस्था के लिए आयु के मानदण्ड का प्रयोग किया जाता है तो आमतौर पर 60 वर्ष मानी जाती है। यद्यपि आयु संबंधी मानदण्ड का निर्णय स्थानीय प्रशासन पर निर्भर करता है, परन्तु सामाजिक दृष्टि से वृद्धावस्था वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति अपना सक्रिय जीवन छोड़ चुका होता है, कार्य अथवा रोजगार छोड़ चुका होता है

तथा बढ़ती हुई आयु के कारण अशक्ति का अनुभव होता है और परिवर्तित परिस्थितियों में मान्यताओं के ह्रास का भी अनुभव करता है।

अक्टूबर 1999 में सरकार के द्वारा वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति की घोषणा की गयी तथा संयुक्त राष्ट्र के द्वारा इस वर्ष को अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के रूप मे घोषित किया गया। भारत सरकार के द्वारा वर्ष 2000 को वृद्ध व्यक्तियों का राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया गया। इस नीति के अन्तर्गतविशेषरूप से कमजोर वृद्ध व्यक्तियों की श्रेणी के अन्तर्गत विधवाओं, महिलाओं, निर्धनों, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों तथा अंपग और मानसिक रूप से विकसित लोगों पर बल दिया गया। राष्ट्रीय नीति का मुख्य उद्देश्य वरिष्ठ नागरिकों को उद्देश्यपूर्ण तथा सम्मानजनक जीवन जीने के अवसर उपलब्ध कराना है। इस नीति में वित्तीय सुरक्षा, स्वास्थ्य देखभाल तथा पोशण, आवास, कल्याण, मूलभूत सुविधाओं, शोध तथा प्रशिक्षण इत्यादि विशिष्ट विशेषताओं पर बल दिया गया है।

4.3.3 स्वास्थ्य नीति

स्वास्थ्य के सन्दर्भ में भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही सोचना प्रारम्भ हो गया था। स्वास्थ्य से सम्बन्धित किए गए विभिन्न प्रयासो का विवरण निम्नवत् है:-

भोर समिति, 1946

भारत में स्वतंत्रता के पूर्व स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास समिति का गठन सर जोसेफ भोर की अध्यक्षता में शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के विविध पहलुओं का सर्वोक्षण कर इनके विकास के लिए उपयुक्त सुझाव देने हेतु किया गया था।1946 में इस समिति द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी जिसमें निम्नलिखित प्रमुख संस्तुतियां की गयी-

1. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य का एकीकरण किया जाय, और प्रत्येक भारत वासी को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाय।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं को प्राथमिकता प्रदान की जाय।
3. उपयुक्त आवास, शुद्ध जल और स्वच्छ वातावरण की समुचित व्यवस्था की जाय।
4. रोग निवारण एवं उन्मूलन कार्य को सर्वाधिक प्राथमिकता प्रदान की जाय।
5. स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी समाज सेवाओं का यथोचित विकास किया जाय। मातृ एवं शिशु कल्याण, परिवार नियोजन एवं पोषाहार, उचित रोजगार, बेकारी निराकरण, अधिकाधिक कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन तथा संचार व्यवस्था का प्रबन्ध किया जाय।
6. समुचित स्वास्थ्य शिक्षा दी जाय और स्वास्थ्य के प्रति जन-चेतना उत्पन्न की जाय
7. चिकित्सकों एवं अन्य सभी सहयोगी कर्मचारियों को एकीकृत स्वास्थ्य विज्ञान का बोध कराया जाय।
8. प्रस्तावित अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाओं के अनुरूप स्वास्थ सेवाओं का विस्तार किया जाय।

मुदालियर समिति, 1959

1959 में डा. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्ति की गयी जिसे भोर कमेटी की संस्तुतियों के आधार पर बनायी गयी योजनाओं के कार्यान्वयन का मूल्यंकन करने, व्यावहारिक कठिनाइयों का निरूपण करने और संस्तुतिया देने का कार्य सौंपा गया। यह समिति इस निष्कर्ष पर पहुँची कि भोर समिति की संस्तुतिया इसलिये कार्यान्वित नहीं की जा सकी क्योंकि ये आदर्शवाद पर आधारित थी। मुदालियर समिति ने यह संस्तुति की कि प्रचलित नगरीय स्वास्थ्य शिक्षा व्यवस्था का विस्तार किया जाय, विशेषीकृत चिकित्सा की व्यवस्था की जाय तथा संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए जन अभियान चलाया जाय।

स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति, 1963

1963 में भारत सरकार ने एक स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति का गठन किया जिसने यह संस्कृति की कि ग्रमीण अंचलों में बहुउछेश्यीय महिला एवं पुरुष कार्यकत्ताओं द्वारा एकीकृत द्वारा एकीकृत स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन सेवायें प्रदान की जाये । 1972 में भारत सरकार ने बहुउछेश्यीय कार्यकर्ताओ के सम्बन्ध में एक समिति गठित की जिसकी संस्तुतिया भी वैसी ही थी, जैसी कि स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति की।

भारत सकार ने 1972 में ही एक व्यापक योजना (Master Plan) तैयार की जिसमें ग्रमीण एवं सुदूर अंचलों के चिकित्सकों को अधिक पुरस्कार देने एवं सचल चिकित्सालय चलाये जाने का प्रावधान किया गया। 1977 में नयी स्वास्थ्य योजना लागू की गयी जिसके अधीन ग्रमीण स्वास्थ्य कार्य-कत्ताओं पर बल दिया गया तथा उसी समुदाय के चिकित्सक (Barefoot Doctor) की नियुक्ति का प्रावधान किया गया। मार्च 1977 में एक नया कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो गावं-स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा चलाया जाना था। यह कार्यक्रम जन स्वास्थ्य जन हाथ में (Barefoot Doctor) की नियुक्ति का प्रावधान किया गया। मार्च 1977 में एक नया कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो गांव-स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा चलाया जाना था। यह कार्यक्रम जन स्वास्थ्य जन हाथ में के नारे पर आधारित था। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता योजना का उद्घाटन 2 अक्टूबर 1977 को हुआ जिसके अधीन समुदाय से ही किसी व्यक्ति को उचित प्रशिक्षण देकर समुदाय में स्वास्थ्य के लिए नियुक्त कर दिया गया।

अल्मा आटा घोषणा , 1978

1978 में प्राथमिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अल्मा आटा घोषणा की गयी जिसे भारत सहित अधिकांश राष्ट्रों ने स्वीकार किया। इस घोषणा के अनुसार, ‘प्रायोगिक वैज्ञानिक दृष्टि से उपयुक्त एवं सामाजिक दृष्टि से स्वीकार ढंगों एवं प्रौद्योगिकी पर आधारित, उनकी पूर्ण सहभागिता के माध्यम से समुदाय के व्यक्तियों एवं परिवारों की पहुंच के अन्दर सार्वभौमिक रूप से लायी गयी तथा ऐसी लागत जिसे आत्मनिर्भरता एवं आत्मनिर्णय की इच्छा से अपने विकास के प्रत्येक स्तर पर समुदाय एवं राष्ट्र उन्हें चलाते रहने में समर्थ हो सकें, पर आधारित अनिवार्य स्वास्थ्य सेवा आयोजित किये जाने की बात की गयी।

इस घोषणा के भारत द्वारा स्वीकार किये जाने के परिणामस्वरूप प्राथमिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य सामाजिक आर्थिक विकास का एक अंग बन गया, जीवन के सभी क्षेत्रों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध

स्थापित हो गया और सभी लोगों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को 2000 तक प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया।

1980 में भारत सरकार ने मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी एक विशेषज्ञ समूह का गठन किया जिसने मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम को चलाने का प्रस्ताव रखा। 1982 में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण केन्द्रीय परिषद ने एक यह संस्तुति की कि मानसिक स्वास्थ्य को सम्पूर्ण कार्यक्रम का एक अंग बनाया जाय इसे स्वास्थ्य, शिक्षा एवं समाज कल्याण सभी की राष्ट्रीय नीतियों में सम्मिलित किया जाय, और इसी संस्तुति के परिणामस्वरूप 1982 में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम किया गया।

1982 में ही कुष्ठ निवारण कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। 1985 में सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसका उद्देश्य बाल्यकाल की 6 बड़ी-बड़ी बीमारियों-डिपथीरिया,जमोघा, क्षय, लकवा, खसरा और काली खांसी को रोकना है।

इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए एक के बाद दूसरी सभी पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य के लिए विनियोजन किया गया जो पहली पंचवर्षीय योजना के 65.2 करोड़ रूपये से बढ़कर सातवीं पंचवर्षीय योजना में 3392 करोड़ रूपया हो गया।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002 का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के सामान्य लोगों को स्वास्थ्य के मानकों को लागू करना तथा स्वस्थ्य जीवन के अवसर प्रदान करना है। इस नीति का मुख्य दृष्टिकोण जन स्वास्थ्य व्यवस्था को विकेन्द्रीकृत करते हुए नई अधः संरचना की स्थापना करना तथा स्वास्थ्य की सुविधाओं को सुविधाजनक बनाना है। इन सुविधाओं को लागू करने तथा लोगों तक उपलब्ध कराने के लिए निजी क्षेत्रों के योगदान को स्वीकार किया गया है।

4.3.4 जनसंख्या नीति

भारत में निर्धनता का प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि की तीव्र दर है। विभिन्न जनगणना प्रतिवेदनों में यह कहा गया है कि जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण समुचित आर्थिक विकास सम्भव नहीं हो पा रहा है।

अनेक मनीशियों ने तीव्र जनसंख्या वृद्धि को अंग्रेजी सरकार की दोष पूर्ण आर्थिक नीति का परिणाम बताते हुए यह विचार प्रस्तुत किया कि आर्थिक तथा औद्योगिक प्रगति के बिना जनसंख्या वृद्धि को रोका नहीं जा सकता, किन्तु कालान्तर में इन विद्धानों का यह तर्क सत्य की कसौटी पर खरा नहीं उतरा क्योंकि आर्थिक तथा औद्योगिक प्रगति के बावजूद जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित नहीं किया जा सका। 1938में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रण विषय को राष्ट्रीय नियोजन समिति के अध्ययन का एक प्रमुख अंग बनाया। इस समस्या का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने हेतु एक उपसमिति बनाई गई। 1947 में इस उपसमिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, और इसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसी साल प्रकाशित कर दिया। पहली पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या की वृद्धि के विषय में कहा गया है कि आर्थिक संसाधनों पर जनसंख्या का दबाव पहले से ही इतना अधिक है कि जब तक जन्मदर को कम नहीं किया जायेगा तब तक आर्थिक वृद्धि नहीं हो सकती है।

अतः परिवार नियोजन का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया तथा इसे जनस्वास्थ्य कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग बनाया गया।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में ही यह स्प ष्ट कर दिया गया कि सामाजिक आर्थिक विकास के लिए जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाना अत्यावश्यक है तीसरी पंचवर्षीय योजना में भी इसी बात की पुनरावृत्ति की गयी। चोथीपंचवर्षीय योजना की प्रस्तावना में यह स्पष्ट किया गया कि भारतीय जीवन में समानता तथा महत्ता तभी प्राप्त की जा सकती है जब आर्थिक वृद्धि की दर अधिक तथा जनसंख्या वृद्धि की दर कम हो। विकास के लिए परिवार को सीमित करना परमावश्यक है।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 1976

1976 के मध्य में संसद में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति घोषित की गई। इसमें यह स्पष्ट किया गया कि क्योंकि जनसंख्या वृद्धि का कारण निर्धनता है, अतः निर्धनता दूर करने का अत्यधिक प्रयास किया जाय। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर पांचवर पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इस नीति में यह भी कहा गया कि जन्मदर को कम करने के लिएशिक्षा स्तर में वृद्धि तथा आर्थिक विकास की प्रतीक्षा करना अव्यावहारिक है। यह समस्या इतनी भयंकर है कि सीधे इस समस्या पर चोट करने की आवश्यकता है। इस नीति को परिवार नियोजन हेतु लागू किया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि 1977 के चुनावों में सत्ता परिवर्तन हो गया।

1977 में सत्ता में आयी सरकार ने परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण की अवधारणा को स्वीकार किया तथा सम्बन्धित मन्त्रालय का नाम बदलकर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण रखा। इस सरकार ने नयी जनसंख्या नीति की घोषणा की। यह कहा गया कि परिवार नियोजन कार्य को कल्याण के दर्शन के आधार पर समझा जाय तथा इसे ऐच्छिक कार्यक्रम बनाया जाय।

जनता सरकार अधिक समय तक सत्ता में नहीं रह पायी। 1980 में कांग्रेस पुनः सत्ता में आई परन्तु अतीत के कटु अनुभवों के कारण इसने भी जनसंख्या नियंत्रण पर अधिक बल नहीं दिया। 1978 में जनता सरकार ने जनसंख्या नीति पर एक अध्ययन दल बनाया था। जिसने यह तर्कपूर्ण विचार रखा कि न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, एकीकृत ग्राम्य विकास, प्रौढ़ शिक्षा और अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों को अधिक अच्छे ढंग से बनाया जाना चाहिए ताकि छोटे परिवार सिद्धान्त की सामान्य स्वीकृति सम्भव हो सके। यह विचार भी व्यक्त किया गया कि परिवार नियोजन शब्द का त्याग लाभकारी सिद्ध नहीं हुआ है कि इसे विकास की योजना में यथोचित स्थान मिलना ही चाहिए।

इस प्रकार भारतीय नियोजन में परिवार कल्याण कार्यक्रम पर विशेष बल दिया गया क्योंकि इसका अन्य क्षेत्रों के विकास से सीधा सम्बन्ध है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन हेतु65 करोड़ रूपया निर्धारित किया गया था। इसे सातवीं पंचवर्षीय योजना में बढ़ाकर 32560 करोड़ रूपये कर दिया गया। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि परिवार नियोजन के परिणामस्वरूप 1060 करोड़ बच्चे जन्म नहीं ले पाये। अभी भी जनसंख्या वृद्धि दर 2 प्रतिशत है। इसका कारण जन्मदर में धीरे-धीरे कमी होनातथा मृत्युदर का शीघ्रता से कम होना है। भारत के सामने यह बड़ी समस्या बन गयी कि दोनों में किस प्रकार सामंजस्य किया जाय जिससे जनसंख्या वृद्धि को रोका जा सके। 1984-1985 तक परिवार नियोजन को अपनाने वाले 1644 करोड़ लोग थे जिनकी संख्या 1988-89 में बढ़कर 2411 करोड़ हो गयी। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1983 में कहा गया है कि 2000 तक प्रजनन दर को 1

तक अवश्य लाना होगा जिसके लिए जन्मदर को 21 प्रति हजार तथा मृत्युदर को 9 प्रति हजार तक लाना होगा। 2003-2004 के दौरान परिवार योजना के साधनों को अपनाने वालों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000

15 फरवरी को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 की घोषणा की गयी जिसका उद्देश्य दो बच्चों के मानक को प्रोत्साहित करना था ताकि सन् 2046 तक जनसंख्या को स्थिर किया जा सके।

लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित उपायों का उल्लेख किया गया है:-

1. प्रति 1000 जीवित जन्में बच्चों के लिए शिशु मृत्युदर30 से कम करना।
2. मातृ मृत्युदर को 100000 जीवित जन्मों के लिए 100 से भी कम करना।
3. सर्वव्यापक प्रतिरक्षण।
4. 80 प्रतिशत प्रसवों के लिए प्रशिक्षित स्टाफ के साथ नियमित डिस्पेन्सरियों अस्पतालों और चिकित्सा संसाधनों का प्रयोग करना।
5. एड्स के बारे में सूचना उपलब्ध कराना।
6. सुरक्षित गर्भपात की सुविधा को बढ़ाना।
7. शिशु विवाह प्रतिबन्ध कानून और जन्मपूर्व लिंग निर्धारण तकनीक कानून का कड़ाई से पालन करना।
8. लड़कियों की विवाह आयु को 18 वर्ष से ऊपर उठाना और बेहतर तो यह है कि 20 वर्ष से भी अधिक करना।

4.3.5 शोषण नीति

स्वतंत्रता के पूर्व अधिकांश प्रयत्न अकाल से निपटने तथा गरीबी एवं भुखमरी को दूर करने से सम्बन्धित थे। इस सम्बन्ध में कई आयोग स्थापित किये गये जिन्होंने खाद्यान्नों का अधिक उत्पादन करने तथा शोषण के स्तर के निम्न होने पर चिन्ता व्यक्त की। लेकिन कोई भी स्पष्ट शोषण नीति नहीं बन पायी। विज्ञान की प्रगति ने इस समस्या को वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया तथा शोषण विज्ञान एवं उसके स्वास्थ्य एवं रोगों के सम्बन्ध को भलीभांति स्पष्ट किया गया। अंग्रेजों की सेना के अधिकारियोंविशेषकर डा0 राबर्ट मैकरिसन का योगदान महत्वपूर्ण है। उन्होंने शोषण अनुसंधान संस्था स्थापित की जो आगे चलकर भारतीय आयुर्विज्ञान शोध परिषद के रूप में परिवर्तित हो गयी। यह अनुभव किया गया कि बीमारी की समस्या, उच्च मृत्युदर तथा स्वास्थ्य के निम्न स्तर का कारण शोषण का निम्न स्तर है। भोर समिति ने भी स्पष्ट संस्तुति की थी कि स्वास्थ्य विभाग कोशोषण स्तर को सुधारने तथा ऊँचा उठाने के लिए प्रयास करने चाहिए। मुदालियर समिति ने भी इसी प्रकार की संस्तुति की थी।

महिला एवं बाल विकास विभाग के द्वारा सन् 1993 में राष्ट्रीय शोषण नीति को स्वीकार किया गया। जिसमें यह माना गया कि राष्ट्र के वकिास के लिए शोषण महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय शोषण नीति इस

तथ्य को स्वीकार करती है कि शोषण विकास को प्रभावित करता है और विकास शोषण को प्रभावित करता है।

4.3.6 शिक्षा नीति

प्रारम्भ में शिक्षा के उद्देश्यों, माध्यमों, शिक्षण संस्थानों के संगठन और शिक्षा के प्रसार के ढंगों को लेकर पर्याप्त मतभेद था। लेकिन 1835 में गवर्नर जनरल की कार्यकारी सभा के विधि सदस्य लार्ड मैकाले ने एक निर्णायक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसका एक मुख्य उद्देश्य एक वर्गविशेष को अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य शिक्षा देकर एक उद्देश्यविशेष के लिए प्रशिक्षित करना था। तत्कालीन सरकार ने जनसाधारण कीशिक्षा हेतु कोई प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व नहीं ग्रहण किया तथा इसे विदेशी मिशनरियों पर छोड़ दिया।

1854 में हाउस ऑफ कामन्स में वुड की अध्यक्षता में एक समिति ने मैकाले की शिक्षा नीति के उद्देश्यों का अनुमोदन करते हुए यह कहा कि इंग्लैण्ड में प्रचलित पद्धति का अनुसरण करते हुए भारत में भी स्तरीकृत विद्यालय एवं विश्वविद्यालय खोले जाय। लेकिन वुड समिति की संस्तुतियां लागू नहीं की जा सकती जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षा की प्रगति अत्यन्त धीमी रही।

1984 में भारतीय शिक्षा आयोग ने यह संस्तुति की कि प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व सरकार पर होना चाहिए और इसके लिए यदि आवश्यक हो, वैधानिक प्रावधान किये जाने चाहिए। आयोग ने यह भी कहा कि प्राथमिक शिक्षा स्थानीय लोगों के जीवन एवं आवश्यकताओं से सम्बन्धित होनी चाहिए तथा स्थानीय भाषायें इसका माध्यम होनी चाहिए।

शिक्षा नीति सम्बन्धी संवैधानिक प्रावधान

प्रारम्भ में संविधान के अधीन शिक्षा को अनुसूची 6 के अन्तर्गत राज्य सूची में रखा गया था किन्तु बाद में 1976 में इसे समवर्ती सूची में सम्मिलित कर लिये जाने के पश्चात अब शिक्षा का आयोजन केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों के अधिकार क्षेत्र में है। संविधान के अनुच्छे 45 में यह व्यवस्था की गयी है कि 10 वर्ष के अन्तर्गत राज्य 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कमजोर वर्गों,विशेषकर अनुसूचित जाति व जनजातियों के आर्थिक एवं शैक्षिक हितों की उन्नति के लिएविशेष ध्यान देगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति

शिक्षा आयोग की संस्तुतियों के आधार पर 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गयी जिसकी मुख्यविशेषताएं निम्नलिखित थीं:

1. 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा को लागू करने हेतु कठिन प्रयास करना,
2. क्षेत्रीय भाषाओं का विकास करना और इसके लिए अंग्रेजी तथा हिन्दी के अध्यापन के साथ-साथ एक अन्य आधुनिक भाषा का ज्ञान कराना,
3. क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करते हुए समान शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराना,
4. कार्य अनुभव एवं राष्ट्रीय सेवा के कार्यक्रमों का विकास करना,

5. वैज्ञानिक शिक्षा एवं शोध को उच्च प्राथमिकता प्रदान करना,
6. कृषि एवं उद्योगों के विकास को शिक्षा में सम्मिलित करना,
7. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम एवं सुविधाओं का विस्तार करना,
8. उच्च शिक्षा के स्तर पर प्रवेश सीमित करना,
9. पत्राचार शिक्षा एवं अंशकालिक शिक्षा का विकास करना, तथा
10. शिक्षा को 10$2$3 की पद्धति पर विकसित करना।

शिक्षा नीति में यह भी कहा गया कि सरकार को शिक्षा पर व्यय अनवरत रूप से बढ़ाना चाहिए ताकि राष्ट्रीय आय 6 प्रतिशत तक पहुंच सके। लेकिन दुर्भाग्यवश यह 4 प्रतिशत से अधिक नहीं बढ़ सका।

नवोदय विद्यालय

नवोदय विद्यालय की योजना के अधीन सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान देश के प्रत्येक जिले में एक नवोदय विद्यालय स्थापित करने का प्रावधान है। इस दिशा मे 1986-87 से कार्य प्रारम्भ हुआ। देश में 2006 नवोदय विद्यालय स्थापित किये जा चुके थे। ये विद्यालय केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध थे। इनमें कक्षा 6 से 12 तकि की कक्षायें चलाने की व्यवस्था है। इन विद्यालयों में प्रवेश का आधार छात्रों की योग्यता है तथा इनमें प्रवेश परीक्षा के आधार पर होता है। इन विद्यालयों में भोजन, पहनने के कपड़ो, पुस्तको, लेखन सामग्री एवं आवास सुविधा सहित शिक्षा निःशुल्क दी जाती है।

श्यामपट प्रचालन

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति में सबसे बड़ा व्यवधान विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यक भौतिक सुविधाओं का अभाव है। चोथे अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण के दौरान लगभग 188000 प्राथमिक विद्यालय बिना उपयुक्त सुविधाओं के थे। 192000 से भी अधिक विद्यालयों में चटायी या टाटापट्टी भी नहीं थी।

ऑपरेशन ब्लैकबार्ड योजना का उद्देश्य प्राथमिक विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यक शैक्षिक सुविधाओं की व्यवस्था करना है। आपरेशन शब्द का प्रयोग ही बताता है कि यह योजना अत्यावश्यक है। इसके लक्ष्य स्पष्ट तथा भलीभांति परिभाषित है। सरकार तथा जनता दोनों पूर्व निर्धारित समयावधि में इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कटिबद्ध है।

लड़कियों के लिए निःशुल्क शिक्षा

शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की शिक्षा की अधिकाधिक सुविधाएं प्रदान करने की योजना के अन्तर्गत लड़कियों को माध्यमिक स्तर तक निःशुल्क शिक्षा देने की योजना बनाई गई है और योजना पर व्यय होने वाली धनराशि को राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को आवंटित कर दिया गया है।

मुक्त विश्वविद्यालय

शिक्षा का व्यापक स्तर पर प्रचार व प्रसार करने के उद्देश्य से 1985 में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी जिसमें 1987 में शैक्षणिक कार्यक्रम आरम्भ कर दिये गये है। यह विश्वविद्यालय प्रबन्ध, दूरस्थ, शिक्षा तथा अन्य विषयों में डिप्लोमा पाठ्यक्रम चला रहा है। मुक्त

विश्वविद्यालय प्रवेश योग्यता, प्रवेश आयु, पाठ्यक्रम के चयन, शिक्षण पद्धति, शिक्षण स्थान, परीक्षा प्रणाली इत्यादि की दृष्टि से लचीली, खुली एवं जन तांत्रिक है।

4.3.7 आवास नीति

आवास के क्षेत्र में न केवल आवासीय भवनों की अत्यधिक कमी है अपितु आवास सम्बन्धी सूचनाओं में भी भारी कमियां है। सरकार प्रगतिशील आधर पर प्रत्यक्ष रूप से आवास देने के स्थान पर सामथ्र्यदाता की भूमिका अपनाती जा रही है। आवश्यकता है आवास क्षेत्र में ऐसे नीतिगत परिवर्तनों की जिससे निजी एवं सहकारी क्षेत्रों में अधिकाधिक भूमिका स्वीकार करने हेतु प्रोत्साहित किया जा सके इसके लिए वर्तमान विधिक एवं नियामक व्यवस्था में परिवर्तन करना होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने एक नई आवास एवं अभ्यारण्य नीति स्वीकार की जिसे जुलाई 1998 में मंत्रिमण्डल की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है।

जनसंख्या के सभी वर्गों की आवासीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निम्न वर्गों की आवासीय आवश्यकताओं परविशेष ध्यान दिया जायेगा। आवासीय सहायता प्रदान करने हेतु निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों, अनुसूचित जातियों , जनजातियों, बाधितों, मुक्त बन्धुआ मजदूरों, मलिन बस्तियों के निवासियों तथा महिला प्रमुख परिवारों को प्राथमिकता समूहों के रूप में चिन्हित किया जायेगा।

सरकार एक सुविधादाता के रूप में ऐसे पर्यावरण का निर्माण करेगी जिसमें सभी को समय से उपयुक्त मात्रा में आवश्यक संसाधन उपलब्ध हों जो पर्याप्त गुणवत्ता एवं मानक वाले हों।

आवासीय बाजार के नीचले भाग तथा चयनित अभावग्रस्त समूहों के सन्दर्भ में सरकार के और अधिक प्रत्यक्ष हस्तक्षेप का प्रविधान होगा। निर्धनों के लिए आवास उपलब्ध कराने के कार्य में निजी क्षेत्र को आकर्षित करने हेतु प्रोत्साहनों की घोषणा की जायेगी।

भारत में आवास सम्बन्धी समस्या के समाधान हेतु नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अलग-अलग विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं और एक सामान्य नीति की घोषणा भी की गयी है।

नगरीय आवास

नगरों में मलिन बस्तियों में आवास की समस्या प्रमुख है। छठी पंचवर्षीय योजना में अनुमान लगाया गया है कि 20 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या मलिन बस्तियों में रहती है। 1985 में यह अनुमान लगाया गया था कि मलिन बस्तियों के 3.31 करोड़ निवासियों के लिए आवास समस्या गंभीर रूप धारण किये हुए है। इनमें से केवल 0.68 करोड़ लोगों को ही सेवाएं प्रदान की जा सकी हैं। योजनाबद्ध विकास प्रारम्भ होने के बाद भारत में सर्वप्रथम 1956 में मलिन बस्तियों की सफाई एवं सुधार योजना बनाई गई। इस योजना के अधीन इस प्रकार की सेवायें प्रदान का उद्देश्य रखा गयाः

- मलिन बस्तियों में उन लोगों के लिए जिनकी आय 350 रूपये से कम है, आवास की व्यवस्था करना,
- पर्यावरणात्मक दशाओं में सुधार करना, तथा
- रात्रि शरणालय बनाना

आवास नीति, 1989

12 मई, 1989 को संसद में राष्ट्रीय आवास नीति पेश की गयी जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित प्रावधान है:-

1. गृह निर्माण के कार्य को बढ़ाकर भवनों की कमी को समाप्त किया जायेगा ताकि भवन निर्माण की गति जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ती रहे। गृह निर्माण लागत पर 35 प्रतिशत तक की वृद्धि की जायेगी।
2. 2000 तक सभी को भवन उपलब्ध कराने का लक्ष्य है जिस पर 145000 करोड़ रूपये की लागत आयेगी।
3. राष्ट्रीय भवन बैंक की स्थापना की जायेगी ताकि इच्छुक व्यक्ति उसमें पूंजी निवेश कर सके और भवन निर्माण या मरम्मत के लिए ऋण ले सकें।
4. न्यूनतम गृह सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति, ग्रामीण भवन निर्माण योजनाएं, अनौपचारिक क्षेत्र में गृह निर्माण कार्य, झुग्गी , झोपडियों में भवन निर्माण कार्य, पर्यावरण में सुधार इत्यादि प्रारम्भ किये जायेंगे।
5. विधि के अधीन प्रदान किये जाने वाले मदों पर करों से छूट दी जायेगी तथा गृह निर्माण हेतु बचत को प्रोत्साहित किया जायेगा।
6. गृह निर्माण हेतु सहकारिता का विकास किया जायेगा।
7. झुग्गी झोपडियों का उत्थान किया जायेगा तथा उनमें रहने वाले लोगों को भवन निर्माण हेतु बचत करने के लिए प्रेरित किया जायेगा।

राष्ट्रीय आवास नीति, 1998

राष्ट्रीय आवास नीति 1998 का मुख्य लक्ष्य लोगों की आवश्यकता के अनुसार सभी लोगों को आवास उपलब्ध कराना है। जिससे कि वे एक बेहतर जीवन जी सके। इस नीति में निम्नलिखित उद्देश्यों को निर्धारित किया गया है:-

1. न्यूनतम लागत पर आवासों का निर्माण करनाविशेषकर कमजोर वर्ग और निर्धन लोगों को गुणवत्तायुक्त आवास उपलब्ध कराना।
2. आवास की उपलब्धता के साथ-साथ उससे सम्बन्धित अन्य सेवाओं को प्राथमिकता के आधार पर सुनिश्चित करना तथा आवश्यक अधः संरचना का निर्माण करना।
3. भूमि, वित्त तथा प्रौद्योगिकी के बीच आने वाली वैधानिक तथा प्रशासकीय बाधाओं को दूर करने का प्रयास करना।
4. निजी तथा सरकारी सहभागिता पर बल देना तथा सहकारी क्षेत्रों को प्रेरित करना जिससे कि सुलभ आवासों का निर्माण किया जा सके।
5. आवास के क्षेत्रों में उपयुक्त प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हुए कार्यकुशलता, उत्पादकता, ऊर्जा क्षमताओं तथा गुणवत्ता में वृद्धि करना।

दसवीं योजना के आरम्भ के समय अस्सी लाख नवासी हजार इकाइयों की कमी होने का अनुमान लगाया है। हलांकि यह एक चिंताजनक संख्या है लेकिन इसमें संयुक्त परिवारों की भीड़भाड़ सम्बन्धी आवश्यकताएं काम में न आ सकने वाले पुराने और प्रतिस्थापित किए जाने वाले मकान और सुधार किये जाने वाले कच्चे मकान भी शामिल हैं। दसवीं योजना में कुल मिलाकर 2 करोड़ 24 लाख 40 हजार मिलियन मकानों की आवश्यकता का अनुमान लगाया गया है। इसलिए दसवीं योजना की अवधि में 20 लाख आवास स्कीम को जारी रखने का पर्याप्त कारण है, क्योंकि इससे शहरी गरीबों के लिए लगभग 30 लाख 50 हजार मकानों की व्यवस्था हो सकेगी।

4.4 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस इकाई में भारत में सामाजिक नीति के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, आय इत्यादि से सम्बन्धित नीतियो का उल्लेख किया गया है। जिसका उद्देश्य लोगो के जीवन में वृद्धि करना और मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने से है।

4.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for practice)

1 भारत में सामाजिक नीति से आप क्या समझते हैं?

2 भारत में सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालिए।

3 स्वास्थ्य नीति के उपायों का वर्णन कीजिए।

4 शिक्षा नीति कीविशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

5 निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) राष्ट्रीय आवास नीति, 1998

(ब) श्यामपट प्रचालन

(स) शोषण नीति

(द) मुदालियर समिति, 1959

4.6 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

- Martin, R.k, Social Policy, Random House, New York, 1970.
- Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol Ii Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
- Singh, S., Mishra, P.k, D.k, and Singh, A.k, N.k, Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
- Bhartiya, A.k,K .k. Introduction to Social Policy, NRBC, Lucknow, 2009.

- Alock, P.k, Social Policy in Bretain, Mcmillan, New York, 2003.
- Adams, R.k, Social Policy for Social Work, Palgrave, New York.
- äake, R.k, F.k, The Principles of Social Policy, Palgrave, New York
- साइमन, एच.ए. (1946), द प्रोवर्ब ऑफ एडमिनिस्ट्रेसन, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेसन रिव्यू: विन्टर।
- ड्रकर, पी.एफ (1975), मैनेजमेन्ट: टास्क, रिसपान्सबिलिटिज, प्रैक्टिस, बाम्बेः एलाइड पब्लिसर्स।
- टेलर, एफ.डब्ल्यू, (1911) द प्रिसिंपल ऑफ साइंसटिफिक मैनेजमेन्ट, न्यू यार्क: हार्पर ब्रदर्स।
- योडर, डी. (1959) पर्सनेल प्रिंसिपलस् एण्ड पालिसिस, एन्गलीवुड क्लिफस् एन.जे.: प्रेन्टिस हॉल।
- ब्रीच, इ.एफ.एल. (1967), मैनेजमेन्ट - इटस् नेचर एण्ड सिग्निफिकेन्स्, लन्दन: पिटमैन पेपरबैक्स।
- अवस्थी, अमरेश्वर एवं श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनरायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
- सिंह, निर्मल, प्रिन्सिपल ऑफ मैनेजमेन्ट, दीप एण्ड दीप पबिल्केशन, नई दिल्ली।
- शर्मा एम. एल., केजरीवाल, बी. के. एवं अग्रवाल, अनुपम, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004.
- अग्निहोत्री इन्द्रा एवं अवस्थी, अरविन्द, आर्थिक सिद्धान्त, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 1999।

इकाई - 5

सामाजिक नियोजन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य (Objectives)
5.1 प्रस्तावना (Preface)
5.2 भूमिका (Introduction)
5.3 सामाजिक नियोजन की अवधारणा (Concept of Social Planning)
5.4 सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषतायें (Characteristics of Social Planning)
5.5 संविधान में वर्णित सामाजिक नियोजन के उद्देश्य (Objectives of Social planning described in Constitution)
5.6 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य (Goal of Social Planning)
5.7 सामाजिक नियोजन के प्रकार्य (Functions of Social planning)
5.8 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त (Theories of Social Planning)
5.9 सामाजिक नियोजन के प्रकार (Types of Social Planning)
5.10 सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण कारक (Effective factors of Social Planning)
5.11 सफल सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तें (Required Conditions of Success Social Planning)
5.12 सफल नियोजन हेतु महत्वपूर्ण तत्व (Important Components for Success Social Planning)
5.13 सारांश (Summary)
5.14 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for practice)
5.15 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference books)

5.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप–

- सामाजिक नियोजन की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताओं को जान सकेंगे |
- सामाजिक नियोजन के उद्देश्य एवं प्रक्रिया से अवगत हो जायेंगे|
- सामाजिक नियोजन के प्रकार्य , सिद्धांत तथा प्रकार को समझ सकेंगे|

5.1 प्रस्तावना (Preface)

नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जो कि पूर्व निर्धारित होती है। नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक समय में रही है, क्योंकि बिना नियोजन के विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना असम्भव सा प्रतीत होता है। नियोजन से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जिसके माध्यम से लक्ष्य को पूरा किया जा सके और कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण समस्या को दृष्टिगत करते हुए किया जा सके। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए सामाजिक नियोजन आवश्यक हैं।

5.2 भूमिका (Introduction)

आधुनिक समाज में सामाजिक नियोजन शब्द का प्रयोग अत्यधिक होने लगा है। समाज विज्ञानों में यह अध्ययन का प्रमुख विषय बनता जा रहा है, क्योंकि व्यक्ति संतुलित सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था चाहता है तथा उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना चाहता है ताकि उसे सुख एवं संतोष प्राप्त हो सके, इसलिए वह अपने जीवन के विविध क्षेत्रों में योजनायें बनाने का प्रयास करता है।

5.3 सामाजिक नियोजन की अवधारणा (Concept of Social Planning)

नियोजन जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। ऐसा कोई व्यक्ति अथवा समाज नहीं है जो योजना न बनाता हो। व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा सामाजिक संतुलन बनाये रखने के लिए नियोजन व्यवहार के आवश्यक अंगभूत के रूप में कार्य करता है। निम्नलिखित कारणों से नियोजन महत्वपूर्ण है:

1. नियोजित व्यवस्था में लक्ष्यों तथा संसाधनों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हो पाता है तथा कार्यक्रम सुचारू रूप से सम्पन्न हो पाते हैं।
2. नियोजित व्यवस्था में प्राकृतिक संसाधनों से समाज के सभी वर्गों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। अनियोजित व्यवस्था में पूंजीपति वर्ग प्राकृतिक संसाधनों पर एकाधिकार स्थापित करते हुए इनका अधिकाधिक उपयोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए करता है। यद्यपि इससे उत्पादन में वृद्धि अवश्य होती है किन्तु उत्पादन से होने वाले लाभों में अन्य वर्गों को साम्यपूर्ण भाग नहीं मिल पाता है ।
3. नियोजन द्वारा माँग तथा पूर्ति, आवश्यकता तथा संसाधनों में समन्वय स्थापित किया जाता है। अनियोजित स्थिति में बेकारी तथा मूल्यों में वृद्धि होती है तथा निर्धन वर्ग का शोषण होता है।
4. सामाजिक विकास के लिए लाभों एवं सेवाओं का न्यायपूर्ण वितरण आवश्यक होता है। अनियोजित स्थिति में धनी वर्ग को अधिक लाभ एवं सेवायें प्राप्त होती हैं जिसके परिणाम स्वरूप वे और अधिक धनी बनते जाते हैं तथा निर्धन वर्ग दिन-प्रतिदिन और अधिक निर्धन होता चला जाता है।

5. नियोजित व्यवस्था में इस प्रकार की कार्य पद्धतियाँ तथा नियमावलियाँ बनायी जाती हैं। जिनसे निर्बल वर्गों का शोषण सम्भव नहीं हो पाता।

6. नियोजित व्यवस्था में समाज का सर्वतोन्मुखी विकास होता है। इससे समाज के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, राजनीतिक, संचार, परिवहन आदि सभी पक्षों को विकास के समुचित अवसर प्राप्त होते है।

7. अनियोजित अर्थव्यवस्था में आयात तथा निर्यात में संतुलन नहीं रहता है। ऐसी स्थिति में विकासशील राष्ट्रों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हानि होती है क्योंकि पूँजीवादी राष्ट्र अपने उत्पादों का अधिक मूल्य लेते हैं तथा विकासशील राष्ट्रों में उत्पादों का कम मूल्य देते हैं। नियोजन इस स्थिति को नियंत्रित करते हुये विकसित एवं विकासशील देशों के बीच होने वाले आयात-निर्यात में संतुलन स्थापित करता है।

8. नियोजन समाज के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों के प्रतिमानों को सुनिश्चित करते हुए सामाजिक स्थिरता उत्पन्न करता है।

9. नियोजन की स्थिति में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग विवेक एवं सावधानी के साथ किया जाता है जिसके परिणाम स्वरूप प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का अनावश्यक तथा अविवेकपूर्ण दोहन नहीं होता तथा प्राकृतिक सन्तुलन बना रहता है।

10. नियोजन के परिणाम स्वरूप ऐसी सेवाओं का आयोजन सम्भव हो पाता है जो समाज के निर्बल एवं शोषण का सरलता पूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लोगों को जीवन की मुख्यधारा में होने वाली प्रतियोगिता में सफलता पूर्वक भाग लेने में समर्थ बनाती हैं और परिणामतः समाज कल्याण की अभिवृद्धि होती है।

5.3.1 सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषाएं

सामाजिक नियोजन दो शब्दों से मिलकर बना हैः सामाजिक नियोजन। सामाजिक का अभिप्राय समाज से सम्बन्धित मामलों से है। समाज में विविध प्रकार के सम्बन्ध पाये जाते हैं यथा पारिवारिक सम्बन्ध, शैक्षिक सम्बन्ध, धार्मिक सम्बन्ध, राजनीतिक सम्बन्ध, औद्योगिक सम्बन्ध इत्यादि। ये सम्बन्ध व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें से प्रत्येक प्रकार के सम्बन्ध का क्षेत्र इस प्रकार कार्य करता है कि वह अधिक बड़ी सामाजिक व्यवस्था में स्वतः एक व्यवस्था अथवा उपव्यवस्था का रूप धारण कर लेता है। नियोजन लक्ष्यों के निर्धारण, उनकी पूर्ति के लिए संसाधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के संगठित रूपों जो सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, का प्रयोग है। नियोजन के अन्तर्गत वर्तमान स्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित, व्यवस्थित तथा सुगठित रूपरेखा तैयार की जाती है ताकि भावी परिवर्तन को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निदेशित तथा संशोधित किया जा सके।

सामाजिक एवं नियोजन शब्दों के विवेचन के पश्चात अब सामाजिक नियोजन का अर्थ स्पष्ट किया जा रहा है। सामाजिक नियोजन किसी भी रूप में किया गया नियोजन है जो सामाजिक व्यवस्था या उसकी अन्तर्सम्बन्धित उपव्यवस्थाओं में पूर्ण या आंशिक रूप से एक निश्चित दिशा में अपेक्षित

परिवर्तन लाने के एक चेतन एवं संगठित प्रयास का परावर्तन करता है। नियोजन का उद्देश्य एक निश्चित दिशा में परिवर्तन लाने के लिए योजना का निर्माण करना है।

पं. जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में ''नियोजन न केवल कार्यसूची बना लेना है और न ही यह एक राजनीतिक आदर्शवाद है, वरन् नियोजन एक बुद्धिमत्तापूर्ण, विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक पद्धति है जिसके अनुसार हम अपने आर्थिक तथा सामाजिक उद्देश्यों को निर्धारित एवं प्राप्त करते हैं। स्पष्ट है नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।''

भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव मानव जीवन पर बहुत अधिक पड़ता है। भौतिक संसाधनों के उपयोग के बिना पर्यावरण में सुधार करना सम्भव नहीं है। भौतिक तथा सामाजिक दशाएँ एक दूसरे की पूरक हैं। यद्यपि आज सामाजिक तत्वों को भी भौतिक तत्वों के रूप में देखा जाने लगा है, परन्तु वास्तविकता यह है कि भौतिक कारकों का स्वयं अपने में कोई महत्व नहीं है। समाज अपने दृष्टिकोणों, विचारों तथा महत्व के आधार पर उनका अर्थ निर्धारित करता है।

एन. बी. सोवानी के अनुसारः ''सामाजिक नियोजन भूमि सुधार, असमानता में कमीं, आय का साम्यपूर्ण वितरण, लोगों तथा क्षेत्रों में कल्याण एवं समाज- सेवाओं के विस्तार, अधिक सेवायोजन तथा मात्र एक दूसरे से जुड़ी हुई नहीं प्रत्युत एकीकृत योजनाओं एवं नीतियों इत्यादि की एक प्रक्रिया है।''

ए. जे. कान्ह के अनुसार, ''सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत वैयक्तिक और सामूहिक विकास एवं जीवनयापन के लिए गारण्टीयुक्त न्यूनतम संसाधनों के कार्यान्वयन एवं अपने सदस्यों के लिए अपनी अभिलाषाओं एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समाज के प्रयास समाहित हैं।''

उक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु उनकी विविध प्रकार की अवश्यकताओं एवं समाज में उपलब्ध विविध प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामन्जस्य स्थापित करती है।

5.4 सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषतायें (Chief Characteristics of Social Planning)

सामाजिक नियोजन की सामान्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं:-

निश्चित लक्ष्य

विकासशील देशों में नियोजन का लक्ष्य मुख्यतः उत्पादन बढ़ाना, प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करना, उत्पादकता बढ़ाना, अतिरिक्त जनशक्ति का समुचित उपयोग करना तथा आय में समानता लाना होता है।

आधारभूत लक्ष्यों की प्राथमिकता

विकासशील देशों में आवश्यकताओं की अधिकता तथा संसादनों की कमी के कारण प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाता है। प्रमुख लक्ष्य कृषि एवं उद्योगों में समन्वय तथा कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता लाना होता है। आयात प्रतिस्थापन एवं निर्यात सम्वर्द्धन करते हुये, उद्योगों को

बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। मानवीय विकास के साधनों को समुचित स्थान प्रदान किया जाता है।

आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धी

नियोजन में केवल आर्थिक उत्पादकता को बढ़ाने का ही प्रयत्न नहीं किया जाता वरन् सामाजिक तत्वों को सबल एवं कार्यात्मक बनाने का भी भरसक प्रयास किया जाता है।

अल्प एवं दीर्घकालीन योजनायें

नियोजन में समय एक महत्वपूर्ण कारक होता है। प्रत्येक राष्ट्र एक दीर्घकालीन (10 से 20 वर्ष की) योजना बनाता है। दीर्घकालीन योजना को चार वर्षीय या पंचवर्षीय योजनाओं में विभाजित कर दिया जाता है। अल्पकालीन योजनाएं प्रायः वार्षिक होती हैं।

साधनों का समुचित वितरण

साधनों के अभाव के कारण नियोजन की नितान्त आवश्यकता पड़ती है। नियोजित व्यवस्था में साधनों का वितरण इस प्रकार किया जाता है कि न्यूनतम साधनों के माध्यम से अधिकतम क्षेत्रों के सर्वाद्दिक व्यक्तियों को अधिकाधिक लाभान्वित किया जा सके।

5.5 संविधान में वर्णित सामाजिक नियोजन के उद्देश्य

सामाजिक नियोजन का प्रमुख उद्देश्य संविधान की प्रस्तावना में वर्णित लक्ष्यों को प्राप्त करना है। ये प्रमुख लक्ष्य एवं उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय
2. विचारों का स्पष्टीकरण (धर्मों एवं अनुयायियों की स्वतंत्रता)
3. स्थितियों एवं अवसरों की समानता
4. भ्रातृ भावना का अनुरक्षण जिसमें प्रत्येक का व्यक्तित्व परिलक्षित हो
5. बालिकाओं एवं बालकों की निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध
6. अनुसूचित जातियों, जन-जातियों तथा पिछड़े वर्गों का आर्थिक एवं शैक्षिक विकास
7. पोषण स्तर, जन स्वास्थ्य तथा जीवन स्तर का उन्नयन
8. लोक कल्याण हेतु सामाजिक संरचना
9. आर्थिक असमानताओं में सामन्जस्य की स्थापना
10. पद, अवसर, सुविधा आदि की असमानताओं में सामान्जस्य की स्थापना

5.6 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य (Goals of Social Plannig)

सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों को प्रमुख रूप से तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं:-

1. अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु लक्ष्य

2. समयानुसार सामन्जस्य की स्थापना (समानता लाना) हेतु लक्ष्य
3. समयानुसार सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हेतु लक्ष्य

अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु लक्ष्य

अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु सामाजिक नियोजन के लक्ष्य निम्नलिखित हैं:-

1. आर्थिक संसाधनों का समुचित उपयोग
2. बेरोजगारी दूर करने के प्रयत्न
3. उत्पादकता में वृद्धि
4. संतुलित विकास को प्रोत्साहन एवं पिछड़े वर्गों तथा अल्पविकसित क्षेत्रों की उन्नति
5. सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान जिसके अन्तर्गत रोजगार, उचित मजदूरी, उचित लाभ, उचित मूल्य, लगान, ब्याज आदि की दरों का निर्धारण एवं विनियमन सम्मिलित है
6. रोजगार के अवसरों में वृद्धि
7. शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का समुचित प्रबन्ध
8. राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
9. कृषि में सुधार तथा कृषि सम्बन्धी उद्योगों की प्रगति
10. जन साधारण के जीवन स्तर का उत्थान
11. उद्योगों का संतुलित विकास
12. एक निश्चित अवधि में अधिकतम सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति की प्राप्ति
13. सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर का उन्नयन
14. एकाधिकार प्रवृत्ति का समापन एवं शोषण से मुक्ति
15. कल्याणकारी राज्य की स्थापना

समयानुसार सामन्जस्य की स्थापना (समानता लाना) हेतु लक्ष्य

सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं को दूर करने के लिए समाज में नियोजित व्यवस्था का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था में योग्यतानुसार विकास तथा जीवन यापन के अवसर प्रदान किये जाते हैं तथा इसके अन्तर्गत एक निश्चित सीमा के उपरान्त आय में वृद्धि पर रोक लगाई जाती है। नियोजन द्वारा निम्नलिखित क्षेत्रों में समानता स्थापित करने का प्रयास किया जाता है:-

1. समान आर्थिक विकास
2. आर्थिक स्रोतों के उपयोग के समान अवसर
3. शिक्षा ग्रहण करने के समान अवसर
4. न्याय के समान अवसर

5. सामाजिक प्रगति के समान अवसर
6. लाभ का समान वितरण
7. सांस्कृतिक विकास के समान अवसर

समयानुसार सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हेतु लक्ष्य

नियोजन का मुख्य उद्देश्य देश की सुरक्षा को स्थायित्व प्रदान करने के साथ-साथ उद्योगों की स्थापना करते हुए अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होता है। सामाजिक क्षेत्र में नियोजन का लक्ष्य राष्ट्र में लिंग, जाति, धर्म, रंग आदि के आधार पर भेद-भाव को समाप्त करना है ताकि जीवन स्तर न केवल आर्थिक दृष्टि से बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी ऊँचा उठ सके।

5.7 सामाजिक नियोजन एक प्रक्रिया के रूप में (Social Planning as a Process)

सामाजिक नियोजन में तार्किक रूप से क्रमबद्धता का पालन किया जाना अत्यन्त आवश्यक है ताकि कार्यक्रम समुदाय की समस्याओं एवं इसके सदस्यों की आवश्यकताओं से सार्थक रूप से सम्बन्धित रह सकें तथा वे निर्धारित लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं सामाजिक मूल्यों की व्यवस्था के अनुरूप प्रतिपादित एवं कार्यान्वित किये जा सकें। विकास के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनेक कारकों को ध्यान में रखकर जो कार्यक्रम प्रस्तावित किये जाते हैं उन्हें निवेश या लागत कहते हैं; क्षेत्र तथा लाभार्थियों को जिन्हें कार्यक्रम से विशेष लाभ होता है, समावेश क्षेत्र कहते हैं; तथा इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु जो निश्चित कार्य किये जाते हैं उन्हें लक्ष्य कहते हैं। सामाजिक नियोजन में विकास की सीमाओं का आकलन केवल लक्ष्यों की उपलब्धि के आधार पर ही नहीं होता वरन् उद्देश्यों के सन्दर्भ में कार्यक्रम की प्रभावपूर्णता के आधार पर भी होता है। इस प्र्रभाव को परिणाम कहते हैं। ये परिणाम कालान्तर में अन्य कार्यक्रमों के लिए स्वयं निवेश का रूप ग्रहण कर लेते हैं और उनका प्रभाव अनेक क्षेत्रों पर पड़ने लगता है। इस प्रकार के प्रभाव को कार्यक्रम का प्रतिफल कहते हैं।

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनेक उद्देश्यों को ध्यान में रखा जाता है। इन उद्देश्यों में अन्तर्सम्बन्ध होता है जिसे कार्यक्रम की रणनीति कहा जाता है। लक्ष्य निर्धारण के पहले उस क्षेत्र के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं तथा उस क्षेत्र में आयोजित किये गये कार्यक्रमों तथा उनकी कमियों का विश्लेषण करते हैं। इसे सन्दर्भ विश्लेषण कहते हैं। निष्पत्ति मूल्यांकन हेतु कुछ सूचकों को आधार मानकर अध्ययन आधार वर्ष निर्धारित करते हैं। कार्यक्रम का मूल्यांकन एक निश्चित अवधि के अन्तराल पर करते रहते हैं, जब तक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाय। इन मध्यवर्ती मूल्यांकनों की इस प्रक्रिया को खण्डीय विश्लेषण कहते हैं । तदुपरान्त खण्डीय विश्लेषण के अन्तर्गत किये गये कार्यक्रम मूल्यांकन कमियों की जानकारी, कार्यक्रम में आने वाली बाधाओं आदि का साथ-साथ विश्लेषण करते हैं जिसे स्थितिपरक विश्लेषण कहते हैं।

स्थितिपरक विश्लेषण के आधार पर किसी क्षेत्र में प्रस्तावित कार्यक्रमों के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। परन्तु ये उद्देश्य राज्य तथा केन्द्र द्वारा संचालित कार्यक्रम एवं लक्ष्यों के अनुरूप ही होते हैं। नियोजनकर्ता इन उद्देश्यों को निर्धारित कर वर्तमान कमियों को ध्यान में रखते हुये ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत करता है जो इन कमियों की भी पूर्ति करते हों। इन कमियों को केवल भौतिक उपलब्धि की

दृष्टि से ही नहीं देखा जाता वरन् इनका गुणात्मक प्रभाव भी देखा जाता है। इस प्रकार इनका कार्य गुणात्मक एवं परिमाणात्मक (qualitative and quantitative) प्रतिमानों को निश्चित करना होता है। यह अवश्य ध्यान में रखा जाता है कि जो प्रतिमान केन्द्रीय सरकार ने निर्धारित किये हैं वे इस क्षेत्र के लिए उपयुक्त हैं अथवा नये प्रतिमानों की आवश्यकता है।

योजना निर्माण तथा कार्यान्वयन में दूसरा महत्वपूर्ण कार्य उपलब्ध एवं प्रत्याशित संसाधनों का मूल्यांकन होता है। इन्हें स्थानीय स्तर पर किस प्रकार सक्रिय बनाया जाय, इस पर विचार विमर्श होता है। संसाधनों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता हैः (1) मानव शक्ति; एवं (2) भौतिक संसाधन। मानव शक्ति के अन्तर्गत श्रमिकों तथा कार्यकर्ताओं की उपलब्धता तथा उनकी निपुणता आदि को सम्मिलित किया जाता है। भौतिक संसाधनों के अन्तर्गत इकाइयों की संख्या, प्रौद्योगिकी के स्तर, संसाधनों की लागत इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है।

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया के चरण

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रयोग में लाये जाने वाले विभिन्न चरणों का क्रम इस प्रकार हैः-

1. विकास के लक्ष्यों तथा मूल्यों का निर्धारण
2. परिस्थिति विश्लेषण
3. वर्तमान योजनाओं के गुणात्मक तथा परिमाणात्मक आयामों का ज्ञान
4. विशिष्ट उद्देश्यों तथा रणनीति का निर्धारण
5. क्षेत्रीय संगठनों का गठन ताकि सेवाओं का समुचित उपयोग हो सके
6. खण्डीय नियोजन का कार्य (निवेश, लक्ष्य, क्षेत्र इत्यादि का निद्र्दारण)
7. आर्थिक तथा सामाजिक निवेशों के बीच अन्तर्सम्बन्धों की स्थापना
8. प्रशिक्षण तथा संचार सम्बन्धी प्रस्ताव
9. क्रिया नियोजन तथा कार्यों का स्पष्टीकरण
    - सामाजिक तथा आर्थिक विकास योजनाओं का एकीकरण
    - प्रशिक्षण तथा अभिमुखीकरण
    - परिवीक्षण तथा मूल्यांकन
    - कार्य के लिए अपेक्षित उपकरणों का निर्माण
    - सेवायें प्रदान करने की विधि का निर्धारण
    - संस्था की स्थापना
10. बजट की स्थापना

सामाजिक नियोजन की आधारभूत कार्यरीति

नियोजन की प्रक्रिया के अंतर्गत निम्न बातों का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है:

1. सम्भावित साधनों तथा कार्य लक्ष्यों से सम्बन्धित मूल्यों की प्राथमिकताओं का स्पष्ट चित्रण।
2. उस सामाजिक समस्या का उचित निदान जिस पर कार्य करने की आवश्यकता है।

   प्रचलित सामाजिक मूल्यों के साथ प्रक्रिया प्रारूप जिसका उपयोग समाधान के लिये किया जा रहा है, की अनुरूपता का निर्धारण करना।
3. उपलब्ध ज्ञान का अवलोकन (उपलब्ध सभी सम्बन्धित तथ्यों का वर्तमान समस्या के सन्दर्भ में अध्ययन)।
4. अध्ययन के आधार पर योजना का प्रस्तुतीकरण।
5. सम्भावित परिणामों का अवलोकन
6. सम्पूर्ण कार्यान्वयन प्रक्रिया का मूल्यांकन

5.8 सामाजिक नियोजन के प्रकार्य (Functions of Social Planning)

सामाजिक नियोजन का प्रमुख प्रकार्य आर्थिक विकास की निरन्तर वृद्धि हेतु आवश्यक सामाजिक निवेशों को उपलब्ध कराना है ताकि मानव समाज द्वारा ही उत्पन्न किये गये ये सामाजिक निवेश जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में सक्रिय रूप से सहायक सिद्ध हो सकें। साथ ही साथ इसका यह कार्य भी है कि सामाजिक एवं आर्थिक कारकों के बीच इच्छित समन्वय हो सके ताकि विकास की प्रक्रिया तेजी से चलाई जा सके। इनके अतिरिक्त सामाजिक नियोजन के विशिष्ट कार्य निम्नलिखित हैं:-

सामाजिक नियोजन के प्रकार्य

सामाजिक नियोजन के प्रमुख प्रकार्य निम्नलिखित हैं:

1. संरचनात्मक परिवर्तन तथा समाज सुधार की गति को तीव्र करना ताकि विकास का प्रतिफल समाज के विभिन्न वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो सके।
2. विकास से सम्बन्धित योजनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए संस्थागत तथा प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना।
3. विकास के लक्ष्यों को निर्धारित करने से सम्बन्धित निर्णय प्रक्रिया में समुदाय को रचनात्मक रूप से सम्मिलित करना।
4. उत्पादन एवं उत्पादकता को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए समुदाय को प्रेरित करना।
5. विकास हेतु स्थानीय शक्तियों, स्त्रोतों तथा ज्ञान का अद्दिकाद्दिक उपयोग करना।
6. समुदाय में रोजगार के अवसरों की वृद्धि हेतु उचित तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराना ताकि निर्धन वर्ग अधिक से अधिक लाभान्वित हो सके।

7. समुदाय,विशेष रूप से निर्धन वर्ग, को लाभकारी योजनाओं तथा कार्यक्रमों में भागीदारी के लिए प्रेरित करना, तथा निर्णय लेने, लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करने तथा कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप होने वाले लाभों से लाभान्वित कराना।
8. समुदाय,विशेष कर पिछड़े वर्ग, को स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल तथा उत्पादन एवं कार्य क्षमता के स्तर को बढ़ाने के लिएविशेष अवसर प्रदान करना और इसके लिए आवश्यक प्रशिक्षण उपलब्ध कराना।
9. संतुलित नगरीय-ग्रामीण सम्बन्धों द्वारा जनसंख्या का समुचित वितरण प्रारूप प्रदान करना। ऐसी स्थिति उत्पन्न करना जिससे ग्रामीण जनसंख्या का नगर की ओर आने का प्रयास न्यूनतम हो सके।
10. विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिए पर्यावरण का समुचित किन्तु सावधानीपूर्वक प्रयोग करना।
11. सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज की आर्थिक उन्नति के साथ-साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, कार्यक्षमता, सांस्कृतिक उन्नति, जीवन स्तर में सुधार, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का विकास भी महत्वपूर्ण है।
12. विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए स्थानीय स्रोत एवं ऊर्जा का प्रबन्ध करना तथा आन्तरिक प्रेरणा को सुदृढ़ बनाना।
13. वास्तव में सम्बन्धित व्यक्तियों के लाभ हेतु कल्याणकारी योजनाओं का निर्धारण करना।
14. जन संगठन तथा सरकारी संस्थाओं के बीच अधिक से अधिक कार्यात्मक सम्बन्ध बढ़ाने का प्रयास करना।
15. सामाजिक विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत आर्थिक एवं स्थानिक नियोजन को एकीकृत करना।
16. आत्म-निर्भरता की दृष्टि से विकास की प्रक्रिया का इस प्रकार कार्यान्वयन करना ताकि नियोजन, कार्यान्वयन, मूल्याँकन इत्यादि सभी स्तरों पर जन सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा सके।
17. व्यवस्था का कार्यान्वयन इस प्रकार करना ताकि स्थानीय विकास एवं उच्च स्तरीय प्रयासों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सके।

5.9 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त (Theories of Social planning)

सामाजिक नियोजन के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :-

बचत वृद्धि-पूँजी सृजन का सिद्धान्त

प्रायः पूँजी अधिक होने पर ही योजनायें उचित रूप से कार्यान्वित हो पाती हैं तथा लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। अतः नीतियों का निर्धारण एवं कार्यान्वयन अधिक बचत के दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।

प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

उत्पादन हेतु प्राकृतिक संसाधनों का नियोजित रूप से तथा सावधानीपूर्वक उपयोग करने के साथ साथ उन्हें बढ़ाने तथा सुरक्षित रखने का प्रयास भी किया जाना चाहिए।

निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के समन्वय का सिद्धान्त

नियोजन की सफलता निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र मे समन्वय पर निर्भर करती है। अल्प विकसित राष्ट्रों में इस समन्वय का अभाव होता है।

समय के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

योजना बनाते समय सभी प्रभावकारी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करते हुए प्राथमिकता स्थापित करने के पश्चात कार्यान्वयन के समय इन पर लगने वाले समय का यथार्थवादी मूल्यांकन करते हुये समय की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए। निश्चित समय की रूपरेखा अत्यन्त आवश्यक है।

केन्द्रित किन्तु विकेन्द्रित विकास की प्राथमिकता का सिद्धान्त

पिछड़े क्षेत्रों का विकास सर्वप्रथम होना चाहिए परन्तु इन क्षेत्रों के विकास हेतु अधिक समय तथा पूँजी की आवश्यकता होती है जो केन्द्र सरकार के पास सर्वाधिक उपलब्ध होती है। अतः सामाजिक नियोजन की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी होगा कि देश में पिछड़े हुये क्षेत्रों के विकास का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर ग्रहण किया जाय।

लचीलेपन का सिद्धान्त

सामाजिक-साँस्कृतिक परिवेश एवं भौतिक पर्यावरण के भिन्न होने के कारण योजना के कार्यान्वयन के स्तर पर एक ही रणनीति अथवा प्रणाली सदैव प्रभावपूर्ण सिद्ध नहीं होती। अतः यह आवश्यक है कि योजना लचीली हो ताकि परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार इसमें आवश्यक संशोधन किये जा सकें।

संसाधनों के आवंटन का सिद्धान्त

नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों की आवश्यकता होती है। अतः योजना के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए इनकी आवश्यकताओं के अनुरूप संसाधनों का आवंटन किया जाना चाहिए।

जनसहभागिता के महत्व का सिद्धान्त

किसी भी सरकार के पास इतने तथा ऐसे संसाधन नहीं होते कि वह योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन सम्बन्धी विभिन्न आवश्यकताओं की संतोषजनक पूर्ति केवल सरकारी तंत्र का प्रयोग करते हुए कर सके। अतः जन सहभागिता एवं जन सहयोग आवश्यक हो जाते हैं।

समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन का सिद्धान्त

मूल्यांकन किसी भी कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है। योजना के समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन से यह पता चलता है कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है, इनकी प्राप्ति के लिए निर्धारित साधन कहाँ तक उपयोगी हो रहे हैं| उद्देश्यों की प्राप्ति के मार्ग में क्या व्यवधान, यदि कोई हों, आ रहे हैं तथा इन्हें किस प्रकार दूर किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्यांकन वह आधार प्रदान करता है जिसकी पृष्ठभूमि में योजना में संशोधन किये जाने की आवश्यकता होती है।

5.10 सामाजिक नियोजन के प्रकार (Types of Social Planning)

भौतिक नियोजन

जब नियोजन के लक्ष्यों उपलब्ध भौतिक संसाधनों को ध्यान में रखते हुए भौतिक वस्तुओं के रूप में व्यक्त किया जाता है तो उसे भौतिक नियोजन के नाम से जाना जाता है। यथा निर्मित किये जाने वाले मार्ग की लम्बाई, विद्यालयों, चिकित्सालयों इत्यादि की संख्या।

वित्तीय नियोजन

वित्तीय नियोजन के अन्तर्गत सम्पूर्ण योजना तथा इसके विभिन्न मदों पर एक निश्चित मात्रा में व्यय करने का लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। उदाहरणार्थ, मार्ग निर्माण पर व्यय, शैक्षिक संस्थाओं पर व्यय, चिकित्सालय स्थापना पर व्यय इत्यादि। मूलतः यह व्यय कितना तथा किस रूप में होना है। यह वित्तीय नियोजन का महत्वपूर्ण पक्ष है। वित्तीय नियोजन का महत्व मुद्रा विस्फीति या अवस्फीति काल में होता है। संसाधनों के मूल्य बढ़ने से भौतिक लक्ष्यों की उपलब्धता में अभाव उत्पन्न होता है।

भौतिक तथा वित्तीय नियोजन परस्पर आश्रित हैं। संसाधनों की वृद्धि अथवा ह्रास के परिणामस्वरूप भौतिक लक्ष्यों में समयानुसार परिमाणात्मक परिवर्तन (वृद्धि अथवा कमी) किया जाता है। यदि भौतिक लक्ष्य अधिक प्रभावपूर्ण होते हैं तो अतिरिक्त वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था की जाती है।अल्प विकसित राष्ट्रों में इन दोनों प्रकारों में समन्वय प्रायः दुष्कर होता है। अतः नियोजन सामान्यतया सफल नहीं हो पाता है।

संरचनात्मक नियोजन

संरचनात्मक नियोजन में समाज की सम्पूर्ण संरचना में परिवर्तन लाने तथा नये सामाजिक-आर्थिक ढ़ाँचे के निर्माण का प्रारूप प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। नवीन पद्धतियों का विकास करते हुये इनका प्रायोगात्मक परीक्षण किया जाता है और इसके परिणामस्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक व्यवहार के नये आयाम स्थापित होते हैं तथा परम्परागत पद्धतियाँ एवं व्यवस्थायें समाप्त होती हैं। नियोजन के इस प्रारूप को क्रांतिकारी नियोजन भी कहते हैं।

प्रकार्यात्मक नियोजन

प्रकार्यात्मक नियोजन में वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन न कर उन रिक्तियों एवं अभावों को दूर करने का प्रयास किया जाता है जो विकास में बाधक होते हैं।

संरचनात्मक नियोजन तथा प्रकार्यात्मक नियोजन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दीर्घकालीन कार्यान्वयन के उपरान्त संरचनात्मक नियोजन स्वतः प्रकार्यात्मक नियोजन का रूप धारण कर लेता है । वस्तुतः सामाजिक संरचना में किये गये परिवर्तन के पश्चात मात्र सुधारों की आवश्यकता होती है। सोवियत संघ तथा चीन में सर्वप्रथम सरंचनात्मक नियोजन प्रारम्भ किया गया। तथापि, व्यवस्था में विद्यमान कुरीतियों एवं अभावों को धीरे-धीरे समाप्त करने के लिए प्रकार्यात्मक नियोजन का सहारा लिया गया।

सुधारात्मक नियोजन

सुधारात्मक नियोजन,विशेष रूप से विकसित राष्ट्र अथवा पूँजीवादी राष्ट्रो द्वारा अधिकांशतः अपनाया जाता हैं। जब कभी इन राष्ट्रों की विकास की प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न होता है तो ये सुधारात्मक नियोजन द्वारा इसे समाप्त करने का प्रयास करते हैं। सुधारात्मक नियोजन के अन्तर्गत निजी उत्पादकों एवं विनियोजकों को सहायता तथा निदेशन प्रदान किया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर नियंत्रण किया जाता है। इस नियोजन का लक्ष्य आर्थिक अस्थिरता को दूर करना होता है, किन्तु राज्य अर्थव्यवस्था में आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप नहीं करता।

विकासात्मक नियोजन

विकासात्मक नियोजन की आवश्यकता प्रायः विकसित देशों में होती है। इसके अन्तर्गत भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक उन्नति का प्रयास किया जाता है। वास्तव में, आवश्यकता पड़ने पर समयानुसार आर्थिक ढ़ाँचे के साथ-साथ सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक एवं विविध संरचनाओं में भी विशेष परिवर्तन किये जाते हैं। नियोजनकर्ता सर्वप्रथम राष्ट्र के प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण करते हैं। उसके बाद उनके उपयोग के लिए लागत का अनुमान लगाते हैं। पुनः संसाधनों के उपयोग में वरीयता निर्धारित करते हैं। तदुपरान्त सम्पूर्ण राष्ट्र के संतुलित विकास हेतु दीर्घकालीन योजना प्रस्तुत करते हैं। पुनः उसे अल्पकालीन योजनाओं में विभाजित करते हैं। तत्पश्चात् योजना को कार्यान्वित करते हैं। ऐसी योजना में लचीलापन आवश्यक होता है ताकि परिस्थिति में आवश्यकताओं के अनुसार अपेक्षित परिवर्तन किये जा सकें।

विकास नियोजन कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात आदि विविध पक्षों का विकास करता है। रोजगार के अवसरों में वृद्धि, जीवन-स्तर का निरन्तर उन्नयन तथा प्राकृतिक संसाधनों का सर्वाद्दिक उपयुक्त उपयोग ही विकास नियोजन का मुख्य ध्येय है। विकास नियोजन के परिणामस्वरूप राष्ट्र के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि अवश्यंभावी हो जाती है।

प्रजातांत्रिक नियोजन

प्रजातांत्रिक नियोजन का आधार जन सहभागिता एवं जन सहयोग है। यह नियोजन निम्न स्तर से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार के नियोजन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि राष्ट्र की जनसंख्या कितनी शिक्षित, जागरूक एवं अनुशासित है। फ्रांस में प्रजातांत्रिक नियोजन की सफलता का यही रहस्य है। इस प्रकार नियोजन की प्रक्रिया में तथा निजी क्षेत्र के प्रतिद्वन्दी के रूप में कार्य न कर उसके पूरक के रूप मे कार्य करता है।

तानाशाही नियोजन

तानाशाही नियोजन जिसे फासिस्ट नियोजन के नाम से भी जाना जाता है, में उत्पादन के सभी अंगों का राष्ट्रीयकरण हो जाता है तथा निजी क्षेत्र में केवल अधिकृत सीमित सम्पत्ति रह जाती हैं। उत्पादन, उपभोग, विनिमय तथा वितरण सभी पर राज्य का अद्दिकार रहता है। एक केन्द्रीय नियोजन समिति योजना के लक्ष्य निर्धारित करती है। योजना का कार्य काल निश्चित समय के लिए होता है। इस नियोजन में निर्धारित मानदण्डों का दृढ़ता से अनुपालन किया जाता है। आर्थिक क्रिया-कलापों से अर्जित सम्पूर्ण लाभ राज्य को प्राप्त होता है।

5.11. सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण कारक (Responsible factors for Social Planning)

सामाजिक नियोजन की प्रभावपूर्णता तथा उपयुक्तता को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं:-

राजनीतिक इच्छा

सम्पूर्ण सामाजिक नियोजन अंतिम रूप से राज्य द्वारा किया जाता है। इसलिये राजनीतिक इच्छा का पाया जाना आवश्यक है।

संस्थागत विकास

सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त सामाजिक संस्थाओं का पाया जाना आवश्यक है। इसे भी सामाजिक विकास का अंग माना जाना चाहिए। संस्थाओं का स्वस्थ विकास व्यक्तियों को विकास कार्यक्रमों में भाग लेने तथा लाभ उठाने के अवसर प्रदान करता है।

स्थानीय संसाधनों का उपयोग

स्थानीय संसाधनों को गतिशील बनाकर उनका अधिकतम उपयोग करते हुए ही प्रभावपूर्ण सामाजिक योजना बनायी एवं कार्यान्वित की जा सकती है।

भूमिकाओं एवं प्रविधियों की स्पष्टता

जब तक सामाजिक योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन से सम्बन्धित विभिन्न व्यक्तियों की भूमिकाओं तथा इसमें प्रयोग में लायी जाने वाली प्रविधियाँ स्पष्ट नहीं होगीं तब तक सामाजिक नियोजन प्रभावपूर्ण नहीं होगा।

ऐच्छिक एवं सरकारी संस्थाओं में स्पष्ट विभेद

सामाजिक नियोजन के निर्माण एवं कार्यान्वयन में स्वैच्छिक एवं सरकारी दोनों प्रकार की संस्थायें अपनी-अपनी भूमिका प्रतिपादित करती हैं। इसलिए जनता को इनके द्वारा प्रतिपादित भूमिकाओं एवं प्रयुक्त प्रविधियों की स्पष्ट जानकारी अवश्य होनी चाहिए ताकि इनका समुचित मूल्यांकन किया जा सके।

स्थानीय प्रबन्ध तथा आत्म निपुणतायें

सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन हेतु यह आवश्यक है कि अपेक्षित विभिन्न प्रकार की सामाजिक संस्थाओं का विकास एवं प्रबन्ध स्थानीय स्तर पर किया जाये और ये सामाजिक संस्थायें ऐसी निपुणताओं का स्वतः विकास कर सकें जो इनकी प्रभावपूर्ण क्रिया में सहायक सिद्ध हो सके।

जन संवेदनशीलता

यदि समाज में रहने वाले लोग विभिन्न महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं के प्रति जागरूक हैं तो सामाजिक नियोजन का प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन प्रभावपूर्ण होगा।

5.12 सफल सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तें (Required Conditions of Success Social Planning)

सामाजिक नियोजन की सफलता के लिए निम्नलिखित शर्तें आवश्यक हैं:-

वास्तविक और विस्तृत आँकड़ों की उपलब्धता

योजना बनाने का कार्य आरम्भ करने के पूर्व विभिन्न सामाजिक आर्थिक क्षेत्रों से सम्बन्धित वास्तविक एवं विस्तृत आँकड़े उपलब्ध होने चाहिए। बचत, पूंजी निर्माण, उत्पादन, उत्पादकता, रोजगार, बेरोजगारी, लागत, रहन-सहन, आदतों, स्वास्थ्य-स्तर, शैक्षिक उपलब्दियों, मनोवृत्तियों, मूल्यों, विश्वासों इत्यादि से सम्बन्धित विस्तृत एवं यथार्थ सूचना उपलब्ध होनी चाहिए।

नियोजन के क्रमिक चरणों का समुचित उपयोग

नियोजन के 4 चरण हैं: योजना का निर्धारण, योजना का स्वीकृतिकरण, योजना का कार्यान्वयन तथा योजना का मूल्याँकन। इन सभी चरणों का क्रमानुसार अनुपालन किया जाना आवश्यक है।

प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण

विकासशील राष्ट्रों में सामान्यतया आवश्यकतायें अधिक तथा संसाधन सीमित होते हैं। अतः लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाना आवश्यक होता है।

उचित राजनीतिक निदेशन

किसी भी प्रजातांत्रिक देश में नियोजन की सफलता ईमानदार, कत्र्तव्यनिष्ठ तथा उत्साही राजनेताओं पर निर्भर करती है। अतः यह आवश्यक है कि सामाजिक नियोजन के क्षेत्र में राजनेता समुचित मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन प्रदान करें।

उचित प्रलोभन

योजनाओं के सफल संचालन हेतु सामाजिक तथा आर्थिक दोनों क्षेत्रों में योग्य, कुशल एवं कार्यकर्ताओं कर्तव्यनिष्ठ को समय-समय पर उचित पारितोषिक एवं प्रलोभन प्रदान किया जाना चाहिए तथा कार्यान्वयन का दायित्व निर्धारित करने की व्यवस्था का विकास कर अयोग्य, अकुशल एवं भ्रष्ट कार्यकर्ताओं को उदाहरणस्वरूप दण्ड भी दिया जाना चाहिए।

जन सहयोग की प्राप्ति

सामाजिक नियोजन तभी सफल हो सकता है जब जन सहयोग अधिक से अधिक उपलब्ध हो क्योंकि जन सहयोग के उपलब्ध होने पर ही लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं का सही पता चल सकता है और इनके कार्यान्वयन में जन सहभागिता हो सकती है।

समानता पर बल

सामाजिक नियोजन का अंतिम उद्देश्य समाज में यथासम्भव अधिक से अधिक सामाजिक तथा आर्थिक समानता उत्पन्न करना है। समानता लाने के लिए निर्बल एवं शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के उत्थान पर अधिक बल देने की आवश्यकता होती है और इसके लिए

कुछ विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करते हुए इन वर्गों कोविशेष प्रकार की सहायता प्रदान किया जाना आवश्यक होता है।

वैकल्पिक व्यवस्थाओं की अनिवार्यता

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत निर्धारित किये गये उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु वैकल्पिक व्यवस्थाओं, रणनीतियों एवं साधनों को उपलब्द्द होना चाहिए ताकि एक के असफल होने पर अन्य विकल्प को प्रयोग में लाया जा सके।

अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन लक्ष्यों का निर्धारण

सामाजिक नियोजन के लक्ष्य अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन दोनों प्रकार के होने चाहिए। अल्पकालीन लक्ष्य अनुभव की गयी आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक सिद्ध होते हैं तथा दीर्घकालीन लक्ष्य भावी विकास के लिए अपेक्षित संदर्भ प्रदान करते हुये प्रारम्भ की गई क्रिया एवं उपलब्धि की निरन्तरता को बनाये रखते हैं।

योजना का प्रचार एवं प्रसार

योजना के स्वरूप, कार्यान्वयन की रणनीति तथा प्रगति इत्यादि की जानकारी प्रचार-प्रसार के माध्यम से समान्य वर्गों को प्राप्त होती रहनी चाहिए ताकि अपेक्षित जन सहयोग प्राप्त होता रहे और जन सहभागिता के माध्यम से योजना को सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जा सके।

5.13 सफल नियोजन हेतु महत्वपूर्ण तत्व (Important Components for Success Social Planning)

नियोजन की प्रक्रिया एक सम्पूर्ण प्रक्रिया है। इससे सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं के नाना प्रकार के तत्वों में आवश्यक अन्तर्सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए एकीकृत योजना बनायी जानी चाहिए। न केवल सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन को एक दूसरे के पूरक के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए बल्कि इनके विभिन्न तत्वों को भी एक दूसरे पर निर्भर मानते हुए योजना का निर्माण एवं कार्यान्वयन किया जाना चाहिये। सफल नियोजन के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण तत्वों को ध्यान में रखा जाना चाहियें:-

1. योजना के कार्यान्वयन सम्बन्धी पहलू पर विशेष ध्यान देते हुए योजना का निर्माण किया जाना चाहिये।
2. योजना का निर्माण गाँव/शहर के मुहल्ले को इकाई मानकर स्थानीय स्तर पर किया जाना चाहिये।
3. योजना के निर्माण तथा कार्यान्वयन में अधिक से अधिक जन सहयोग लिया जाना चाहिये ताकि अनुभूत आवश्यकताओं का परावर्तन हो सके और योजना यथार्थवादी बन सके।
4. योजना के अधीन किसी भी कार्यक्रम को प्रारम्भ करने के पूर्व इससे सम्बन्धित लक्ष्य समूहों को इसकी जानकारी करायी जानी चाहिये।

5. योजना के निर्माण तथा कार्यान्वयन से सम्बन्धित ढंग एवं कार्यरीतियाँ सरल एवं स्पष्ट और अगोपनीय होनी चाहिये।
6. योजना का मसौदा न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य की भी आवश्यकताओं एवं समस्याओं से सम्बन्धित होना चाहिये।
7. योजना के लक्ष्यों का निर्धारण यथार्थवादी होना चाहिये। उन लक्ष्यों के सम्बन्ध में इनसे सम्बन्धित कर्मचारियों को छूट प्रदान की जानी चाहिये जो प्रत्यक्ष रूप से लोगों की स्वीकृति से सम्बद्ध हों यथा, परिवार नियोजन के अधीन बन्ध्याकरण सम्बन्धी लक्ष्य। लक्ष्यों को स्वयं में अन्तिम उद्देश्य न मानकर इनके माध्यम से लक्ष्य समूहों को होने वाले लाभों को अन्तिम उद्देश्यों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिये।
8. नियोजन की प्रक्रिया में स्थानीय लोगों, संस्थाओं तथा सम्बन्धित सरकारी तंत्र से सम्बद्ध कर्मचारियों के अतिरिक्तविशेषज्ञों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिये।
9. योजना का निर्माण करने तथा इसके कार्यान्वयन के लिये उत्तरदायी सरकारी तंत्र में समय-समय पर सक्रिय रूप से विचार विमर्श होते रहना चाहिये; और कार्यान्वयन से सम्बन्धित कार्यकर्ताओं द्वारा दिये गये परामर्शों को सापेक्षतया अधिक महत्व प्रदान किया जाना चाहिये।
10. योजना का निर्माण करते समय लोगों की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखा जाना चाहिये।
11. योजना में समाहित की जाने वाली प्रविधियों को स्थानीय आवश्यकताओं एवं समस्याओं के अनुरूप होना चाहिये।
12. नियोजन के लिये प्रसार प्रविधि को अपनाते हुयेविशेष प्रकार की शोधशालाओं की स्थापना की जानी चाहिये।

4.14 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु उनकी विविध प्रकार की अवश्यकताओं एवं समाज में उपलब्ध विविध प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामन्जस्य स्थापित करती है।

5.15 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

1 सामाजिक नियोजन से आप क्या समझते हैं?

2 सामाजिक नियोजन के महत्व पर प्रकाश डालिए।

3 सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

4 सामाजिक नियोजन के प्रकार्यो से आप क्या समझते हैं?

5 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्तों पर प्रकाश डालिए।

5 सामाजिक नियोजन के प्रकारो का वर्णन कीजिए।

7 सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तों को स्पष्ट कीजिए।

5.16 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

- Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
- Singh, S., Mishra, P.k. D.k.and Singh, A.k. N.k. Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
- Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
- Agnihotri, I.k. and Awasthi, A.k. Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.
- Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig
- k. Gokhle, S.k. D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.
- Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.
- Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

इकाई - 6

सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन: विभिन्नताएँ एवं समानताएँ

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 सामाजिक नियोजन: अवधारणात्मक व्याख्या

.6.3 आर्थिक नियोजन:परिभाषाएं, उद्देश्य

6.4 सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.8 संदर्भ ग्रन्थ

6.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- सामाजिक नियोजन की अवधारणा को समझ पांएगे
- आर्थिक नियोजन के अर्थ एवं उद्देश्य को जान पाएंगे
- सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन सम्बन्ध को जान पांएगे

6.1 प्रस्तावना

नियोजन का सामान्य शब्दों में आशय भविष्य में किये जाने वाले कार्यो का पूर्व निर्धारण करने से होता है। सामाजिक नियोजन की जब बात करतें हैं तो किसी देश के सामाजिक विकास हेतु सामाजिक क्षेत्र में किये जाने वाले कार्यो व प्रयासों के पूर्व निर्धारण से होता है। भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय के पहले ही विभिन्न सामाजिक समस्याएँ विद्यमान थीं। भारत सरकार ने स्थिति में सुधार लाने हेतु कई विकास कार्यक्रम आरम्भ किये। प्रारम्भ में भारत सरकार का ध्यान देश के आर्थिक विकास पर था किन्तु धीरे-धीरे इस बात की आवश्यकता महसूस होने लगी कि आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक विकास भी आवश्यक है। इस बात को स्वीकार करते हुए देश के सामाजिक क्षेत्र के विकास हेतु सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु सामाजिक नियोजन पर ध्यान दिया जाने लगा।

6.2 सामाजिक नियोजन: अवधारणात्मक व्याख्या

समाजिक नियोजन का सम्बन्ध स्पष्टतः सामाजिक सेवाओं से है। अत्यन्त व्यापक अर्थ में तो समस्त सेवाएँ सामाजिक सेवाएँ हैं। आर्थिक विकास के लिये राज्य द्वारा जो कुछ भी किया जाता है वह अन्ततः समाज के कल्याण एवं खुशहाली के लिए ही किया जाता है। इतने पर भी ये सेवाएँ अप्रत्यक्ष रूप से समाज को लाभान्वित करती हैं। प्रत्यक्षतः समाज सेवा वह है जिसमें सामाजिक समस्याओं का सामाजिक पहलुओं की दृष्टि से निराकरण किया जाता है। इस दृष्टि से स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रम कल्याण, आवास व्यवस्था, समाज कल्याण, पिछड़े वर्गों का कल्याण, विस्थापितों का पुनर्वास आदि विषय सामाजिक सेवा के आवश्यक अंग कहे जा सकतें हैं। स्पष्ट है कि समाज सेवाओं का क्षेत्र काफी व्यापक है तथा इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण समाज से है। समाज के सभी वर्गों तथा व्यक्तियों की हित साधना का लक्ष्य लेकर सम्पन्न की जाती है। समाज सेवाओं की यह विशेषता समाज कल्याण सेवाओं के अतिरिक्त विषयों पर भी लागू होती है।

समाज कल्याण सेवाओं का सम्बन्ध विशेष व्यक्तियों तथा समूहों की विशेष आवश्यकताओं से रहता है। ये व्यक्ति अथवा समूह किसी न किसी सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक अथवा मानसिक विध्न से ग्रस्त रहते हैं अतः वे समाज द्वारा प्रदत्त सुविधाओं तथा सेवाओं से न तो लाभान्वित हो पाते हैं और न ही उनको लाभान्वित होने दिया जाता है। इस प्रकार समाज कल्याण सेवाएँ समाज के कमजोर, आश्रित या अधिकारहीन वर्ग, जैसे- बालक, विकलांग, अछुत, पिछड़े वर्ग आदि से सम्बन्ध रखती है। इन सेवाओं से लाभान्वित होने वाले लोग शारीरिक दृष्टि से विकलांग हो सकते हैं, जैसे- अन्धे, गूँगे, लँगड़े, बहरे आदि। ये सामाजिक रूप से आश्रित हो सकते हैं, जैसे- विधवा, अनाथ, अनाश्रित आदि। ये मानसिक रूप से पागल तथा आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के लोग हो सकते हैं। इन विशेष वर्गों के लोग जन-शिक्षा, जन-स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में दी जाने वाली सामान्य सेवाओं का लाभ नहीं उठा पाते अतः इनके कल्याण हेतु विशेष सेवाएँ सम्पन्न की जाती है। भारतीय संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों एवं राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में इन वर्गों के हितों की रक्षा का दायित्व राज्य पर डाला गया है। राज्य अपने इस दायित्व को पूरा करते हुए विभिन्न कार्यक्रम संचालित करता है। समाज कल्याण सेवाओं की परिधि में मुख्यतः ये सेवाएँ शामिल की जाती है- महिलाओं एवं शिशुओं का कल्याण, शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांग लोगों का कल्याण युवा कल्याण, गन्दी बस्तियों में कल्याणकारी सेवाएँ, श्रम कल्याण, सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम, पिछड़े वर्गों का कल्याण, विस्थापित लोगों के लिए सामाजिक सेवाएँ आदि।

6.2.1 सामाजिक नियोजन अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक नियोजन किसी भी रूप में किया गया ऐसा नियोजन है जो सामाजिक व्यवस्था या उसकी अन्तर्सम्बन्धित उपव्यवस्थाओं में पूर्ण या आंशिक रूप से एक निश्चित दिशा में अपेक्षित परिवर्तन लाने के एक चेतन एवं संगठित प्रयास का परावर्तन करता है। नियोजन का उद्देश्य एक निश्चित दिशा में परिवर्तन लाने के लिए योजना का निर्माण करना है।

पण्डित जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में "नियोजन न केवल कार्यसूची बना लेना है और न ही यह एक राजनीतिक आदर्शवाद है, वरन् नियोजन एक बुद्धिमत्तापूर्ण, विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक पद्धति है

जिसके अनुसार हम अपने आर्थिक तथा सामाजिक उद्देश्यों को निर्धारित एवं प्राप्त करतें हैं। स्पष्ट है नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।"

भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव मानव जीवन पर अधिक पड़ता है। भौतिक संसाधनों के उपयोग के बिना पर्यावरण में सुधार करना सम्भव नहीं है। भौतिक तथा सामाजिक दशाएँ एक दूसरे की पूरक हैं। यद्यपि आज सामाजिक तत्त्वों को भी भौतिक तत्त्वों के रूप में देखा जाने लगा है, परन्तु वास्तविकता यह है कि भौतिक कारकों का स्वयं अपने में कोई महत्त्व नहीं है। समाज अपने दृष्टिकोणों, विचारों तथा महत्त्व के आधार पर उनका अर्थ निर्धारित करता है।

एन. बी. सोवानी के अनुसार "सामाजिक नियोजन भूमि सुधार, असमानता में कमीं, आय का साम्यपूर्ण वितरण, लोगों तथा क्षेत्रों में कल्याण एवं समाज-सेवाओं के विस्तार, अधिक सेवायोजन तथा मात्र एक दूसरे से जुड़ी हुई नहीं प्रत्युत एकीकृत योजनाओं एवं नीतियों इत्यादि की एक प्रक्रिया है।"

ए. ज. कान्ह के अनुसार "सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत वैयक्तिक और सामुहिक विकास एवं जीवनयापन के लिए गारण्टीयुक्त न्यूनतम संसाधनों के कार्यान्वयन एवं अपने सदस्यों के लिए अपनी अभिलाषाओं एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समाज के प्रयास समाहित हैं।"

समाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु उनकी विविध प्रकार की आवश्यकताओं एवं समाज में उपलब्ध विविध प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामन्जस्य स्थापित करती है।

6.2.2 सामाजिक नियोजन विशेषताएँ एवं सिद्धान्त

समाजिक नियोजन की सामान्यता निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. सामाजिक विषमता पर केन्द्रित
2. सामाजिक समस्याओं का निराकरण
3. संसाधनों का सदुपयोग
4. समाजिक समानता लाना
5. आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धि
6. संसाधनों का समुचित वितरण
7. तार्किकता एवं क्रमबद्धता
8. निश्चित लक्ष्य एवं उद्देश्य
9. रणनीतियों का प्रयोग
10. सूचकों पर केन्द्रित
11. गुणात्मक एवं परिणात्मक परिणाम
12. कल्याणकारी राज्य की स्थापना की भावना
13. संसाधनों का उचित वितरण

14. उत्पादन एवं उत्पादकता वृद्धि

15. सामाजिक न्याय की व्यवस्था करना

सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त

समाजिक नियोजन के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित है-

1. बचत वृद्धि-सृजन का सिद्धान्त

प्रायः पूँजी अधिक होने पर ही योजनायें उचित रूप से कार्यान्वित हो पाती है तथा लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। अतः नीतियों का निर्धारण एवं कार्यान्वयन अधिक बचत के दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।

2. प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

उत्पादन हेतु प्राकृतिक संसाधनों का नियोजित रूप से तथा सावधानीपूर्वक उपयोग करने के साथ-साथ उन्हें बढ़ाने तथा सुरक्षित रखने का प्रयास भी किया जाना चाहिए।

3. निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के समन्वय का सिद्धान्त

नियोजन की सफलता निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र में समन्वय पर निर्भर करती है। अल्प विकसित राष्ट्रों में इस समन्वय का अभाव होता है।

4. समय के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

योजना बनाते समय सभी प्रभावकारी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करते हुए प्राथमिकता स्थापित करने के पश्चात कार्यान्वयन के समय इन पर लगने वाले समय का यथार्थवादी मूल्यांकन करते हुए समय की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए।निश्चित समय की रूपरेखा अत्यन्त आवश्यक है।

5. केन्द्रित किन्तु विकेन्द्रित विकास की प्राथमिकता का सिद्धान्त

पिछड़े क्षेत्रों का विकास सर्वप्रथम होना चाहिए परन्तु इन क्षेत्रों के विकास हेतु अधिक समय तथा पूँजी की आवश्यकता होती है जो केन्द्र सरकार के पास सर्वाधिक उपलब्ध होती है। अतः सामाजिक नियोजन की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी होगा कि देश में पिछड़े हुये क्षेत्रों के विकास का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर ग्रहण किया जाये ।

6. लचीलेपन का सिद्धान्त

सामाजिक-साँस्कृतिक परिवेश एवं भौतिक पर्यावरण के भिन्न होने के कारण योजना के कार्यान्वयन के स्तर पर एक ही रणनीति अथवा प्रणाली सदैव प्रभावपूर्ण सिद्ध नहीं होती। अतः यह आवश्यक है कि योजना लचीली हो ताकि परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार इसमें आवश्यक संशोधन किये जा सकें।

7. संसाधनों के आंवटन का सिद्धान्त

नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों की आवश्यकता होती है। अतः योजना के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए इनकी आवश्यकताओं के अनुरूप संसाधनों का आवंटन किया जाना चाहिए।

8. जनसहभागिता के महत्त्व का सिद्धान्त

किसी भी सरकार के पास इतने तथा ऐसे संसाधन नहीं होते कि वह योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन सम्बन्धी विभिन्न आवश्यकताओं की संतोषजनक पूर्ति केवल सरकारी तंत्र का प्रयोग करते हुए कर सके। अतः जन सहभागिता एवं जन सहयोग आवश्यक हो जाते हैं।

9. समुचित एवं सामयिकमूल्यांकन का सिद्धान्त

मूल्यांकन किसी भी कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है। योजना के समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन से यह पता चलता है कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है, इनकी प्राप्ति के लिए निर्धारित साधन कहाँ तक उपयोगी हो रहें हैं, उद्देश्यों की प्राप्ति के मार्ग में क्या व्यवधान, यदि कोई हो, आ रहे हैं तथा इन्हें किस प्राकर दूर किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्यांकन वह आधार प्रदान करता है जिसकी पृष्ठभूमि में योजना में संशोधन किये जाने की आवश्यकता होती है।

5.2.3 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य एवं कार्य

राष्ट्र के संविधान में वर्णित समाज कल्याण के लक्ष्यों को प्राप्त करना ही सामाजिक नियोजन का उद्देश्य है। भारत में ये लक्ष्य निम्नलिखित है-

1. कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना
2. सभी वर्गों, धर्म, जातियों के बालक बालिकाओं के लिए शिक्षा की व्यवस्था
3. सामाजिक संरचना की स्थापना सर्व कल्याण हेतु करना
4. सभी के उन्नत जीवन स्तर की व्यवस्था करना
5. आय तथा संसाधनों का समान वितरण करना
6. विभिन्न वर्गों में सामंजस्यता लाना
7. शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का समुचित प्रबन्ध करना
8. आर्थिक विकास में समानता
9. धर्म,भाषा, आगे बढ़ाने की स्वतन्त्रता
10. समाजिक न्याय की व्यवस्था
11. उत्पादकता में वृद्धि कर आय के साधनों को बढ़ाना
12. दुर्बल वर्ग, पिछड़े वर्ग, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति वर्ग का आर्थिक सामाजिक विकास
13. धर्म, जाति, लिंग, भाषा, नस्ल, रंग के आधार पर भेदभाव को समाप्त कर समानता लाना।

14. राष्ट्र की सामाजिक तथा आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था करना।

सामाजिक नियोजन के कार्य

सामाजिक नियोजन के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैः

(1) संरचनात्मक परिवर्तन तथा समाज सुधार की गति को तीव्र करना ताकि विकास का प्रतिफल समाज के विभिन्न वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो सके।

(2) विकास से सम्बन्धित योजनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए संस्थागत तथा प्रशासनिक व्यवस्था को सृदृढ़ बनाना।

(3) विकास के लक्ष्यों को निर्धारित करने से सम्बन्धित निर्णय प्रक्रिया में समुदाय को रचनात्मक रूप से सम्मिलित करना।

(4) उत्पादन एवं उत्पादकता को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिये समुदाय को प्रेरित करना।

(5) विकास हेतु स्थानीय शक्तियों, स्त्रोंतो तथा ज्ञान का अधिकाधिक उपयोग करना।

(6) समुदाय में रोजगार के अवसरों की वृद्धि हेतु उचित तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराना ताकि निर्धन वर्ग अधिक से अधिक लाभान्वित हो सकें।

(7) समुदाय विशेष रूप से निर्धन वर्ग को लाभकारी योजनाओं तथा कार्यक्रमों में भागीदारी के लिए प्रेरित करना तथा लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करने तथा कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप होने वाले लाभों से लाभान्वित कराना।

(8) समुदाय विशेषकर पिछड़े वर्ग को स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल तथा उत्पादन एवं कार्य क्षमता के स्तर को बढ़ाने के लिए अवसर प्रदान करना और इसके लिए आवश्यक प्रशिक्षण उपलब्ध कराना।

(9) संतुलित नगरीय-ग्रामीण सम्बन्धों द्वारा जनसंख्या का समुचित वितरण प्रारूप प्रदान करना। ऐसी स्थिति उत्पन्न करना जिससे ग्रामीण जनसंख्या का नगर की ओर आने का प्रयास न्यूनतम हो सके।

(10) विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिये पर्यावरण का समुचित किन्तु सावधानीपूर्वक प्रयोग करना।

(11) सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज की आर्थिक उन्नति के साथ-साथ स्वास्थ्य , शिक्षा, कार्यक्षमता, सांस्कृतिक उन्नति, जीवन स्तर में सुधार , वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का विकास भी महत्वपूर्ण हैं।

6.3 आर्थिक नियोजन परिभाषा एवं उद्देश्य

राबिन्स के मत में आर्थिक नियोजन उत्पादन तथा विनिमय की निजी क्रियाओं का सामूहिक नियंत्रण अथवा दमन है।

डिकिन्सन के अनुसार नियोजन का अर्थ ऐसे मुख्य आर्थिक निर्णय लेना है कि किस वस्तु का कितनी मात्रा में उत्पादन किया जाये, कब और कहाँ उत्पादन किया जाये और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के

व्यापक सर्वेक्षण के आधार पर निर्णय लेने वाले प्राधिकरण के आर्थिक आयोजन का आशय उस विधि या प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत किसी अर्थव्यवस्था का संचालन स्वतंत्र रूप से बाजार या कीमत तंत्र के आधार पर न होकर सरकार अथवा सत्ता प्राप्त केन्द्रिय आयोजन अधिकारी द्वारा निर्धारित सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रभाव पूर्ण ढंग से योजनानुसार होता है आयोजन के अन्तर्गत भावी विकास के सामाजिक उद्देश्यों को पहले निर्धारित किया जाता है और फिर एक निश्चित समय के लिए भीतर उनकी प्राप्ति के लिए विभिन्न आर्थिक कार्यकलापों का समन्वित रूप से आयोजन, प्राधिकारी द्वारा संचालन व नियमन किया जाता है। एक निश्चित अवधि अर्थव्यवस्था के लिए निम्न क्षेत्रों में क्या कुछ किया जाता है जिससे की पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता मिल सके, इसके लिए विभिन्न बातों को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग लक्ष्य निर्धारित कर लिए जाते है फिर उनको पूरा करने के लिए आवश्यक संसाधनों को जुटाने की व्यवस्था की जाती है। साथ ही जिस विधि से कार्य किया जाना है, उसे भी निश्चित किया जाता है । इस प्रकार निर्धारित कार्यक्रम या योजना को सरकार या केन्द्रिय आयोजन प्राधिकारी की देख रेख में अमल में लाने के लिए समन्वित रूप से प्रयास किया जाता है। सामन्यतः पाँच-पाँच साल के लिए योजनाएँ बनाई जाती है। क्योंकि यह अवधि न तो बहुत छोटी होती है ना ही बहुत लम्बी । जब एक योजना का समय पूरा हो जाता है तब दूसरी योजनाओं को कार्यान्वित किया जाता है। इस प्रकार पुरानी योजनाओं का स्थान नई योजनाएँ लेती रहती है और आयोजन का कार्य निरन्तर चलता रहता है। आयोजन एक निरन्तर चलने वाली क्रिया है क्योंकि इसका अन्तिम उद्देश्य आर्थिक व सामाजिक कल्याण के महान लक्ष्य को प्राप्त करना है।

आज, स्पष्ट है कि आयोजन का आशय अर्थव्यवस्था के निष्पादन में सुधार व उन्नति लाने अथवा स्वीकृत उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सरकार द्वारा किये गए व्यवस्थित तथा समन्वित प्रयासों से है। यहाँ केवल उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को ही निर्धारित नहीं किया जाता बल्कि उनकी प्राप्ति के लिए आयोजित ढंग से सतत् व सचेत प्रयास किये जाते हैं यहाँ एक बात को स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है वह यह है कि आयोजन के लिए समस्त आर्थिक क्रियाओं का राष्ट्रीयकरण अथवा निजी क्षेत्र की समाप्ति आवश्यक नहीं है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर सरकार अथवा केन्द्रिय आयोजन अधिकारी का समग्र रूप में नियंत्रण हो जिससे की निर्धारित सामाजिक उद्देश्यों की न्यायोचित समय के भीतर पूर्ति हो सके।

आर्थिक नियोजन के उद्देश्य

आर्थिक नियोजन के उद्देश्य मनुष्य के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना, आर्थिक संसाधनों का समुचित प्रयोग करते हुए उनका बहुमुखी विकास करना, सुखी एवं समृद्ध जीवन की संभावना को बढ़ाना, देश में यातायात के साधनों का समुचित प्रबन्ध करना, घरेलु उद्योगों का विकास करना, ग्रामीण जीवन को समृद्ध बनाना तथा बजारों का विस्तार करना है।

सामान्यतया, आर्थिक नियोजन के निम्नलिखित उद्देश्य है:

(1) आर्थिक उन्नति करना तथा आर्थिक संसाधनों में वृद्धि करना

(2) कम से कम लागत से अधिक से अधिक उत्पादन करना

(3) वस्तुओं, सेवाओं तथा अवसरों की माँग और पूर्ति के बीच समुचित संतुलन स्थापित करना

(4) रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना

(5) यातायात के साधनों का समुचित विकास करना

(6) घरेलु उद्योग धन्धों को प्रोत्साहित करना

(7) ग्रामीण जीवन को सुखमय एवं समृद्धिपूर्ण बनाना

(8) बाजारों का विस्तार करना

(9) निर्बल तथा शोषण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करना

(10) एकाधिकार की प्रवृति को रोकना

(11) निर्धारित किये गये लक्ष्य से कम तथा अधिक उत्पादन पर समुचित नियंत्रण लागू करना, तथा

(12) प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण एवं सावधानीपूर्वक समुचित उपयोग करना।

भारत में आर्थिक नियोजन के उद्देश्य

भारतीय संविधान के अन्तर्गत आर्थिक नियोजन के मूल उद्देश्यों का वर्णन राज्य नीति के निदेशक तत्वों के अधीन किया गया है जिनमें निम्नलिखित का उल्लेख है।

(1) ऐसी सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना जिसमें जीवन की सभी संस्थाओं में सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय व्याप्त हों।

(2) स्त्रियों तथा पुरुषों दोनों को ही जीवन निर्वाह के समान अवसरों का आश्वासन प्रदान करना।

(3) सभी लोगों के हितों को ध्यान में रखते हुए समाज के भौतिक संसाधनों के स्वामित्व एवं नियंत्रण का वितरण करना तथा

(4) अर्थव्यवस्था का निर्माण इस प्रकार करना कि धन तथा उत्पादन के संसाधनों का संकेन्द्रण न हों तथा जनसाधारण के हितों का संरक्षण हो सके।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत की आर्थिक स्थिति गंभीर थी। परम्परागत कृषि संरचना के बोझ के नीचे ग्रामवासी दबे हुए थे। चारों और निर्धनता और अभाव का बोलबाला था। उस समय एक ही उपाय शेष रह गया था कि आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया को अपनाकर परम्परागत आर्थिक संरचना में तीव्रता से परिवर्तन किया जाय ताकि लोगों को उन्नत जीवन-स्तर प्रदान किया जा सके। इसी पृष्ठभूमि में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कृषि, उद्योग, व्यवसाय, उत्पादन तथा अन्य विविध क्षेत्रों मे पहले से चली आ रही परम्परागत पद्धतियों को देश की परिस्थितियों के अनुकुल पद्धतियों द्वारा पुनस्थापित किया गया।

6.4 सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन की विभिन्नताएँ एवं समानताएँ

प्रत्येक देश का सामाजिक जीवन वहाँ के आर्थिक स्तर से प्रभावित होता है। कार्लमार्क्स ने इतिहास की आर्थिक व्याख्या करते हुए यह माना था कि जब-जब उत्पादन के साधनों में परिवर्तन होता है तभी व्यक्ति के जीवन के अन्य पहलुओं में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जाते है। किसी भी समाज के रीति-रिवाज, रहन-सहन, परम्पराएँ, विश्वास एवं समाज के घटकों के आपसी सम्बन्ध अन्तिम रूप से

आर्थिक शक्तियों द्वारा तय किये जातें है। दूसरी ओर एक देश के विभिन्न वर्गों के बीच सामंजस्य है, सभी को सामाजिक न्याय प्राप्त होता है, कोई किसी का शोषण नहीं करता है। सामाजिक समानता की स्थिति है तो निश्चय ही समाज के सभी सदस्य देश के आर्थिक विकास में अपनी पूरी क्षमताओं का प्रयोग कर सकेंगे। स्पष्ट है कि सामाजिक तथा आर्थिक जीवन एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। एक पूँजीवादी देश में सामाजिक रूप रचना, सामाजिक सम्बन्ध, समस्याएँ तथा सामाजिक मूल्य तदनुकूल होते हैं। जब अर्थव्यवस्था बदल जाती है तो इन सभी में परिवर्तन आ जाता है। सोवियत संघ में साम्यवादी क्रान्ति के बाद वहाँ की आर्थिक रूप रचना बदली तो वहाँ एक नए समाज का जन्म हुआ।

देश के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन की इस घनिष्ठता के कारण ही आर्थिक नियोजन करने वाले लोग नियोजन के सामाजिक पहलू को नहीं भुलाते। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नियोजन को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया था कि विकास की योजना के आर्थिक तथा सामाजिक पहलू घनिष्ठ रूप से आपस में सम्बन्धित है।

सुरेन्द्र सिंह के अनुसार सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन के आपसी सम्बन्ध के बारे में मुख्य बाते निम्नांकित हैं-

1. आर्थिक समस्याओं पर सामाजिक समस्याओं का प्रभाव -

समाज की अनेक बुराइयाँ आर्थिक जीवन में समस्याएँ पैदा कर देती है। यदि समाज में मूल्यों का अभाव है, दृष्टिकोण पिछड़ा हुआ है, लोग साम्यवादी मूल्यों से प्रभावित हैं, सामाजिक समानता का अभाव है तथा लोग अनावश्यक रीति-रिवाज में उलझे हुए हैं तो आर्थिक जीवन में भी अपव्यय, अनुत्पादक व्यय, आर्थिक असमानता, शोषण, भ्रष्टाचार आदि पनपने लगते हैं।

2. सामाजिक समस्याओं पर आर्थिक जीवन का प्रभाव -

समाज की अनेक समस्याएँ, जैसे- गरीबी, अज्ञानता, जनसंख्या वृद्धि तथा ग्रामीण पिछड़ेपन की समस्याएँ आदि सामान्य समस्याएँ हैं। ये अनेक आर्थिक तत्त्वों से प्रभावित होती है। असंतोषजनक गृह व्यवस्था, अनुचित पोषाहार, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की खराबी, उपेक्षित बचपन, पारिवारिक विघटन तथा रहन-सहन का निम्न स्तर आदि सभी समस्याओं के मूल में आर्थिक कारण निहित रहते है। आर्थिक अभाव व्यक्ति से करणीय तथा अकरणीय सब कुछ करा लेते हैं। अभावग्रस्त व्यक्ति के नैतिक आदर्श डिग जाते हैं, मूल्यों पर से आस्था खतम हो जाती है। वह भ्रष्ट, अनैतिक, रिश्वतखौर, असत्यवादी सब कुछ बन जाता है। आर्थिक मजबूरियाँ वेष्यावृत्ति को प्रोत्साहन देती है, समाज में भिक्षावृत्ति को पनपाती है, बाल-अपराध बढ़ते हैं तथा व्यक्तिगत एवं सामूहिक सामाजिक अन्याय को प्रोत्साहन मिलता है। लड़कियो को बेचना और खरीदना, छोटे बच्चों को भिखारी बना कर या जेबकतरा बना कर उनका शोषण करना, विवाहों में दहेज की प्रथा, बाल-विवाह एवं बेमेल विवाह की समस्या आदि सभी आर्थिक कारणों से प्रेरित तथा प्रोत्साहित होती है।

3. **आर्थिक विकास नई सामाजिक समस्याएँ पैदा करता है -**

जब देश का आर्थिक स्तर ऊँचा उठता है तथा औद्योगीकरण बढ़ता है तो इसके परिणामस्वरूप अनेक सामाजिक समस्याएँ जन्म लेती है। कृषि कार्य करने वाले मजदूर खेतों को छोड़कर फैक्ट्रियों तथा कारखानों की ओर भागते हैं। ग्रामीण जन-समुदाय शहरों की ओर उमड़ पड़ता है। शहरों में अति जनसंख्या, कीमतों में वृद्धि, ग्रामीण और शहरी मूल्यों का टकराव तथा अनेक सामाजिक अपराधों की समस्या पनपने लगती है। एक सामाजिक अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संयुक्त परिवार व्यवस्था टूट जाती है।

4. **आर्थिक विकास के लिए मानव शक्ति की आवश्यकता है -**

जब देश की आर्थिक प्रगति होती है तो बड़े स्तर पर मानव शक्ति की माँग बढ़ जाती है। नए-नए कल-कारखानों में, फैक्ट्रियों में, बाजारों में, कार्यालयों में हर जगह योग्य, प्रशिक्षित, चरित्रवान कार्यकर्ताओं की आवश्यकता बढ़ जाती है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए समाज व्यवस्था में भी तदनुसार परिवर्तन किए जाते हैं।

उपरोक्त सभी कारणों के परिणामस्वरूप आर्थिक विकास के लिए किए गए नियोजन के साथ-साथ सामाजिक नियोजन भी किया जाता है। योजनाकार आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने के साथ-साथ विभिन्न सामाजिक बुराइयों को दूर करने का भी प्रयास करते हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में कहा गया था कि "पंचवर्षीय योजना के आर्थिक कार्यक्रम इन समस्याओं को कम करने में कुछ सीमा तक सफल होंगे। आर्थिक विकास की प्राप्तियाँ, सुनियोजित देशव्यापी समाज कल्याण कार्यक्रमों के साथ एकीकृत की जाएगी।

6.5 सारांश

वर्तमान समय में विकास शब्द का अर्थ बदलने के कारण उसके क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ है। आज विकास का अर्थ सर्वांगीण विकास है; और इस सम्पूर्णता को ध्यान में रखते हुए ही नियोजन किया जाना चाहिए। क्योंकि नियोजन का लक्ष्य विकास है एवं विकास की आवधारणा के अन्तर्गत सम्पूर्णता समाहित है, इसलिए नियोजन की अवधारणा में भी सम्पूर्णता का समावेश होना चाहिए। दुर्भाग्यवश, भौतिक तथा सामाजिक कारकों को अलग-अलग समझने की प्रवृत्ति के कारण नियोजन को भी अलग-अलग भागों में देखा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन को एक दूसरे से पूरी तरह अलग देखा जाता है| वर्तमान भौतिकवादी युग में अर्थ की प्रधानता होने के कारण नियोजन होने के कारण नियोजन को सामान्यतया आर्थिक नियोजन के रूप में देखा जाता है और सामाजिक नियोजन को वह महत्त्व नहीं मिल पाता है जो इसे वास्तव में मिलना चाहिए। वास्तविकता यह है कि आर्थिक नियोजन निःसन्देह महत्वपूर्ण है किन्तु इस नियोजन की सफलता भी सामाजिक नियोजन पर ही निर्भर करती है जिसके अन्तर्गत मानवीय संसाधनों से सम्बन्धित नियोजन किया जाता है।

6.6 शब्दावली

सामान्जस्यता	-	समानता, एकरूपता
समुचित	-	पूर्ण, उचित

- **अल्पविकसित** - कम विकास वाले
- **उन्नयन** - वृद्धि, बढ़ावा, आगे ले जाना

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न -

1. सामाजिक नियोजन क्या है ? इसके लक्ष्यों को लिखिए।
2. सामाजिक नियोजन के कार्यो को लिखिए।
3. आर्थिक नियोजन की परिभाषा लिखते हुए इसके उद्धेश्यों को लिखिए।
4. सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन सम्बन्धों पर प्रकाश डालिए।
5. भारत में सामजिक तथा आर्थिक नियोजन पर लेख लिखिए।

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- राबिन्सन एल. (1937) इकानोमिक प्लानिंग एण्ड इन्टरनेशनल आर्डर, मेक्मिलन एण्ड कं. लंदन
- सिंह, मिश्र, सिंह(2006) भारत में सामाजिक नीति नियोजन एवं विकास
- लुईस एल. (1966) प्लानिंग फार फ्रीसोसोलोजिकल थ्योरी द फ्री प्रेस ग्लेन्को, इलिनोईस
- मेनहेम, कार्ल (1960) आइडिया लोजी एण्ड उटोपिया, राउप्लेज एण्ड केगन पाल लिमिटेड, लंदन
- मिश्र दया कृष्ण , राठौड ए एस. (1968) सामाजिक प्रशासन, कालेज बुकडिपों, नई दिल्ली

इकाई - 7

योजना आयोग: संरचना एवं कार्य

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 योजना आयोग: सरंचना, कार्यबल एवं समितियाँ

7.3 योजना आयोग के कार्य

7.4 सारांश

7.5 शब्दावली

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप

- योजना आयोग की संरचना, कार्यबल एवं समितियों के बारे में जान पायेंगे।
- योजना आयोग के कार्यों को समझ पायेंगे।

7.1 प्रस्तावना

योजना आयोग की स्थापना देश में संसाधनों का प्रभावी दोहन करके उत्पादन बढ़ा कर समुदाय की सेवा में सभी को रोजगार के अवसर देकर, लोगों के जीवन स्तर में तेजी से सुधार लाने के लिए सरकार के घोषित उद्देश्यों में भारत सरकार द्वारा मार्च 1950 में एक संकल्प द्वारा की गई थी। योजना आयोग को देश के सभी संसाधनों का मूल्यांकन करके, कमी वाले संसाधनों को बढ़ाके, संसाधनों के सबसे अधिक प्रभावी और संतुलित उपयोग के लिये योजनाएँ बनाने और प्राथमिकता निर्धारित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। जवाहरलाल नेहरू योजना आयोग के प्रथम अध्यक्ष थे। पहली पंचवर्षीय योजना 1951 में आरम्भ की गई थी और 1965 तक दो और पंचवर्षीय योजनायें बनाई गई। भारत पाकिस्तान युद्ध के कारण बीच में व्यवधान आया। लगातार दो वर्ष तक सूखा रहने, मुद्रा का अवमूल्यन होने, मूल्यों में आम वृद्धि होने और संसाधनों का क्षय होने से योजना बनाने की प्रक्रिया में बाधा आई और 1966 व 1969 के बीच तीन वार्षिक योजनाओं के बाद, चौथी पंचवर्षीय योजना 1969 में आरम्भ हुई। केन्द्र में तेजी से बदलती राजनीतिक स्थिति के कारण 1990 में आठवीं योजना आरम्भ नहीं की जा सकी और 1990-1991 और 1991-1992 को वार्षिक योजनाएं माना गया। आठवीं योजना ढांचागत समायोजन नीतियाँ आरम्भ करने के बाद अन्ततः 1992 में शुरू की गई। पहली आठ योजनाओं में जोर आधारभूत और भारी उद्योग में वृहत पूँजी

निवेश वाले बढ़ते सरकारी क्षेत्र में दिया गया परन्तु 1997 में नौवीं योजना के आरम्भ होने के बाद से ये जोर कम हो गया और वर्तमान में योजना आयोग को विघटित करके नीति आयोग का गठन कर दिया गया है।

1950 के संकल्प द्वारा योजना आयोग की स्थापना के समय इसके उद्देश्यों को इस प्रकार परिभाषित किया गयाः-

1. देश में उपलब्ध तकनीकी, कर्मचारियों सहित सामग्री, पूँजी और मानव संसाधनों का आकलन और राष्ट्र की आवश्यकता के अनूरूप इन संसाधनों की कमी को दूर करते हुए उन्हे बढ़ाने की सम्भावनाओं का पता लगाना।
2. देश के संसाधनों के सर्वाधिक प्रभावी तथा संतुलित उपयोग के लिये योजना बनाना।
3. प्राथमिकताएं निर्धारित करते हुए ऐसे क्रमों को परिभाषित करना जिनके अनुसार योजना को कार्यान्वित किया जाये और प्रत्येक क्रम को यथोचित पूरा करने के लिए संसाधन आवंटित करने का प्रस्ताव रखना।
4. ऐसे कारकों के बारे में बताना जो आर्थिक विकास में बाधक है और वर्तमान सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिति के दृष्टिगत ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करने की जानकारी देता है जिनसे योजना को सफलतापूर्वक निष्पादित किया जा सके।
5. इस प्रकार के तंत्र का निर्धारण करना जो योजना के प्रत्येक पहलु को एक चरण में कार्यान्वित करने हेतु जरूरी हो।
6. योजना के प्रत्येक चरण में हुई प्रगति का समय-समय पर मूल्यांकन ओर उस नीति तथा उपायों का समायोजन कर सिफारिश करना जो मूल्यांकन के दौरान जरूरी समझे गए।
7. ऐसे अंतरिम या अनुषंगी सिफारिशें करना जो उसे सौंपे गए कर्तव्यों को पूरा करने के लिए उचित हो अथवा वर्तमान आर्थिक परिस्थितियाँ, चालू नीतियाँ, उपायों और विकास कार्यक्रमों पर विचार करते हुए अथवा परामर्श के लिए केन्द्रीय या राज्य सरकारों द्वारा उसे सौपी गई विशिष्ट समस्याओं की जांच के बाद उचित लगती हों।

7.2 योजना आयोग: सरंचना, कार्यबल एवं समितियां

प्रधानमन्त्री योजना आयोग के अध्यक्ष होते हैं। आयोग राष्ट्रीय विकास परिषद के व्यापक मार्ग निर्देशन के अन्तर्गत काम करता है। आयोग के उपाध्यक्ष और पूर्णकालिक सदस्य के संगठित निकाय के रूप में पंचवर्षीय योजनाओं, वार्षिक योजनाओं, राज्य योजनाओं, निगरानी योजनाओं और स्कीमों को तैयार करने के लिए विशय प्रयोगों की परामर्श और मार्ग निर्देश देते हैं। योजना आयोग अनेक प्रभागों के माध्यम से कार्य करता हैं। प्रत्येक प्रभाग एक वरिष्ट अधिकारी के अधीन है। गठन इस प्रकार है:-

- योजना राज्य मन्त्री (स्वतन्त्र प्रभार)
- सचिव

- वरिष्ठ अधिकारी

प्रभाग

1. कृषि
2. पिछड़े वर्ग प्रभाग
3. संचार और सूचना प्रभाग
4. विकास नीति प्रभाग
5. शिक्षा विभाग
6. पर्यावरण संसाधन प्रभाग
7. वित्तिय संसाधन प्रभाग
8. स्वास्थ्य,पोषण और परिवार कल्याण प्रभाग
9. आवास, नगरीय विकास और जन आपूर्ति प्रभाग
10. उद्योग और खनिज प्रभाग
11. आंतरिक अर्थ मानव शक्ति प्रभाग
12. ढांचा प्रभाग
13. श्रम, रोजगार और मानव शक्ति प्रभाग
14. बहुस्तरीय योजना प्रभाग

सीमा क्षेत्र विकास कार्यक्रम

पश्चिमी घाट विकास कार्यक्रम

15. निगरानी प्रभाग
16. भावी योजना प्रभाग
17. कार्यक्रम परिणाम और प्रयुत्तर निगरानी प्रभाग
18. योजना समन्वय प्रभाग
19. विद्युत और ऊर्जा विभाग
20. कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन
21. परियोजना मूल्यांकन और प्रबन्ध प्रभाग
22. ग्रामीण विकास प्रभाग
23. विज्ञान और प्रोद्योगिकी प्रभाग
24. सामाजिक विकास और महिला कार्यक्रम प्रभाग
25. समाज कल्याण प्रभाग
26. राज्य कल्याण प्रभाग
27. परिवहन प्रभाग
28. ग्रामीण और छोटे उद्योग प्रभाग
29. जल संसाधन प्रभाग
30. प्रशासन और सेवाएं प्रभाग
31. सामाजिक वार्षिक अनुसंधान प्रभाग

योजना आयोग: कार्यबल एवं समितियाँ

1. आवास और नगरीय विकास सम्बन्धी कार्यबल, योजना आयोग
2. बिहार सम्बन्धि विशेष कार्यबल
    1. नवीन शासन प्रक्रिया के सम्बन्ध में बिहार को जानकारी प्रदान
    2. बिहार में विद्युत क्षेत्र विकास हेतु रोड़ मेप
    3. बिहार में स्वास्थ्य विकास हेतु
    4. बिहार में विद्युत विकास हेतु
    5. बैकिंग क्षैत्र के सम्बन्ध में बिहार को जानकारी प्रदान करना
    6. बिहार सड़क क्षेत्र विकास: नए आयाम

7. बिहार कृषि विकास: अवसर और चुनौतियाँ
8. बिहार में सूचना प्रौद्योगिकी आधारित विकास

3. **कुशलता विकास सम्बन्धी कार्यबल**
4. पहाड़ी क्षेत्र विकास कार्यक्रम (एचएडीपी)/पश्चिमी घाट विकास कार्यक्रम (डब्ल्यू जीडीपी) के अधीन क्षेत्रों में पहाड़ी आबादी की समस्याओं सम्बन्धी कार्यग्रुप
5. राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान के पुन:उत्थान और पुनः जोर देने सम्बन्धी कार्य ग्रुप।
6. पंचायती संस्थाओं सम्बन्धी कार्य बल(पीआरआई)
7. एकीकृत परिवहन नीति सम्बन्धी कार्यबल
8. जीवन यापन सुरक्षा एवं टिकाऊ विकास हेतु हरित भारत सम्बन्धी
9. ज्ञान की महाशक्ति के रूप में भारत सम्बन्धी कार्यबल
10. रोजगार के अवसरों सम्बन्धी कार्यबल
11. चिकित्सीय पौधों के संरक्षण एवं टिकाऊ प्रयोग सम्बन्धी कार्यबल कीरिपोर्ट
12. चीनी उद्योग सम्बन्धी कार्यबल

समिति

12वीं पंचवर्षीय योजना के लिए कर्णधार समितियां और सलाहकार/कार्यकार दल

11वीं पंचवर्षीय योजना के लिए कर्णधार समितियां और सलाहकार/कार्यकार दल

10वीं पंचवर्षीय योजना के लिए कर्णधार समितियां और सलाहकार/कार्यकार दल

ज्ञान आयोग

छटवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रति वर्ष मिलियन रोजगार के अवसर प्रदान करने के लक्ष्य सम्बन्धी विशेषदल कर नीति और प्रशासन

7.3 योजना आयोग के कार्य

समाज कल्याण

योजना आयोग में समाज कल्याण प्रभाग दो सेक्टरों का कार्य सम्भालता है ; (1) समाज कल्याण और (2) महिला और बाल विकास। समाज कल्याण सेक्टर विकलांग, सामाजिक रूप से असामान्य तथा अन्य साधनहीन व्यक्तियों के कल्याण, पुनर्वास और विकास का कार्य संकेन्द्रित सामाजिक न्याय और सशक्तिकरण मंत्रालय के साथ समन्वय से करता है और महिला एवं बाल विकास सेक्टर संकेन्द्रीत महिला एवं विकास निकट समन्वय के साथ महिला और बाल विकास का कार्य सम्भालता है। प्रभाग के प्रमुख कृत्यों में अन्य बातों के साथ-साथ ये भी शामिल है।

1. समाज कल्याण क्षेत्र में सरकारी (केन्द्रीय तथा राज्य स्तरों पर) तथा गैर-सरकारी संगठनों को समय मार्ग निर्देष/सलाह देना

2. पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं से सम्बन्धित कार्य (समाज कल्याण)

केन्द्रीय सेक्टर

1. मंत्रालय स्तर पर कार्यकारी दल की स्थापना और संकेन्द्रित मंत्रालय के साथ समन्वय
2. योजना आयोग में संचालन समितियों की स्थापना और उनसे सम्बन्धित कार्य जैसे बैठकें आयोजित करना, बैठकों की पृष्ठभूमि/कार्य सुची/कार्यवाही सारांश तैयार करना, कर्णधार समिति कर रिपोर्ट, योजना दस्तावेज में शामिल करने हेतु दृष्टिकोण पत्र तथा सम्बन्ध अध्याय तैयार करना
3. योजना प्रस्तावों (पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाएं) की जांच, मंत्रालयों के साथ प्राथमिक चर्चाएं, केन्द्रीय कार्य दलो, परिव्यय सिफारिशों और पुनर्विनियोग मामलों के बारें में योजना आयोग प्रक्रम और मंत्रालयों के बीच समन्वय रखना।

राज्य सेक्टर

1. योजना प्रस्तावों की जांच, वास्तविक और वित्तिय लक्ष्यों/उपलब्धियों, सेक्टरवार परिव्यय की सिफारिशों सहित नीतियाँ और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की समीक्षा के बारे में राज्य सेक्टर कार्य दलों की चर्चाए आयोजित करना।
2. मध्यावधि मूल्यांकन
3. नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा
4. लक्ष्यों और वास्तविक वित्तीय दोनों के सम्बन्ध में उपलब्धियों की समीक्षा।
5. मत्रीमंडल टिप्पणी ईएफसी कम्पनी, एसएफसी ज्ञापनों की जाँच और संक्षेप तैयार करना और उन पर टिप्पणियाँ करना इसके अतिरिक्त ईएफसी/एसएफसी की बैठकों मे भाग लेना।
6. अधीनस्थ/संबन्ध संगठनों जैसे (एनआईवीएच), नेशनल इंस्टिट्टट ऑफ हीयरिंग हैंडीक्राफ्ट (राष्ट्रीय श्रवण बाधित विकलांग विकलांग संस्थान, देहरादून (एनआईवीएच) नेशनल इंस्टीट्यूट आफ मैंटली हैंडीकेप्ट (राष्ट्रीय मानसिक रोग विकलांग संस्थान) (एनआईएमएच) सिंकन्दराबाद, राष्ट्रीय पुर्नवास, प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान, कटकः शारीरिक रूप से विकलांग संस्थान (आईपीएच), नई दिल्ली, भारतीय पुर्नवास परिशद (आरसीआई) नई दिल्लीः राष्ट्रीय विकलांग वित्तीय और विकास निगम, (एनएचएफडीसी) नई दिल्ली, कृत्रिम अंग निर्माण निगम (एएलआई एमसीजी) कानपुर और राष्ट्रीय आत्म रक्षा संस्थान (एनआईएसडी), नई दिल्ली के लिए सलाहकार की भूमिका।
7. मंत्रालय द्वारा समय समय पर स्थापित की जाने वाली अतंर मंत्रालय/विभाग सम्न्वय समितियाँ: विषेशज्ञ समितियाँ परियोजना मंजुरी समितियाँ/विषेश/समितियाँ/अध्ययन दल आदि की बैठक में योजना आयोग का प्रतिनिधित्व करना।
8. सभी संसदीय मामले अर्थात प्रश्नों के उत्तर तैयार करना जिनमे योजना आयोग के भीतर और बाहर सामग्रीय आपूर्ति भी शामिल हैः
9. योजना आयोग में सम्बन्ध प्रभावों के बीच समन्वय।

10. विशेषपहल जैसे नीति उन्मुख पत्र तैयार करना, सांख्यिकी प्रोफाईल तैयार करना तथा अन्य प्रकाशन जानकारी/आंकड़े आधार विकसीत करना।

11. समाज कल्याण के बारे में भाषण तैयार करने और लेख लिखने सहित कई अन्य कार्य

महिला एव बाल विकास

महिला एवं बाल विकास प्रभाग महिला सशक्तिकरण और बाल विकास से संम्बन्धित सभी कार्य संकेंद्रित महिला एवं बाल विकास विभाग के साथ निकट समन्वय रख करसंभालता है। अन्य बातों के साथ-साथ प्रभाग के मुख्य कृत्यों में ये शामिल है।

1. महिला एवं बाल विकास के क्षेत्र में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों(केन्द्रिय और राज्य स्तर) दोनों के समग्र नीति निर्देश /सलाह देना।
2. पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं से संबंधितकार्य।

केन्द्रिय सेक्टर

1. मंत्रालय स्तर पर कार्य दलों की स्थापना और संकेंद्रीत विभाग के साथ समन्वय।
2. योजना आयोग में कर्णधार समितियों की स्थापना और उनसे संबधित कार्य जैसे बैठकें आयोजित करना,बैठकों की पृष्ठभूमि/कार्य सूची/कार्यवाही सारांश तैयार करना, और योजना के दस्तावेज शामिल करने हेतु दृष्टिकोण पत्र एवं संबंद्व अध्याय तैयार करना।
3. योजना प्रस्तावों (पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं) की जांच, मंत्रालय के साथ प्राथमिक चंर्चाएं, केन्द्रीय कार्य दलों, परिव्यय सिफारिशों और बजट पुनर्विनियोग मामलों के बारे में योजना आयोग मंत्रालय के बीच रखना।

राज्य सेक्टर

1. योजना प्रस्तावों की जांच, वास्तविक और वित्तीय लक्ष्यों/उपलब्धियों, सेक्टरवार परिव्यय की सिफारिशों सहित नीतियाँ और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की समीक्षा के बारे में राज्य सेक्टर कार्य दलो की चर्चाएं आयोजित करना।

मध्यावधि मूल्यांकन

1. नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा।
2. लक्ष्यों (वास्तविक और वित्तीय दोनों) के संबंध मेंउपलब्धियों की समीक्षा।
3. मध्यावधि में त्रुटियों को दूर करने हेतु सुझाव।
4. महिला एवं बाल विकास संबंधी स्कीमों के बारे में मंत्रीमंडल टिप्पणी ईएफसी ज्ञापनों, एमएफसी ज्ञापनों की जांच और संक्षेप तैयार करना और उन पर टिप्पणियां तैयार करना। इसके अतिरिक्त ईएफसी/एसएफसी, की बैठाकों में भाग लेना नई दिल्ली, राष्ट्रीय जन सहयोग और बाल विकास संस्थान, नई दिल्ली, राष्ट्रीय महिला कोष, नई दिल्ली के लिए सलाहकार की भूमिका।

5. विभाग द्वारा समय समय पर स्थापित की गई संसदीय समितियाँ, अंतर मंत्रालय/ विभाग समितियाँ, विशेषज्ञ समितियाँ, विषय पर कार्य बल, परियोजना मंजुरी समितियाँ, अध्ययन दलों आदि शासकीय बोर्ड और अधीनस्थ संगठनों की सामान्य निकाय बैठकों में योजना आयोग का प्रतिनिधित्व करना।

6. सभी संसदीय मामले अर्थात प्रश्नों के उत्तर, योजना आयोग के भीतर और बाहर सामग्री आपुर्ति।

7. महिला एवं बाल संबधित मंत्रालयों/विभागों योजना आयोग के अंदर विषय प्रभावों, संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय एंजेंसीयों के साथ समन्वय।

8. विशेषपहल करना जैसे नीति उन्मुख पत्र तैयार करना, सांख्यिकी प्रोफाईल एवं प्रोफाईल प्रकाशन जानकारी/आंकड़े आधार विकसीत करना।

9. महिला एवं बाल विकास से सम्बन्धित मामलों के बारे में भाषण तैयार करना और लेख लिखनें सहित अन्य कोई भी कार्य।

शिक्षा प्रभाग

1. शिक्षा के विभिन्न चरण जैसे पूर्व-प्राथमिक, औपचारिक और गैर औपचारिक शिक्षा, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, विश्वविद्यालय और तकनीकी शिक्षा।

2. विशेष क्षेत्र जैसे लड़कियों की शिक्षा, अनु. जन. जा. तथा अन्य पिछड़े वर्गों के बच्चों की शिक्षा।

3. वयस्कों की शिक्षा और पिछड़े क्षेत्रों में शिक्षा।

मुख्य शिक्षा कार्यक्रमों का संबध सर्व शिक्षा अभियान, वयस्क शिक्षा, शिक्षा के व्यवसायिकरण, शिक्षक-शिक्षा, विज्ञान शिक्षा,शैक्षिक योजना, प्रशासन और पर्यावरण, शारीरिक शिक्षा, खेल और खेल-कुद, छात्रवृत्ति, भाषा विकास, पुस्तक प्रोत्साहन, पुस्तकालयों, युवा सेवा, स्कीमों, सांस्कृतिक संस्थानों और गतिविधियों आदि के माध्ययम से प्राथमिक शिक्षा के वैष्वीकरण का उद्देश्य प्राप्त करना है।

शिक्षा प्रभाग अपने संबधित क्षेत्रों में निम्नलिखित कृत्य करता है।

1. क्षेत्रिय और राज्य संघ राज्य क्षेत्र के लिए दीर्घकालीन, मध्यम अवधि वाली और वार्षिक योजनाएँ तैयार करना। और वे क्रम निर्धारित किए जाते है जिनमें उन्हें पूरा किया जाता है और उनकी परस्पर प्राथमिकताएं और संसाधन आंवटन निर्धारण किया जाता है।

2. राष्ट्रीय केन्द्रिय ऐजेन्सियां जैसे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद तथा राष्ट्रीय योजनाओं के बीच समन्वय स्थापित करना, योजना नीतियों का मुल्यांकन और आवश्यकतानुसार समायोजन के बारें में बताना और प्राथमिकताएं बताना ताकि राष्ट्रीय लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।

3. उपरोक्त कृत्य के समर्थन संबंध में शैक्षिक सांख्यिकी का अनुरक्षण और आंकड़े तैयार करने, जुटाने, क्रमबद्व करने और उनका विश्लेषण तथा संबधित जानकारी कार्यक्रम मूल्यांकन एवं

पुर्वानुमान के लिए अनुसंधान अध्ययन और सर्वेक्षण को प्रोत्साहन/समर्थन और शिक्षा के क्षेत्र में वैकल्पिक और /या अनूपुरक उपाय और नई नीति के लिए पहल करना।

4. निम्नलिखित मामलों में संबधित सरकारी विभागों, अंतरराष्ट्रीय संगठनों तथा ऐजेन्सीयों जैसे एनयुआईपीए, एनसीआईआरटी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के साथ सहयोग/सहायता करना।

   (क) शिक्षा विकास हेतु विदेशी तकनीक सहायता।

   (ख) शिक्षा योजना में लगे व्यक्तियों का प्रशिक्षण।

   (ग) शिक्षा सेवाओं में निम्नव्ययता, कुशलता और प्रभाविकता लाने हेतु प्रशासनिक सुधार, नई पहल और प्रयोग करना।

5. संसाधन जुटाने संबंधी जांच करना और कम लागत की रणनीति/विकल्प देखना और उनके बारे में सिफारिशें करना।

6. समितियां और आयोगों, केन्द्रीय सलाहकार बोर्डो तथा वार्षिक पंचवर्षीय योजना की समीक्षा।

7. प्रभाग के तकनीकी कर्मचारी भी मानव संसाधन विकास मंत्रालय और सांख्यिकी विभाग तथा अन्य ऐजेंन्सियों से प्राप्त शैक्षिक सांख्यिकी की जांच कार्य में लगे हुए है।

कला और संस्कृति

शिक्षा प्रभाग का प्रमुख कार्य देश की सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखना और उसे प्रोत्साहित करने के लिए योजनाओं और कार्यक्रम तैयार करने हेतु समय नीति और दिशा निर्देश प्रदान करना है। ये सांस्कृतिक मंत्रालय की योजनाएं/कार्यक्रम है जिसकी मुख्य गतिविधियां है, पुरातत्वीय खुदाई, दृश्य और साहित्य कलाओं को प्रोत्साहन, सामग्री विरासत का अनुरक्षण, संग्रहालयों, पुस्तकालयों और संस्थाओं का विकास/अनेक संस्थान देश की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के प्रोत्साहन, अनुरक्षण और फैलाने के कार्य में सक्रिय सहयोग दे रहे है।

शिक्षा प्रभाग युवा कार्यक्रम और खेल मंत्रालय की समय योजना और नीतियों की भी देख रेख करता है। यह मंत्रालय युवा ऊर्जा को निर्माण कार्यों में लगाने और उनमें बढिया और देशभक्ति के गुण पैदा करने हेतु तैयार करता है। इन कार्यक्रमों में युवाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण द्वारा आवश्यक कार्यकुशलता में वृद्धि और उसे उन्नत करने पर जोर दिया जाता है और उनके लिये रोजगार के अवसर भी पैदा किये जाते हैं। युवाओं को राष्ट्र निर्माण कार्यों में लगाने का प्रयास किया जा रहा है। राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में खेल-कूद अच्छे खिलाडियों का पता लगाने और खेल-कूद के लिए ढ़ांचे तैयार करने संबंधी मामलों को प्रभाग देखता है।

स्वास्थ्य, पोषण और परिवार कल्याण

1. योजनाओं के माध्यम से यह प्रभाग निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य करता है।

   ☐ निम्नलिखित से संबधित नीति और रणनीति तैयार करना।

   ☐ स्वास्थ्य और परिवार कल्याण

- ☐ आयुश
- ☐ जनसंख्या के पोष्टिक स्तर में सुधार के लिए पहल
- ☐ राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के लिए फ्लैगशिप कार्यक्रम

2. इनमें से प्रत्येक क्षेत्र के लिए अल्पकालीक, माध्यमिक और दीर्घकालीन भावी लक्ष्य निर्धारित करना
3. स्वास्थ्य सेक्टर में बदलती प्रवृत्तियां, जैसे एपीषोमीओलोजीकल, जन्म-मृत्यु गणनाओं, सामाजिक और प्रबंधकीय चुनोतियों पर निगरानी
4. राज्यों तथा केन्द्र दोनों में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संबंधी रणनीतियों और कार्यक्रम की जांच और उचित रूप भेद /मध्यावधि में त्रुटियां दूर करने का सुझाव देना
5. कुशलता विकास और सेवाओं की गुणवत्ता सुधारने हेतु सुझाव देना
6. जनसंख्या के स्वास्थ्य में सुधार के लिए आवश्यक बुनियादी क्लिनीकली और परिचालन अनुसंधान के संबंध में प्राथमिकताएं निर्धारित करना
7. अंतर सेक्टर मामलों की जांच करके सेवाओं की उत्कृष्टता के लिए उपयुक्त नीतियां और रणनीतियां तैयार करना ताकि चालु कार्यक्रमों का अधिक से अधिक लाभ जनसंख्या को मिल सके

निम्नलिखित मामलों में यह प्रभाग योजना आयोग का प्रतिनिधित्व करता है -

1. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय तथा महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की विभिन्न समितियां
2. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय तथा महिला एवं बाल विकास मंत्रालय से सम्बन्धित ईएफसी/एसएफसी
3. स्वास्थ्य परिवार कल्याण और पोषण के सम्बन्ध में योजनाएं और कार्यक्रम में प्राथमिकताएं और लक्ष्य निर्धारित करने, अपेक्षित मानव तथा सामग्री संसाधन, प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू करने, स्वास्थ्य सेवाओं में निर्माण और उपकरणों का स्तर और स्वास्थ्य अनुसंधान विकास आदि के बारे में योजना आयोग को सलाह देने के लिए विशेषज्ञ पैनलों का गठन|
4. भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, राष्ट्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान, भारत की लोक स्वास्थ्य फाउंडेशन आदि के लिए वैज्ञानिक सलाहकार दल आदि।

ग्रामीण विकास प्रभाग

ग्रामीण विकास के लिए योजनाएं और कार्यक्रम तैयार करने के लिए समग्र मार्गदर्शन प्रदान करना है। गरीबी उन्मूलन, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन, वाटरशेड और अनउपजाऊ भूमि का विकास करने सम्बन्धी मामलों के लिए यह संकेन्द्रित प्रभाग है। प्रभाग द्वारा विशिष्ट रूप से निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं-

1. पंचवर्षीय योजनाओं और वार्षिक योजनाओं में शामिल करने हेतु ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को तैयार करने में सहायता करना।

2. ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से सम्बन्धित मंत्रियों के ग्रुप के लिए ईएफसी ज्ञापन और मंत्रीमंडल टिप्पणी पत्र का विश्लेषण और टिप्पणीयां तैयार करना।

3. मुख्य रूप से ग्रामीण विकास मंत्रालय, राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान तथा अन्य सहयोगी संगठनों के साथ संपर्क बनाये रखना और उनकी बैठकों में भाग लेना।

4. योजना आयोग के विभिन्न प्रभागों, राज्य सरकारों और ग्रामीण विकास सम्बन्धि स्कीमों को कार्यान्वित करने वाले केन्द्रिय मंत्रालयों से जानकारी जुटाना।

5. राज्य सरकारों के पंचवर्षीय योजना प्रारूप सम्बन्धि प्रस्तावों को अन्तिम रूप देने हेतु कार्य दलों की बैठके आयोजित करना। इसमें पृष्टभूमि पत्र तैयार करने, परस्पर प्राथमिकताओं पर चर्चाएं, योजना के उद्देश्यों और दृष्टिकोण सम्बन्धि योजना प्रस्तावों की आलोचनात्मक जांच, कार्यदलों के प्रतिवेदन तैयार करना जिनमें अन्य बातों के साथ-साथ परिव्यय और वास्तविक लक्ष्यों के बारे में जानकारी होती है।

6. ग्रामीण विकास मंत्रालय के पंचवर्षीय योजना के परिव्यय को अन्तिम रूप देना, केन्द्रिय ग्रामीण विकास मंत्रालय और राज्य सरकारों की वार्षिक योजनाओं को अन्तिम रूप देना। इसमें स्वीकृति लक्ष्य और परिव्यय के सन्दर्भ में वास्तविक और वित्तीय प्रगति का आंकलन, प्रस्तावों और समिक्षागत लक्ष्यों की स्कीमवार जांच तथा अगली वार्षिक योजना के लिए आवंटन को अन्तिम रूप देना शामिल है।

7. सरकारी प्रतिनिधित्व, अतिमहत्वपूर्ण उल्लेखों, संसद प्रश्नों और योजना आयोग के लिए ग्रामीण सेक्टर से सम्बन्धित सलाहकार समिति/स्थायी समिति बैठकों की कार्यवाही मदों के बारे में टिप्पणीयां, सामग्री आदि की व्यवस्था करना।

ग्रामीण विकास प्रभाग ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा कार्यान्वित किये जाने वाले निम्नलिखित कार्यक्रमों का काम संभालता है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम

यह अधिनियम दो फरवरी, 2006 को लागु किया गया और इसके कार्य का एक वर्ष 2006-07 को पूरा हुआ। यह 200 जिलों मे लागु हुआ| यह कार्यक्रम 2007-08 में 330 जिलों तक बढ़ाया गया और 01/04/2008 से इसे देश भर में आरंभ कर दिया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य है कि किसी भी परिवार को जो रोजगार का इच्छुक हो 100 दिन के लिए रोजगार की गारन्टी दी जाये। यद्यपी सभी परिवार इसके पात्र है तथापी अपेक्षा यह की जाती है कि केवल अतिनिर्धन अर्थात भूमिहीन श्रमिक और सीमांत किसान ही वास्तव में इस कार्य को करेंगे। इसका दूसरा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि ऐसे निर्माण कार्य से रोजगार मिले जिनसे भूमि की उत्पादकता में वृद्धि हो।

स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना

ग्रामीण गरीबों के किए स्वरोजगार के लिए एक मुख्य कार्यक्रम है। इसका बुनियादी उद्देश्य यह है कि सहायता प्राप्त गरीब परिवारों (स्वरोजगारिय) को बैंक ऋण और सरकारी सहायता को मिलाकर आमदनी पैदा करने के साधन मुहैया कराकर गरीबी रेखा से उपर उठाया जाय। ऋण इस कार्यक्रम का महत्वपूर्ण घटक है जबकि सरकारी सहायता सक्षम बनाने का तत्व है। इस कार्यक्रम का लक्ष्य यह भी

है कि गरीबों को स्वयं अपनी सहायता करने वाले गंपों में संग्रहित किये जाये और सामाजिक एकजुटता, प्रशिक्षण महत्वपूर्ण गतिविधियों के चुनाव, गतिविधियों के ग्रुप योजना बनाकर, संरचना निर्माण, तकनीकी ज्ञान की व्यवस्था और विपणन आदि की सुविधा देकर उनमें क्षमता का निर्माण किया जाय। इनके अधिन ग्रुप दृष्टिकोण पर बल दिया जाता है ।यद्यपि निजी स्वरोजगार को भी सहायता इी जाती हे। यह योजना जीला ग्रामीण विकास एंजंसी द्वारा लागू की जा रही है, पर इसमें नीजि पंचायती राज संस्थान, बैंक, लाईन प्रभाग तथा गैर-सरकारी संगठन भी सक्रिय भुमिका निभा रहे है।

इस योजना के अधिन ऋण जुटाने का काम बहुत ही कम हुआ है। साथ ही स्वयं सहायता ग्रुप बनते जरूर है लेकिन आवर्ति नीधि का लाभ लेकर बीच में ही गायब हों जाते है। इस स्कीम को अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसकी पुनः संरचना कर इसमें गरीबों में भी सबसे अधिक गरीब को लाने पर बल दिया जा रहा है।अत्यधिक सामाजिक एकजुटता, क्षमता निर्माण और लक्षित जनसंख्या के बीच संस्थान निर्माण के लिए उपयुक्त तंत्र कोशीघ्र ही स्थापीत किया जायेगा।

इन्दिरा आवास योजना

इस योजना को 1966 से एक स्वतंत्र स्कीम के रूप में लागु किया जा रहा इसका उद्देश्य विशेषरूप से ग्रामीण क्षेत्र में अनु. जाती अनु. जन जाती तथा मुक्त कराये गये बंधक मजदुरों और गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का रिहायशी का निर्माण /उनको उन्नत करने के लिए सहायता दी जाए। मैदानी क्षेत्रों में यह सहायता अधिकतम 35000 रू. प्रति ऐकड़ तथा पहाड़ी /दुर्गम क्षेत्रों में 38500 रू प्रति ऐकड़ है। सभी क्षेत्रों में एक सुधार केलिए 15000 रू. दिये जाते है। इन्दिरा आवास योजना का वित्तीय पोषण केन्द्र राजयों के बीच 75.25 के आधार पर किया जाता है। संघशासित प्रदेशों में यह 100 प्रतिशत है।

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम

इस कार्यक्रम को शुरू करने का उद्देश्य गरीब परिवार में वृद्ध, रोटी कमाने वाले की मृत्यु तथा प्रसुता को सामाजिक सहायता का लाभ देना है। यह कार्यक्रम राज्य सरकारों के कार्यक्रमों की पुर्ति करता हे। तथा सामाजिक भलाई के न्युनतम राष्ट्रीय स्तर के उद्वेष्यों की प्राप्ति हो सकें। यह केन्द्रिय सहायता लाभ के अतिरिक्त है जो राज्य संरक्षण स्कीमों के अधिन देती है। पोषण और राष्ट्रीय जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रमों के साथ बेहतर संपर्क बनाये रखने के लिए प्रसुता लाभ घटक को स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग को 2001-2002 से अंतरित कर दिया गया है। राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम और अन्नपुर्ण स्कीमों को 2003 से राज्य योजनाओं मं अंतरित किया गया है। ताकि राज्य/संघशासित क्षेत्रों को चुनाव करने में लचीलापन हो उन्हें सही ढंग से कार्यन्वित किया जा सके।

एकीकृत वाटरशेड प्रबंधन कार्यक्रम

ग्यारहीं योजना के दौरान 3 क्षेत्र विकास कार्यक्रमों अर्थात एकीकृत बंजर भुमि विकास कार्यक्रम, सुखा प्रवर क्षेत्र कार्यक्रम और रेगिस्तान विकास कार्यक्रमों को मिलाकर एक ही कार्यक्रम बना दिया गया है। जिसे एकीकृत वाटरशेड प्रबंधन कार्यक्रम कहा जाता है। यह मिलान संसाधनों के सर्वाधिक इस्तेमाल और स्थायी परिणामों की प्राप्ति के लिए किया गया है | इस कार्यक्रम के लिए सांझे मार्ग

निर्देष तैयार किये गये है जो 01/04/2008 से लागु हो गए। वर्ष 2008-2009 से पुर्व डिएडीपी, डीडीपी और एकीकृत वाटरशेड के अधिन चालु परियोजनाएं पुराने मार्ग निर्देशो के अनुसार चलती रहेगी।

रूपान्तरित एकीकृत वाटरशेड प्रबन्धन कार्यक्रम तीन स्तरीय दृष्टिकोण अपनायगा जिसमें सबसें ऊपरी क्षेत्र में वन और पहाडियां हैं यहाँ वन विभाग की सहायता से काम होगा। बीच के उत्तराई वाले क्षेत्रों में इस कार्यक्रम के अधिन यथा सम्भव सबसे बहढ़या ढंग अपनाया जाएगा जिसमें बुआई का तरीका, बागबानी और कृषि वानिकी आदि द्वारा भुमि को ठिक किया जाएगा। नीचले क्षेत्रों में जो मैदानी तथा कृषि योग्य भूमि है इस कार्यक्रम को रोजगगर जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजागार गारण्टी स्कीम के साथ जोड़ा जाएगा ताकि दानों एक दूसरे से लाभ ले सकें। नये कार्यक्रम के अधीन “कलस्टर एप्रोच” को अपानाया जाएगा। इसमें मोटे तौर पर 4000 से 10000 हैक्टैयर औसतन आकार के प्राकृतिक जल-भूगोलिय लघु वाटर शेड क्लस्टर के एकक् को परियोजना क्षेत्र के रूप में चुना जाएगा। केन्द्र तथा राज्य स्तर पर निष्ठावान संस्थागत एजेन्सियों द्वारा यह कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा। उपयुक्त विधी आंवाटन द्वारा इन संस्थाओं को व्यवसायिक समर्थन (बहुत प्रवीण विषेशज्ञ दल रूप में) दिया जाएगा। स्थानीय परियोजना के लिए नियन्त्रित पहूंच वितरण उपग्रह चित्रों से आकाषिय और गबैर आकाषिय आंकडे उपलब्ध कराये जाएंगे। इसके लिए जीआईएस की कोर सुविधा होगी। यह परियोजना काल 5 से 7 वर्ष की अवधि का होगा। इसे तीन चरणों में रखा जाएगा अर्थात तैयार वाटर शेड निर्माण कार्य तथा समयबद्ध चरण में जीवन यापन गतिविधियां विपणन प्रक्रियागत तथा मूल्य संवर्द्धन गतिविधियांशामिल है।

राष्ट्रीय भुमि अभिलेख आधुनिकरण कार्यक्रम

राष्ट्रीय भुमि अभिलेख आधुनिकरण कार्यक्रम की संकल्पना एक मुख्य प्रणाली और सुधार हेतु पहल के रूप में की गई है जिसका संबधं न केवल भूमि अभिलेखों के कम्प्यूटरीकरण अद्यतन करने और अनुरक्षण और मानयकरण से है बल्कि विशिष्ट स्थल जानकारी प्राप्त होने से विकासात्मक योजना, विनियामक और आपदा प्रबंधन गतिविधियों के लिए व्यापक आंकडे उपलब्ध होंगे जिससे मूल्य संवर्द्धन होगा और नागरिकों को भूमि अभिलेख आंकड़ो पर आधारित सेवाएं उपलब्ध हो जाएंगी।

इस कार्यक्रम के अधीन जियोग्राफिक इन्फार्मेशन सिस्टम प्लेटफॉर्म (जीआईएस) से निम्नलिखित तीन परतों के आंकडे मिल सकेंगे । उपग्रह चित्रों/हवाई फोटोग्राफी से आकाशीय आंकडे, भारत का सर्वेक्षण, भारत के वनों के सर्वेक्षण के मानचित्र और राजस्व अभिलेख के डास्ट्राल मानचित्र और आरओआर विवरण। सभी केडास्ट्रोल मानचित्रों को डिजिटाईज किया जाएगा और भूमि के प्लाट संख्या और प्रत्येक भूमि पार्सल को यूनिक आइडी मिलेगा। ग्राम स्तर से ऊपर की ओर (पंचायत,ब्लाक, तहसील, सर्किल, सब-डिवीजन, डिजीलाईजेशन, राज्य और राष्ट्रीय सीमाएं) प्रशानिक सीमाएं, वन, जल निकाय तथा भूमि की अन्य विशेषताएं और भूमि उपयोग वितरण तथा अन्य विकासात्मक परतों (जैसे वाटरशेड, सड़क नेटवर्क आदि) को कौर जीआई एस के साथ जोड़ा जाएगा।

कार्यक्रम के अधीन जिन गतिविधियों को समर्थन दिया जाएगा उतनी उनमें अन्य बातों के साथ-साथ सर्वेक्षण/आधुनिक तकनीक के प्रयोग से पुनः सर्वेक्षण जैसे हवाई फोटोग्राफी, म्यूटेशन रिकार्ड सहित

भूमि अभिलेखों को अद्यतन बनाना, अधिकारों के रिकार्ड (आरओआर) के कम्प्यूटरीकरण को पूरा करना, रजिस्ट्रेशन का कम्प्यूटरीकरण, म्यूटेशन नोटिस तैयार होना, मानचित्रों का डिजिटाईजेशन, पूरी प्रणाली का एकीकरण तथा उसके मानचित्रों का डिजिटाईजेशन और प्रशिक्षण तथा संबन्धित अधिकारियों और कर्मचारियों की क्षमता का निर्माण।

तहसील/ताल्लूक/सर्किल/ब्लॉक स्तर पर भूमि रिकार्डो तथा रजिस्ट्रेशन कार्यालयों और भूमि रिकार्ड प्रबधंन केन्द्रों के बीच संपर्क को समर्थन दिया जाएगा। ऋण सुविधाएं प्रदान करने के लिए सहकारी समिति तथा अन्य वित्तिय संस्थानों को भूमि रिकार्ड देखने की सुविधा होगी।
कार्यक्रम में नागरिक सेवाओं जैसे मानचित्र के साथ रिकार्ड ऑफ राईट्स (आरओआर) अन्य भूमि आधारित प्रमाण पत्र जैसे जाति प्रमाण पत्र, आय प्रमाण पत्र (विशेषरूप से ग्रामीण क्षेत्रों में अधिवास प्रमाण पत्र विकास कार्यक्रमों के लिए पात्रता सबंधी जानकारी भूमि पास बुक आदि उपलब्ध करने पर बल दिया जाएगा।

इसके अतिरिक्त यह कार्यक्रम केन्द्र और राज्य सरकारों दोनों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा-भूमि राजस्व में आधुनिकरण और कार्यकुशलता बढ़ने के साथ-साथ स्थल विशिष्ट जानकारी के कारण विभिन्न भूमि आधरित विकासात्मक योजनाओं, विनिमयात्मक और आपदा प्रबंधन गतिविधियों के सरकारों के पास एक व्यापक माध्यम होगा। यहां तक कि गैर-सरकारी क्षेत्र को भी व्यापार तथा आर्थिक गतिविधियों के लिए कार्यक्रम का लाभ मिलेगा।

रोजगार

योजना के माध्यम से यह प्रभाग निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित है:-

1. विश्लेशणात्मक और अनुमानित कार्य

1. जनगणना और राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन से प्राप्त श्रमिक बल, रोजगार और बेरोजगारी का अनुमान-भागीदारी दरों श्रमिक बल/कार्यकारी दल, बेरोजगारी और औद्योगिक कार्य बल का वितरण संबंधी आंकडों और रवैये का विश्लेषण|
2. भंडार और आर्थिक रूप से सक्रिय शिक्षित मानव शक्ति का अनुमान-मानव शक्ति की विभिन्न श्रेणियों में से काम पर रखे जाने और बाहर जाने की जानकारी का संश्लेषण और मानव शक्ति का विभिन्न श्रेणियों की जरूरतों का अनुमान
3. रोजगार के दर्जे का अनुमान- दैनिक (केजुअल), नियमित वेतन वाले और स्वरोजगार वाले,
4. रोजगार के अवसर और जीडीपी में वृद्धि से रोजगार अवसरों संबंधी लचीलेपन का अनुमान
5. सेक्टर वार रोजगार और प्रायोजना का अनुमान
6. रोजगार और संबंधीत मामलों का अध्ययन
7. रोजगार संबंधी समयसमय पर रिपोर्ट

2. रोजगार रणनीति, श्रमिक और मानवशक्ति संबंधी नीति

1. पंचवर्षीय योजनाओं में रोजगार रणनीति क्रम और मानव शक्ति संबंधीत मामले
2. रोजगार रवैये और रणनीति आदि की निगरानी समेत सामान्य रोजगार और श्रमिक मामले आदि

3. श्रम, श्रम कल्याण और विशेष रोजगार के लिए योजना कार्यक्रम

1. श्रम और श्रम कल्याण कार्यक्रम- प्रशिक्षण, रोजगार सेवा, श्रम कल्याण और श्रम अनुसंधान के लिए संसाधन आवंटन हेतु केन्द्रीय और राज्य योजनाएं
2. योजना कार्यक्रम के रोजगार पहल और राज्य योजनाओं में विशेष रोजगार कार्यक्रम
3. पंचवर्षीय योजना में श्रम, रोजगार और मानवशक्ति के बारे में अध्याय तैयार करने और वार्षिक योजना दस्तावेजों में श्रम और प्रशिक्षण संबंधी अध्याय तैयार करने के लिए योजना बनाना
4. उपलब्ध सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों और तत्संबंधी नीति की जांच
5. अन्य मंत्रालयों द्वारा चलाए जा रहे रोजगार कार्यक्रमों संबंधी श्रम मंत्रालयों और राज्य सरकारों/केन्द्र शाषित क्षेत्रों को योजना प्रस्तावों की जांच

4. श्रम नीति

1. बंधक श्रम, बाल श्रम, प्रवासी श्रम, औद्योगिक सुरक्षा और न्यूनतम मंजूरी संबंधी मामले
2. दस्तकार प्रशिक्षण और रोजगार सेवा तंत्र संबंधी माम्लों पर भी जोर दिया गया है।

7.4 सारांश

एक देश की सामाजिक नीति तय करने की प्रक्रिया का सबसे पहला चरण है कि विद्यमान परिस्थितियों की आवश्यक जानकारी प्राप्त की जाए। नीति सदैव भविष्य का कार्यक्रम है। एक ऐसा कार्यक्रम है जो वर्तमान की समस्याओं की समस्याओं तथा अभावों का निस्तारण कर सके तथा सुखद भविष्य का आधार बन सके। यह वर्तमान परिस्थितियों का अगला कदम है। भारत में आजादी के पश्चात 1952 से भारत में योजनाबद्व विकास हेतु योजना आयोग का निर्माण किया गया था जो की 2014 तक कार्यरत रहा। 2015 में नीति आयोग की स्थापना कर दी गई।

7.5 शब्दावली

• **मुलभूत**	:	मौलिक , आधारभूत
• **अभिव्यक्ति**	:	विचार, मत, बात
• **भ्रातत्व**	:	भाईचारा

7.6 **अभ्यासार्थ प्रश्न** (Question for Practice)

1. योजना आयोग के उद्देश्य बताये|
2. योजना आयोग के सरचना पर प्रकाश डाले |
3. योजना आयोग की समितियों की व्याख्या कीजिये\
4. योजना आयोग की कार्यों की व्याख्या कीजिये\

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, छठी पंचवर्षीय योजना , योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, सातवीं पंचवर्षीय योजना , योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, आठवीं पंचवर्षीय योजना , योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, नौवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, दसवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया, बारहवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग भारत सरकार
- सिंह, मिश्र सिंह (2006) सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास, देव पब्लिकेशन, लखनऊ

इकाई - 8

सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं

Social Planning & Five Year Plans

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य (Objectives)
8.1 प्रस्तावना (Preface)
8.2 भूमिका (Introduction)
8.3 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं(Social Planning & Five Yaer Plan)
8.4 सारांश (Summary)
8.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question for Practice)
8.6 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

8.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाओं का विश्लेषणकरना है। इस अध्याय में सामाजिक नियोजन से सम्बन्धित पंचवर्षीय योजनाओं की भूमिका को स्पष्ट करना और उनका विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

8.1 प्रस्तावना (Preface)

आधुनिक समाज में सामाजिक नियोजन शब्द का प्रयोग अत्यधिक होने लगा है। समाज विज्ञानों में यह अध्ययन का प्रमुख विषय बनता जा रहा है, क्योंकि व्यक्ति संतुलित सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था चाहता है तथा उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना चाहता है ताकि उसे सुख एवं संतोष प्राप्त हो सके, इसलिए वह अपने जीवन के विविध क्षेत्रों में योजनायें बनाने का प्रयास करता है।

8.2 भूमिका (Introduction)

नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जो कि पूर्व निर्धारित होती है। नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक समय में रही है, क्योंकि बिना नियोजन के विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना असम्भव सा प्रतीत होता है। नियोजन से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जिसके माध्यम से लक्ष्य को पूरा किया जा सके और कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण समस्या को दृष्टिगत करते हुए किया जा सके। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए सामाजिक नियोजन आवश्यक हैं।

8.3 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं (Social Planning & Five Year Plan)

महान् अर्थशास्त्री एम. विश्वेश्वरैया ने 1934 में अपनी पुस्तक ‘प्लान्ड इकॉनोमी’ प्रकाशित करते हुये भारत में नियोजित सामाजिक-आर्थिक विकास की आधार शिला रखी। 1937 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत की परिस्थितियों के अनुरूप नियोजन के मसले पर विचार-विमर्श किया। 1938 में जब सुभाष चन्द्र बोस भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बने, उन्होंने उपयुक्त नियोजन के माध्यम से सामाजिक-आर्थिक विकास के प्रोत्साहित किये जाने के लिये राष्ट्रीय नियोजन समिति बनाई। 1944 में अंग्रेजी सरकार द्वारा नियोजन तथा विकास विभाग खोला गया। 1945 में औद्योगिक नीति की घोषणा की गयी। 1946 में कांग्रेस-लीग मंत्रालय ने नियोजन तथा विकास विभाग को समाप्त कर सलाहकार नियोजन बोर्ड गठित किया। स्वतंत्रता मिलने पर भारतीय संविधान के लागू किये जाने के बाद भारत एक सम्प्रभूतापूर्ण प्रजातांत्रिक गणतंत्र बना। 1977 में संविधान में आवश्यक संशोधन करते हुये इसे सम्प्रभुतापूर्ण, समाजवादी, धर्म निरपेक्ष, प्रजातांत्रिक गणतंत्र घोषित किया गया। आर्थिक तथा सामाजिक नियोजन को भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची में केन्द्रीय सूची के अन्तर्गत रखा गया है; और इसके राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अधीन भारतीय समाज के विकास की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की गयी जिसका विवरण पहले ही दिया जा चुका है।

भारत में सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिये पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारम्भ 1951 से किया गया। इन पंचवर्षीय योजनाओं का मूल उद्देश्य तीव्र और अनवरत आर्थिक विकास करना तथा आय और सम्पत्ति में पायी जाने वाली विषमताओं को अत्यधिक प्रभावपूर्ण एवं सन्तुलित रूप से कम करते हुये सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करना था ताकि आर्थिक शक्ति पर एकाधिकार में कमीं की जा सके और देश को प्रत्येक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाया जा सके। पंचवर्षीय योजनाओं में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया जिसके अधीन सार्वजनिक तथा निजी दोनों क्षेत्रों को एक दूसरे के पूरक के रूप में स्वीकार किया गया। बुनियादी एवं भारी उद्योगों जिनमें अधिक पूँजी निवेश की आवश्यकता है, के प्रोत्साहन का उत्तरदायित्व सार्वजनिक क्षेत्र पर डाला गया और लोगों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये आवश्यक व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व निजी क्षेत्र पर डाला गया। इन पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत सामाजिक एवं निजी हितों के बीच आवश्यक सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत किये गये महत्वपूर्ण प्रावधानों का योजनावार विवरण इस प्रकार है:-

8.3.1 पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56)

योजना आयोग के अनुसार पहली पंचवर्षीय योजना के दो प्रमुख उद्देश्य थे:

- युद्ध तथा विभाजन के कारण अर्थव्यवस्था में उत्पन्न हुये असन्तुलन को ठीक करना; एवं
- भावी अर्थव्यवस्था के सर्वतोन्मुखी संतुलित विकास की प्रक्रिया को प्रारम्भ करना। इन मौलिक उद्देश्यों के अतिरिक्त खाद्य एवं कच्चे माल के उत्पादन में वृद्धि

करना; ऐसी योजनाओं को कार्यान्वित करना जो आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनायें तथा सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करें; अधिक बड़े स्तर पर समाज सेवाओं का विस्तार करना; तथा विकास कार्यक्रमों को आयोजित करने के लिये आवश्यक मशीनों की व्यवस्था करना भी योजना का उद्देश्य था।

प्रारम्भ में सार्वजनिक क्षेत्र के लिये 2069 करोड़ रुपये के परिव्यय की परिकल्पना की गयी थी जिसे अन्ततः बढ़ाकर 2378 करोड़ रुपये कर दिया गया किन्तु वास्तविक व्यय 1960 करोड़ रुपये ही रहा और इस प्रकार यह मौलिक अनुमान से भी कम रहा। इस योजना में वृद्धि तथा सामुदायिक विकास पर 291 करोड़ (15 प्रतिशत), सिंचाई पर 310 करोड़ (16 प्रतिशत), बिजली पर 260 करोड़ (13 प्रतिशत), ग्रामीण तथा लघु उद्योगों पर 45 करोड़ (2 प्रतिशत), परिवहन तथा संचार पर 523 करोड़ (27 प्रतिशत) तथा समाज सेवाओं पर 459 करोड़ (23 प्रतिशत) रूपये खर्च किये गये।

पहली योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय 9110 करोड़ रुपये से बढ़कर 10800 करोड़ रूपये हो गयी; और इस प्रकार राष्ट्रीय आय में इस योजना काल में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुयी। इसी योजना काल में 2 अक्टूबर, 1953 को सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय प्रसार सेवायें प्रारम्भ की गयीं; तथा 1953 में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का गठन किया गया।

यद्यपि इस योजनाकाल में पर्याप्त प्रगति हुयी फिर भी देश की समस्याओं और आवश्यकताओं की दृष्टि में यह कहीं कम थी। केवल 0.45 करोड़ लोगों को ही सेवायोजन मिल सका; भारी उद्योग भी पर्याप्त संख्या में स्थापित नहीं हो पाये; शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति संतोषजनक

नहीं हो सकी; तथा जन सहभागिता प्राप्त नहीं हो पायी।

8.3.2 दूसरी पंचवर्षीय योजना(1956-61)

दूसरी पंचवर्षीय योजना का प्रमुख उद्देश्य समाज के समाजवादी ढाँचे की स्थापना करना और इसके लिये राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना; तेजी से औद्योगीकरण करना तथा भारी उद्योगों का विकास करना; रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना; आय तथा धन की असमानताओं को कम करना तथा आर्थिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण करना था। यह योजना मूलतः सिंचाई तथा परिवहन योजना थी। इसमें प्रारम्भिक विकास सम्बन्धी परिव्यय सार्वजनिक क्षेत्र में 4800 करोड़ रुपये तथा निजी क्षेत्र में 2400 करोड़ रुपये था। इसमें वास्तविक सार्वजनिक निवेश 4600 करोड़ तथा निजी निवेश 2150 करोड़ (कुल निवेश 6750 करोड़) रुपये रहा।

इस योजना का लक्ष्य 5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि करना, 10 करोड़ लोगों को अतिरिक्त रोजगार प्रदान करना तथा औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करना था। इस योजना काल में राष्ट्रीय आय में निर्धारित 25 प्रतिशत के स्थान पर केवल 29 प्रतिशत की वृद्धि हुयी। इस योजना की अवधि में पूँजीपति अधिक सुदृढ़ हुये और मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि हुयी।

8.3.3 तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-1966)

तीसरी पंचवर्षीय योजना के निम्नलिखित लक्ष्य थे:

राष्ट्रीय आय में प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत से अधिक वृद्धि करना तथा निवेश की ऐसी संरचना का निर्माण करना जिससे भावी योजनाओं में वृद्धि की दर न गिर सके;

1. खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होना तथा कृषि उत्पादन को बढ़ाना;
2. आधारभूत उद्योगों का विस्तार करना तथा मशीनों के निर्माण के लिये आवश्यक दक्षता को उपलब्ध कराना;
3. देश में उपलब्ध जनशक्ति का यथासम्भव अधिक से अधिक उपयोग करना एवं सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करना, तथा
4. अवसरों को और अधिक समानता को लगातार बढ़ाना, आय तथा धन की असमानताओं को कम करना तथा आर्थिक शक्ति का अधिक समानता के साथ वितरण करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अनुमानित 7500 करोड़ रुपये का परिव्यय तथा निजी क्षेत्र के लिये 4100 करोड़ रुपये के निवेश का निर्धारण किया गया। अन्तिम रूप से 10,400 करोड़ रुपये की कुल धन राशि निर्धारित की गयी जो दूसरी पंचवर्षीय योजना की तुलना में 54 प्रतिशत अधिक थी।

इस योजना की अवधि में औद्योगिक क्षेत्र, कृषि,साधारण शिक्षा एवं सेवायोजन के क्षेत्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। तकनीकी शिक्षा की प्रगति अवश्य उत्साहवर्द्धक रही। चिकित्सा, जनस्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पिछड़े वर्गों अथवा जन जातियों के कल्याण एवं औद्योगिक श्रमिकों और निम्न आय समूहों के लिये आवास का प्रावधान करने में भी कुछ प्रगति हुयी।

8.3.4 तीन वार्षिक योजनायें (1966-67, 1967-68 तथा 1968-69)

तीसरी पंचवर्षीय योजना 31 मार्च,1966 को समाप्त हो गयी किन्तु दुर्भाग्य से चौथी पंचवर्षीय योजना इस क्रम में न बन सकी। आन्तरिक अवधि में वार्षिक योजनायें चलाते हुये योजनाबद्ध विकास को आगे बढ़ाया गया। सितम्बर 1967 में योजना आयोग को पुनर्गठित किया गया जिससे यह निर्णय लिया कि चोथीपंचवर्षीय योजना 1969-70 से प्रारम्भ की जाय। इस प्रकार तीसरी योजना की समाप्ति एवं चौथी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ के बीच तीन वार्षिक योजनायें चलायी गयीं। इसका लक्ष्य अर्थव्यवस्था की उन कठिनाइयों को दूर करना था जो तीसरी योजना की अवधि के दौरान कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं तथा भारत-पाक युद्ध इत्यादि के परिणामस्वरूप उत्पन्न हो गयी थीं। इन वार्षिक योजनाओं में कृषि तथा इससे सम्बद्ध क्षेत्रों पर 1107.1 करोड़ (16.7 प्रतिशत), सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण पर 471 करोड़ (7.12 प्रतिशत), बिजली पर 1212.5 करोड़ (18.3 प्रतिशत), खाद्य तथा लघु उद्योग पर 126.1 करोड़ (1.9 प्रतिशत), उद्योग तथा खनिज पर 1510.4 करोड़ (22.8 प्रतिशत), परिवहन तथा संचार पर 1222.4 करोड़ (18.5 प्रतिशत) तथा समाज सेवाओं एवं अन्य पर 975.9 करोड़ (14.72 प्रतिशत) का परिव्यय निश्चित किया गया था। इस प्रकार इन वार्षिक योजनाओं का कुल परिव्यय 6625.4 करोड़ रुपये था। इन तीनों वार्षिक योजनाओं की अवधि में अर्थव्यवस्था अधिक सुदृढ़ हुयी, कृषि उत्पादन भी बढ़ा और राष्ट्रीय आय में 1.1 प्रतिशत की वृद्धि हुयी।

8.3.5 चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74)

चौथी पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य समाजवादी समाज की स्थापना तथा देश को सामाजिक न्याय की ओर अग्रसारित करना था। इसका मूल ध्येय लोगों के जीवन में ऐसे ढंगों के माध्यम से तीव्र गति से

वृद्धि करना था जो सामाजिक समानता तथा न्याय को प्रोत्साहित करें। चौथी योजना में कुल परिव्यय 16,000 करोड़ रुपये का था। इसके विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित थे:-

1. कृषि तथा औद्योगिक उत्पादों को विशेष महत्व प्रदान करना ताकि आयात में कमी हो एवं निर्यात बढ़े और शीघ्रातिशीघ्र आत्म निर्भरता प्राप्त की जा सके।
2. मूल्यों को स्थिर रखना, घाटे की व्यवस्था को समाप्त करना तथा दबावों से बचना।
3. कृषि के क्षेत्र में उत्पादन को बढ़ाना ताकि ग्रामीण जनता की आय में वृद्धि हो तथा खाद्यान्न और कच्चे माल की कमी न रह सके।
4. जनसाधारण के उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि करना ताकि कपड़ा, चीनी, दवायें, मिट्टी का तेल, कागज इत्यादि जैसी आवश्यक वस्तुओं की कमी न रहे।
5. पहले से ही चल रही धातु, मशीनों, साधनों, शक्ति एवं यातायात संबंधी योजनाओं को समय से पूरा करना तथा ऐसी योजनाओं को प्रारम्भ करना जो आम समुदाय के जीवन स्तर को ऊँचा उठा सकें, आत्मनिर्भर बना सकें तथा तीव्र गति से आर्थिक वृद्धि करा सकें।
6. सम्पूर्ण देश में परिवार नियोजन का विस्तार करना ताकि जनसंख्या वृद्धि में कमी हो सके और जनता का जीवन स्तर भी ऊँचा उठ सके तथा बच्चों की शिक्षा-दीक्षा एवं लालन-पालन ठीक से हो सके।
7. रासायनिक खादों, कीटनाशकों तथा कृषि में प्रयोग में लाये जाने वाले यंत्रों तथा पम्प सेटों, डीजल इन्जनों, ट्रैक्टर इत्यादि की व्यवस्था करना।
8. मानव संसाधनों के विकास के लिये आवश्यक अतिरिक्त सुविधायें प्रदान करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये यह निश्चित किया गया कि:-

(1) 5 प्रतिशत प्रति वर्ष वृद्धि दर हो ;

(2) कृषि में 5.6 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर हो ;

(3) 1970-71 के पश्चात पी. एल. 480 के अन्तर्गत खाद्यान्नों का आयात न किया जाय; तथा

(4) उद्योग में 8 से 10 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर हो तथा निर्यातों को 7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ाया जाय और अखाद्य सामग्री के आयात को 5 प्रतिशत की दर से घटाया जाय।

इस योजना की अवधि में कृषि की वार्षिक वृद्धि दर 2.8 प्रतिशत ही हो पायी। उद्योग की वार्षिक वृद्धि दर भी 3.9 प्रतिशत ही हो पायी। अर्थव्यवस्था की वार्षिक वृद्धि दर 3.3 प्रतिशत तथा प्रति व्यक्ति आय की वार्षिक वृद्धि दर 1.2 प्रतिशत तक ही पहुँच पायी। इस योजना की उपलब्धियाँ निर्धारित किये गये लक्ष्यों की प्राप्ति की दृष्टि से प्रत्येक क्षेत्र में कम रहीं।

8.3.6 पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974-78)

पाँचवी पंचवर्षीय योजना के दो प्रमुख उद्देश्य निर्धनता को दूर करना तथा आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने थे। विशेष रूप से इसका उद्देश्य कृषि तथा उद्योग के क्षेत्र में उत्पादकता में वृद्धि करना तथा

सार्वजनिक क्षेत्र को सुदृढ़ बनाते हुये आर्थिक शक्ति के संकेन्द्रण को कम करना; तथा निर्धनता को कम करने के लिये न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से समाज के विभिन्न क्षेत्रों एवं श्रेणियों के व्यक्तियों के लिये उपभोग के एक न्यूनतम स्तर का आश्वासन प्रदान करना था। इस योजना काल में चलाये गये न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अधीन 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को उनके घरों के पास प्राथमिक शिक्षा की सुविधायें प्रदान करने, सभी क्षेत्रों में एक न्यूनतम स्तर की समान सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं को प्रदान करने, अत्यधिक कमी वाले गाँवों में पेयजल की पूर्ति करने, 1500 अथवा उससे अधिक की जनसंख्या वाले गाँवों में सड़कों का निर्माण करने, भूमिहीन श्रमिकों को आवास के लिये विकसित भूखण्ड प्रदान करने, मलिन बस्तियों के पर्यावरण में सुधार करने तथा ग्रामीण विद्युतीकरण का प्रसार करने का प्रावधान किया गया। इस योजना में कुल परिव्यय 37250 करोड़ रुपये का था।

इस योजना की अवधि में औसत वार्षिक वृद्धि दर 5.2 प्रतिशत आयी जो पहले की सभी योजनाओं से अधिक थी। किन्तु जनसंख्या वृद्धि की दर अधिक होने के कारण प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दर 2.29 प्रतिशत ही रही। कृषि उत्पादन में वृद्धि की दर 4.58 प्रतिशत रही जो 6.2 प्रतिशत के निर्धारित लक्ष्य से कम थी। औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि दर 6.2 प्रतिशत के निर्धारित लक्ष्य के बराबर रही। यद्यपि इस योजना काल में सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की निष्पत्ति संतोषजनक थी, फिर भी निर्धनता और बेकारी की महत्वपूर्ण समस्याओं के समाधान की दिशा में संतोषजनक प्रगति नहीं हो पायी। पाँचवी पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल 1974 से 1978 के मध्य रहा।

8.3.7 छठीं पंचवर्षीय योजना (1980-85)

छठीं पंचवर्षीय योजना फरवरी 1981 में प्रकाशित हुयी इसके अन्तर्गत कुल 172210 करोड़ रुपये का परिव्यय रखा गया जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र में परिव्यय की धनराशि 97500 करोड़ रुपये तथा निजी क्षेत्र में 74710 करोड़ रुपये थी। आर्थिक वृद्धि दर का लक्ष्य 5.2 प्रतिशत तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि दर का लक्ष्य 3.3 प्रतिशत रखा गया।

इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य थे:-

1. निर्धनता तथा बेकारी को कम करना;
2. अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को बढ़ाना तथा संसाधनों के उपयोग में दक्षता लाना और उत्पादकता में सुधार करना;
3. आर्थिक तथा प्रौद्योगिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिये आधुनिकीकरण को और अधिक प्रोत्साहन प्रदान करना;
4. ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्त्रोतों का तीव्र गति से विकास करना;
5. आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से अक्षम जनसंख्या को विशेष रुप से ध्यान में रखते हुये न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना;
6. निर्धनों के पक्ष में सार्वजनिक नीतियों एवं सेवाओं को पुनर्वितरण की दृष्टि से सुदृढ़ करना ताकि आय तथा धन की असमानतायें दूर हो सकें;

7. विकास की प्रगति एवं प्रौद्योगिक उपलब्धियों के प्रसार के क्षेत्र में प्रादेशिक असमानताओं को अनवरत रुप से कम करना;
8. जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के लिये ऐसी नीतियों को प्रोत्साहित करना जिनके परिणामस्वरूप लोग स्वेच्छापूर्वक छोटे परिवार के आदर्श को स्वतः अपना लें;
9. पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणात्मक परिसम्पत्ति के संरक्षण तथा विकास को प्रोत्साहित करना; तथासमुचित शिक्षा, संचार तथा संस्थागत नीतियों के माध्यम से सभी वर्गों के लोगों को विकास की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से सम्मिलित करना।

इसी योजनाकाल में ग्रामीण अंचलों में निर्धनता को दूर करने के लिये समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार प्रारम्भ किये गये। इस योजना काल में आशातीत सफलता प्राप्त हुयी। आर्थिक स्थायित्व आया तथा वृद्धि एवं विकास की गति तीव्र हुयी। कृषि के क्षेत्र में 3.8 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से तथा कुल मिलाकर 5.2 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुयी।

8.3.8 सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990)

सातवीं पंचवर्षीय योजना तैयार करने से पहले योजना आयोग ने इससे सम्बन्धित नीति पत्र तैयार किया था जिसमें यह स्पष्ट कर दिया गया था कि इस योजना में आर्थिक-सामाजिक आत्मनिर्भरता पर सबसे अधिक बल दिया जायेगा। इस योजना में लक्ष्य के रूप में विकास की दर 5.00 प्रतिशत, औद्योगिक विकास की दर 7.00 प्रतिशत तथा कृषि सम्बन्धी विकास दर 4.00 प्रतिशत रखी गयी थी। इस योजना में तीन प्रमुख उद्देश्य रखे गये: (1) खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना; (2) सेवायोजन के अवसरों को बढ़ाना; तथा (3) उत्पादकता में वृद्धि करना। खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिये ‘सघन खेती’ पर बल दिया गया और इसे सफल बनाने के लिये अधिक से अधिक सिंचाई सुविधायें प्रदान करने तथा छोटे किसानों को कृषि सम्बन्धी नई प्रौद्योगिकी से लाभ पहुँचाने की व्यवस्था की गयी। सेवायोजन के अवसर बढ़ाने के लिये राष्ट्रीय ग्रामीण सेवायोजन कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन श्रमिक सेवायोजन गारण्टी कार्यक्रम का प्रावधान किया गया। उत्पादकता को बढ़ाने के लिये विभिन्न परिसम्पत्तियों से उत्पादन करने तथा सिंचाई, बिजली, परिवहन में वृद्धि करने की बात कही गयी। इस योजना में 3,38,148 करोड़ रुपये का कुल परिव्यय रखा गया जिसमें 1,80,000 करोड़ रुपये सार्वजनिक क्षेत्र तथा 1,58,148 करोड़ रुपये निजी क्षेत्र से सम्बन्धित थे। इस योजना के अन्तर्गत निम्नलिखित पर विशेष ध्यान देने की बात कही गयी:-

1. नियोजन का विकेन्द्रीकरण तथा विकास सम्बन्धी कार्यों में जनता की पूर्ण सहभागिता;
2. अधिक से अधिक मात्रा में ‘उत्पादक सेवायोजन’ उत्पन्न करना;
3. निर्धनता को दूर करना तथा विभिन्न प्रदेशों, शहरों तथा गाँवों के बीच असमानता को कम करना;
4. उपभोग के उच्च स्तरों पर खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना;

5. विशेष रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषाहार, स्वच्छता एवं आवास के क्षेत्रों में सामाजिक उपभोग के उच्च स्तर को प्राप्त करना;
6. निर्यात सम्वर्द्धन एवं आयात प्रतिस्थापन के माध्यम से आत्मनिर्भरता में आँशिक वृद्धि करना;
7. छोटे परिवार की मान्यता का स्वेच्छापूर्वक अपनाया जाना तथा आर्थिक एवं सामाजिक क्रिया में महिलाओं को उचित स्थान दिलाना;
8. अवस्थापनात्मक बाधाओं एवं अभावों को कम करना तथा अर्थव्यवस्था में उत्पादन क्षमता का सर्वत्र अधिक से अधिक उपयोग करना और उत्पादकता में वृद्धि करना;
9. उद्योग में प्रतिस्पर्धा, कार्यकुशलता एवं आधुनिकीकरण में वृद्धि करना;
10. ऊर्जा संरक्षण तथा ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्रोतों का विकास करना;
11. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का एकीकरण करना; तथा
12. पर्यावरण तथा परिवेश की रक्षा करना।

8.3.9 आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-1997)

योजनावधि (1992-1997) के दौरान 798,000 करोड़ रुपये के राष्ट्रीय पूंजी निवेश तथा सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 4,34,100 करोड़ रुपये के व्यय का प्रस्ताव किया गया। संसाधनों की स्थिति को देखते हुए राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों की योजनाओं के लिए 1,86,235 करोड़ रुपये तथा केन्द्रीय योजना के लिए 2,47,865 करोड़ रुपये रखे गये। आठवीं योजना में नियोजन के प्रकार में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये नियोजन की दिशा को आदेशात्मक के स्थान पर सांकेतिक की ओर मोड़ा गया। इस योजना में मानव विकास पर बहुत अधिक बल दिया गया। इस योजना में कुल परिव्यय 4,34,100 करोड़ रुपयों का था। इसके लिए योजना में निम्नलिखित क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई:-

1. सन् 2000 तक पूर्ण रोजगार के स्तर को प्राप्त करने की दृष्टि से रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध करना।
2. जनता की भागीदारी से जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण करना।
3. प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना और 15 से 35 वर्ष के आयु वर्ग के लोगों की निरक्षरता को पूर्णतःसमाप्त करना।
4. सभी के लिए स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था करना।
5. स्थायी विकास के लिए आधारभूत ढाँचे (ऊर्जा, परिवहन, संचार व सिंचाई) को विकसित करना।
6. खाद्य पदार्थों में आत्म निर्भरता के साथ निर्यात के लिए भी प्रयास करना।

आठवीं योजनावधि के दौरान आर्थिक सुधार प्रक्रिया प्रारम्भ की गई। आर्थिक सुधारों की वजह से अर्थव्यवस्था (या सकल घरेलू उत्पाद) की औसत वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी हुई। आठवीं योजनावधि के दौरान यह औसत वृद्धि दर 6.8 प्रतिशत रही जबकि सातवीं योजना काल में यह 6 प्रतिशत थी। कृषि

एवं सम्बद्ध क्षेत्र की औसत वृद्धि दर 3.9 प्रतिशत रही, जबकि सातवीं योजना में यह 3.4 प्रतिशत थी। इसी प्रकार उद्योग क्षेत्र में वृद्धि सातवीं योजना के 7.5 प्रतिशत की अपेक्षा आठवीं योजना के दौरान 8.0 प्रतिशत की दर से हुई। सेवा क्षेत्र में सातवीं योजना के 7.4 प्रतिशत की अपेक्षा आठवीं योजना में 7.9 प्रतिशत की दर रही थी। इस योजनावधि के दौरान सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में 24.3 प्रतिशत की दर सकल घरेलू बचत में तथा 25.7 प्रतिशत की दर से घरेलू निवेश में बढ़ोत्तरी हुई।

8.3.10 नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)

नौवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य ''वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय और समानता था'' नौवीं योजना के विशिष्ट लक्ष्य जो बाजार शक्तियों पर अधिक विश्वास और सार्वजनिक नीति की अनिवार्यताओं से उत्पन्न होते हैं। इस योजना में कुल परिव्यय 8,59,200 करोड़ रुपयों का था। इस योजना में निम्नलिखित क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई:-

1. कृषि और ग्राम विकास को प्राथमिकता देना ताकि पर्याप्त उत्पादक रोजगार कायम हो सकें और गरीबी दूर हो सके;
2. कीमतों में स्थिरता के साथ अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को त्वरित करना;
3. सभी के लिए खाद्य और पौष्टिक सुरक्षा उपलब्ध कराना और ऐसा करते हुए समाज के कमजोर वर्ग का पूरा ध्यान रखना;
4. सभी को समयबद्ध रूप में बुनियादी न्यूनतम सेवाएं (Basic Minimum Services) उपलब्ध कराना, इनमें प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा सुविधाएं, पीने का सुरक्षित पानी, आवास, यातायात एवं परिवहन द्वारा सभी से सम्बन्ध स्थापित करना;
5. जनसंख्या की वृद्धि पर नियन्त्रण प्राप्त करना;
6. विकास प्रक्रिया, पर्यावरण सुरक्षा के आश्वासन के लिए सामाजिक गतिशीलता और सभी स्तरों पर जनसहभागिता को बढ़ाना;
7. स्त्रियों और सामाजिक रूप से निर्बल वर्ग के लोगों को अधिक सम्पन्न बनाकर समाजार्थिक परिवर्तन एवं विकास का एजेन्ट बनाना;
8. जनसहभागिता को प्रोन्नत एवं विकसित करना और इसके लिए सहभागी संस्थानों, सहकारिताओं और अन्य स्वतः सहायता समूहों को बढ़ावा देना;
9. आत्मनिर्भरता के निर्माण के साधनों को सबल बनाना।

आठवीं योजना के दौरान 6.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर के विरूद्ध नौवीं योजना द्वारा प्राप्ति वृद्धि दर कम होकर 5.35 प्रतिशत हो गयी। नौवीं योजना के दौरान कृषि की वृद्धि दर जो कि आठवीं योजना के दौरान 4.7 प्रतिशत रही, गिरकर 2.1 प्रतिशत हो गयी। इसी प्रकार विनिर्माण की वृद्धि दर आठवीं योजना के लगभग 7.6 प्रतिशत के विरूद्ध गिर कर 4.5 प्रतिशत हो गयी।

8.3.11 दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

इस योजना के अधिकतर अनुवीक्षणीय लक्ष्य विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण के क्षेत्र में सामाजिक संकेतकों में महत्वपूर्ण सुधारों से सम्बन्धित हैं जिनका विकास तथा रोजगार सम्बन्धी लक्ष्यों की प्राप्ति से महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। इस योजना में निम्नलिखित कार्य प्रस्तावित किये गये:

1. महिलाओं के सशक्तीकरण की नीति को लागू करने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना
2. बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति तथा चार्टर
3. बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय बाल आयोग
4. दसवीं योजना में 8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करने का प्रावधान किया गया।

दसवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 15,25,639 करोड़ रुपये का वित्तीय प्रावधान सुनिश्चित किया गया तथा 2001-2002 में कीमतों पर निम्नलिखित मदों पर आवंटन किया गया।

8.3.12 ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में समेकित विकास के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित लक्ष्यों का निर्धारण किया गया:-

1. पांच प्रतिशत तक शिक्षित बेरोजगारी में कमी लाना तथा सत्तर लाख रोजगार के अवसरों का सृजन करना।
2. श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी दरों में वृद्धि लाना।
3. प्राथमिक विद्यालय स्तर पर न्यूनतम शैक्षिक मानकों को विकसित करना तथा उसकी प्रभाविकता को सुनिश्चित करना।
4. उच्च शिक्षा के स्तर पर 10-15 प्रतिशत की वृद्धि करना।
5. शिशु मृत्यु दर में कमी लाना।
6. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से सरकारी योजनाओं में महिलाएं अथवा बालिकाओं को लगभग 33 प्रतिशत का लाभ प्रदान करने को सुनिश्चित करना।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल 2012 से 2017 के मध्य है तथा इस योजना में स्थायित्व के साथ समेकित विकास के सिद्धान्त को अंगीकार किया है।

8.4 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस अध्याय में सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाओं का विश्लेषण किया गया है तथा सामाजिक नियोजन से सम्बन्धित विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है।

20.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

1 पंचवर्षीय योजना से आप क्या समझते हैं?

2 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाओं पर प्रकाश डालिए।

3 विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।

4 प्रथम पंचवर्षीय योजना की रूपरेखा बताइए।

5 निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) पांचवी पंचवर्षीय योजना

(ब) तृतीय पंचवर्षीय योजना

(स) छठी पंचवर्षीय योजना

(द) नवीं पंचवर्षीय योजना

8.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

- Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II-Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
- Singh, S., Mishra, P.k. D.k. and Singh, A.k. N.k.Bharat mein Samajik
- Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
- Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
- Agnihotri, I.k. and Awasthi, A.k. Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.
- Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig? k. Gokhle, S.k. D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.
- Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.
- Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

इकाई-9

सामाजिक विकास

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य (Objectives)

9.1 प्रस्तावना (Preface)

9.2 भूमिका (Introduction)

9.3 सामाजिक विकास की अवधारणा (Concept of Social Development)

9.4 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Social Development)

9.5 सामाजिक विकास की विशेषताएं (Characteristics of Social Development)

9.6 सामाजिक विकास के प्रकार्य (Functions of Social Development)

9.7 सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण कारक (Chief Components of Social development)

9.8 सामाजिक विकास में बाधाएं (Obstacles of Social development)

9.9 सामाजिक विकास के प्रारूप (Models of Social development)

9.10 सारांश (Summary)

9.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

9.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य सामाजिक विकास की अवधारणा, अर्थ, परिभाषा आदि का विश्लेषण करना है। इस अध्याय में सामाजिक विकास, सामाजिक उद्विकास, बाधाएं इत्यादि की भूमिका को स्पष्ट करना और उनका विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

9.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक विकास का होना उस दशा में निश्चित है जबकि अर्थव्यवस्था में ऐसे तीव्र परिवर्तन हों जिससे वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन बढ़ोत्तरी होती रहे। ऐसी अवस्था में देश का सम्पूर्ण विकास सम्भव हो पायेगा। अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ होने से निर्धनता में कमी आयेगी और देश का विकास सम्भव हो सकेगा।

9.2 भूमिका (Introduction)

सामाजिक विकास में प्रमुख रूप से सामाजिक पर्यावरण, आवास, स्वास्थ्य, एवं पोषाहार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, रोजगार एवं कार्य की परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक स्थायित्व एवं समाज कल्याण से सम्बन्धित सामाजिक परिस्थिति में सुधार लाने वाले प्रयास पाये जाते है। इस प्रकार सामाजिक विकास समाज के सदस्यों को इस प्रकार विकसित करने की प्रक्रिया है कि उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके।

9.3 सामाजिक विकास की अवधारणा (Concept of Social Development)

सामाजिक विकास की अवधारणा सामाजिक न्याय पर आधारित है। वर्तमान समय में सामाजिक विकास पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है क्योंकि अब तक यह बात भलीभांति सिद्ध हो गयी है कि सामाजिक विकास सम्पूर्ण विकास की धुरी है। सामाजिक विकास के केन्द्रीय महत्व को इसीलिए स्वीकार किया गया है क्योंकि यह मानवीय संसाधनों के विकास से सम्बन्धित है और अन्य विविध प्रकार के विकास मानवीय संसाधनों पर ही आधारित है।

सामाजिक विकास की महत्ता की सार्वभौमिक स्वीकृति के बावजूद इसके सम्बन्ध में अनेक प्रकार के भ्रम पाये जाते हैं। कभी इसे सामाजिक परिवर्तन, कभी सामाजिक उद्विकास और कभी सामाजिक प्रगति के पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। सामाजिक विकास इन सबसे भिन्न है।

9.3.1 सामाजिक उद्विकास तथा सामाजिक विकास

सामाजिक उद्विकास शब्द म्अवसनजपवद का हिन्दी रूपान्तर है जिसकी व्युत्पत्ति लैटिन शब्द Evolvere से हुयी है। श्म्श् का अर्थ है 'बाहर की ओर' (Out) और (Volvere)का अभिप्राय 'फैलने' से है। इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से Elovere अथवा Evolution का अर्थ किसी वस्तु के 'बाहर की ओर फैलने' से है। किन्तु किसी वस्तु का बाहर की ओर फैलना अथवा बढ़ना मात्र उद्विकास नहीं है। जैसे मिट्टी के बढ़ते हुए ढेर को हम उद्विकास नहीं कह सकते।

उद्विकास का अर्थ ऐसे फैलाव से है जिसके परिणामस्वरूप एक सरल वस्तु परिवर्तित होकर जटिल अवस्था में आ जाय। इस आशय को स्पष्ट करते हुए **हर्बर्ट स्पेंसर** ने कहा हैः 'उद्विकास पदार्थ का एकीकरण तथा उससे सम्बन्धित गति का विसरण है जिसके दौरान पदार्थ अनिश्चित तालमेल रहित समानता से निश्चित तालमेल युक्त विविधता में आता है।

मैकाइवर तथा पेज के मत में, ''परिवर्तन में केवल निरन्तरता होती है बल्कि परिवर्तन की दिशा भी होती है, से अभिप्राय उद्विकास से है।

इस प्रकार सामाजिक उद्विकास एक दिशा विशेष में होने वाला वह सामाजिक परिवर्तन है जो आन्तरिक शक्तियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है और जिसके फलस्वरूप समाज सरलता से जटिलता की ओर अग्रसित होता है।

स्पेंसर के मत में प्रारम्भ में सामज अत्यधिक सादा एवं सरल था। सामाजिक सम्बन्ध प्रत्यक्ष थे। परिवार ही सभी प्रकार के कार्यो का स्थल था। इस समाज में कुछ भी निश्चित नहीं था न तो जीवन, न

ही सामाजिक संगठन, और न ही संस्कृति। किन्तु धीरे-धीरे अनुभवों एवं नवीन प्रयोगों के आधार पर ज्ञान में वृद्धि होती गयी और सामाजिक संगठन तथा संस्कृति का विकास होता गया। सामाजिक उद्विकास प्रक्रिया जैविक उद्विकास की भांति कुछ निश्चित स्तरों से होकर गुजरी है।

मोर्गन के अनुसार विकास की अवस्थाएं : मोर्गन ने अनेक अवस्थाओं का उल्लेख किया है जिनमें से गुजरने के पश्चात ही समाज वर्तमान अवस्था तक पहुंच पाया है। मारगन के मत में प्रथम अवस्था जंगली अवस्था थी, इसके बाद बर्बरता अवस्था तथा उसके बाद सभ्यता की अवस्था आयी है। जंगली अवस्था में भी तीन स्तर रहे हैं:-

जंगली जीवन का निम्न स्तर : जिसे प्राचीन प्रस्तर युग कहा जाता है। इस स्तर पर मनुष्य मांस, पेड़ों की जड़े और छालें खाता था; स्वच्छन्द रूप से यौन सम्बन्ध स्थापित करता था; वृक्षों पर अथवा गुफाओं में अस्थायी रूप से रहता था; और प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के लिए खतरे का स्रोत बना रहता था।

जंगली जीवन का मध्य स्तर : इस स्तर पर प्रारम्भ आग जलाने की कला और मछली मारकर खाने के ज्ञान से हुआ। इस स्तर पर किये गये शिकार को आग से भूनकर खाया जाने लगा। इस स्तर पर मनुष्य छोटे-छोटे समूहों में पृथ्वी के विभिन्न स्थानों पर फैलने लगे। मारगन ने कुछ आस्ट्रेलियाई तथा पालीनेशियाई जनजातियों को इस स्तर का प्रतिनिधि करने वाला माना है।

जंगली जीवन का उच्च स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ धनुष बाण के अविष्कार के साथ हुआ। इस स्तर में पारिवारिक जीवन का आरम्भ हो गया था लेकिन यौन सम्बन्ध बहुत ढीले थे। इस स्तर में समूहों के आकार में वृद्धि हुयी और संघर्ष व्यक्तिगत न रहकर सामूहिक हो गये। क्योंकि इस स्तर में अधिकांश संघर्ष पत्थर के सामान्य हथियारों की सहायता से किये जाते थे इसीलिए इस काल को नूतन प्रस्तर युग भी कहा जाता है।

बर्बरता का निम्न स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ बर्तन बनाने की कला और उसके प्रयोग की विधि सीखने के समय से माना जाता है। इस स्तर में यद्यपि व्यक्ति का जीवन पहले से ही अधिक स्थायी बन चुका था, फिर भी मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता रहता था। इसी स्तर से सम्पत्ति की भावना का प्रादर्भाव हुआ। इस स्तर में दूसरे समूहों पर इसलिए आक्रमण किये जाते थे ताकि उनके हथियार, स्त्रियां एवं बर्तन छिने जा सके। इस स्तर पर परिवार का स्वरूप कुछ सीमा तक विकसित हो चुका था किन्तु स्वच्छन्द यौन सम्बधों पर नियंत्रण न हो पाने के कारण पितृत्व का निर्धारण अनिश्चित था।

बर्बरता का मध्य स्तर : इस स्तर पर प्रारम्भ पूर्वी गोलार्द्ध में पशुपालन एवं पश्चिमी गोलार्द्ध में सिंचाई द्वारा खेती करने तथा ईंट बनाने की कला के साथ हुआ। इस काल में कृषि का आरम्भ हो जाने के कारण घुमक्कड़ जीवन में काफी कमी हुई। परिवार का स्वरूप बहुत स्पष्ट हो गया था और अधिकतर परिवारों में स्त्रियों की शक्ति को मान्यता दी जाने लगी। सम्पत्ति की अवधारणा का और अधिक विकास हुआ तथा वस्तुओं के विनिमय का प्रचलन प्रारम्भ हो गया।

बर्बरता का उच्च स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ लोहा गलाने और उससे विभिन्न वस्तुएं बनाने की कला के अविष्कार से हुआ। इस स्तर में पुरुष एवं स्त्रियों के कार्यो में स्पष्ट विभाजन हो गया था। लोहे के नोकदार तथा तेज हथियारों का निर्माण होने लगा था। व्यक्तिगत सम्पत्ति में स्त्रियों की साझेदारी

प्रारम्भ हो गयी थी। छोटे-छोटे गणराज्यों की स्थापना भी होने लगी थी। इस स्तर पर 'धातु युग' के नाम से जाना जाता है।

सभ्यता की अवस्था में भी तीन स्तर रहे हैं:-

निम्न सभ्यताओं का स्तर : इसका प्रारम्भ वर्णाक्षर के प्रयोग एवं एक विशेष भाषा से हुआ। सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रारम्भ इसी स्तर से हुआ माना जाता है। इस स्तर में नगरों का विकास हो गया था। व्यापार किये जाने लगा था; तथा कला और शिल्पकला में भी उन्नति हो गयी थी।

मध्य सभ्यताओं का स्तर: इस स्तर में आर्थिक संगठन अत्यधिक व्यवस्थित हो चुका था। श्रम विभाजन तथा विशेषीकरण द्वारा आर्थिक क्रियाएं की जाने लगी थी। सामाजिक जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिए नियमों का निर्माण किया जाने लगा था। लोगो का जीवन पर्याप्त स्तर तक सुरक्षित हो गया था और एक सुसंगठित राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण हो चुका था।

उच्च सभ्यताओं का स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से माना जाता था। इस स्तर में समाज आधुनिक जटिल स्थिति में आ गया था। इस स्तर में बड़े पैमाने पर उत्पादन होना प्रारम्भ हुआ। व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना में वृद्धि होने के कारण पूंजीवादी आर्थिक संगठनों का विकास हुआ। कुछ स्थानों पर वर्ग संघर्ष के कारण सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति हुयी जिसके परिणामस्वरूप साम्यवाद का विकास हुआ। जन सामान्य को पूंजीवादी दुष्परिणाम से संरक्षण प्रदान कर एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर का आश्वासन प्रदान करने हेतु कल्याणकारी राज्य का विकास हुआ।

इस प्रकार मानव समाज प्रारम्भिक शिकार करने की स्थिति से जानवर पालने की स्थिति तदुपरान्त खेती करने की स्थिति से गुजरता हुआ वर्तमान में औद्योगिक स्थिति में पहुंचा है। उद्विकास के प्रत्येक युग के प्रत्येक चरण में सामाजिक संगठन, संस्कृति तथा धार्मिक विश्वासों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है।

सामाजिक उद्विकास और सामाजिक विकास में अन्तर: सामाजिक उद्विकास और सामाजिक विकास दोनों में निम्नलिखित अन्तर है:-

1. विकास सदैव ऊर्ध्वगामी होता है जबकि उद्विकास ऊर्ध्वगामी अथवा अधोगामी किसी भी प्रकार का हो सकता है।
2. विकास की प्रक्रिया में नियोजित ढंग से परिवर्तन किये जाते हैं जबकि उद्विकास की प्रक्रिया में परिवर्तन स्वतः होता है।
3. विकास का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के कुछ पहलुओं में इच्छित परिवर्तन करने से होता है जबकि उद्विकास का सम्बन्ध सम्पूर्ण सामाजिक जीवन से होता है।
4. विकास की अवधारणा मूल्यों से सम्बद्ध है, उद्विकास की अवधारणा मूल्यरहित एवं तटस्थ है।
5. विकास की प्रक्रिया एक चेतन एवं संगठित प्रक्रिया है जबकि उद्विकास एक स्वतः चालित एवं अचेतन प्रक्रिया है।

6. विकास की प्रक्रिया के नियम एवं क्रम विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न होते हैं जबकि उद्विकास की प्रक्रिया के नियम तथा क्रम सभी समाजों में समान एवं सुनिश्चित होते हैं।

सामाजिक प्रगति एवं सामाजिक विकास : प्रगति शब्द अंग्रेजी के ‘Progress’ का हिन्दी रूपान्तर है जिसकी व्युत्पत्ति लैटिन शब्द 'Progredior’ से हुयी है जिसका अर्थ 'To Step forword' अथवा आगे बढ़ना है इस प्रकार प्रगति का अर्थ आगे बढ़ना है।

आगे बढ़ने का प्रत्येक काल, स्थान एवं समूह में भिन्न-भिन्न अर्थ लगाया जाता रहा है। उदाहरणार्थ, राजतंत्र एवं सामन्तवादी व्यवस्था मे प्रगति का अर्थ जनता से अधिक से अधिक करों की वसूली करना और बेगार लेना समझा जाता था। 18वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक प्रगति का अर्थ प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखते हुए मानव मात्र को सुख एवं शान्ति का अनुभव कराना समझा जाता है। इस प्रकार प्रगति की अवधारणा एक सापेक्ष अवधारणा है। जो विकासशील देशों के लिए प्रगति है वही विकसित देशों के लिए पिछड़ापन हो सकता है। प्रगति की अवधारणा की इसी सापेक्षता के कारण मैकाइवर ने इसे ‘गिरगिट’ की तरह रंग बदलने वाला तथ्य कहा है।

प्रगति की अवधारणा मूल्यों से सम्बन्धित है। इसका परिमापन उन कसौटियों की पृष्ठभूमि में किया जाता है जिन्हें समाज अपनी योजना में मूल्यवान समझता है। सामाजिक प्रगति के सम्बन्ध में लमले ने यह विचार व्यक्त किया है‘‘ यह परिवर्तन है किन्तु यह एक इच्छित अथवा अनुमोदित दिशा न कि किसी दिशा में परिवर्तन लाता है।

आगबर्न तथा निमफाक के मत में, ‘‘प्रगति का अर्थ अधिक अच्छाई के लिए परिवर्तन है और इसीलिए इसके अन्तर्गत मूल्य सम्बन्धी निर्णय आवश्यक रूप से सन्निहित है।’’

गिन्सबर्ग के मत में, ‘‘प्रगति का अर्थ अधिक अच्छाई के लिए परिवर्तन है और इसलिए इसके अन्तर्गत मूल्य सम्बन्धी निर्णय आवश्यक रूप से सन्निहित हैं।’’

हाबहाउस के विचार में, ‘‘सामाजिक प्रगति का अर्थ उन गुणों के सम्बन्ध में सामाजिक जीवन में अभिवृद्धि है जिनके साथ मनुष्य मूल्यों को सम्बन्धित अथवा विवेकपूर्ण रूप से सम्बन्धित कर सकते है।’’

इस प्रकार सामाजिक प्रगति से हमारा अभिप्राय समाज द्वारा मान्यता प्राप्त उद्देश्यों की दिशा में होने वाला इच्छित परिवर्तन है जो मानव कल्याण में अभिवृद्धि करता है।

सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक विकास में अन्तर: सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक विकास में निम्नलिखित अन्तर है:-

1. विकास साधन है जबकि प्रगति साध्य। बिना विकास के प्रगति नहीं हो सकती किन्तु प्रगति के बिना भी विकास हो सकता है।
2. विकास का अधिकतर सम्बन्ध भौतिक संस्कृति से है जबकि प्रगति का सम्बन्ध अभौतिक संस्कृति से।
3. विकास का परिमापन प्रगति की तुलना में सरल है।
4. विकास सार्वभौमिक और सार्वकालिक है जबकि प्रगति सापेक्ष।

5. विकास में परिवर्तन का क्षेत्र प्रगति में होने वाले परिवर्तन की अपेक्षा अधिक व्यापक है।
6. विकास की अवधारणा प्रगति की अवधरणा की तुलना में सापेक्षतया अधिक स्थायी है।

9.4 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Social development)

विकास की अवधारणा के सम्बन्ध में पर्याप्त भ्रम रहा है। पाठक के मत में विकास की अवधारणा में स्पष्टता की कमी, ''विकास शब्द में सन्निहित विभिन्न अर्थों को अंग्रेजी में व्यक्त करने में शाब्दिक कठिनाई के कारण रही है। वैन न्यूवेनहाइजे के अनुसार विकास या तो साधित अथवा संसिद्धित होता है। विकास की प्रक्रिया से उत्पन्न होने वाली क्रिया सहित प्रक्रिया है। विकास एक कार्य अथवा एक साधित परिस्थिति हो सकती है। शंकर पाठक का यह मत है कि ''यह एक उद्देश्य अर्थात् प्राप्त किये जाने वाली एक स्थिति भी हो सकती है। नियोजन से सम्बन्धित साहित्य में विकास को प्रायः एक उद्देश्य के रूप में देखा जाता है तथा राष्ट्रीय नियोजन को इसकी प्राप्ति हेतु एक क्रिया अथवा उपकरण के रूप में समझा जाता है।'' विकास, परिवर्तन की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विभेदीकरण की वृद्धि होती है और इस प्रक्रिया के दौरान मानव जीवन में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

हाबहाउस ने सामाजिक विकास को परिभाषित करते हुए कहा है किः ''एक समुदाय उस समय विकसित होता है जबकि यह मापक्रम कुशलता, स्वतंत्रता तथा सेवाओं की पारस्परिकता में आगे बढ़ता है।''

एम.वी. एस. राव के अनुसार, ''सामाजिक विकास में प्रमुख रूप से सामाजिक पर्यावरण, आवास, स्वास्थ्य, एवं पोषाहार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, रोजगार एवं कार्य की परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक स्थायित्व एवं समाज कल्याण से सम्बन्धित सामाजिक परिस्थिति में सुधार लाने वाले प्रयास पाये जाते हैं।''

शंकर पाठक के मत में ''सामाजिक विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसमें महत्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक, जिन्हें समाज को परिवर्तित करने के लिए सोद्देश्यपूर्ण क्रिया के एक अंश के रूप में लागू किया जाता है, सन्निहित होते है।''

सामाजिक विकास समाज के सदस्यों को इस प्रकार विकसित करने की प्रक्रिया है कि उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके। सेवायोजन योग्य व्यक्तियों को सेवायोजन कार्य के उपयुक्त अवसर उपलब्ध हो सकें। वे कार्य की न्यायोचित एवं मानवीय परिस्थितियों में अपने समाज के उद्देश्यों की प्राप्ति में अपना पूर्ण योगदान दे सके, और वे अपने द्वारा किये गये अंशदान तथा सामाजिक न्याय की आवश्यकताओं के अनुसार अपने श्रम के लाभों में साम्यपूर्ण अंश प्राप्त करने में समर्थ हो सकें।

9.5 सामाजिक विकास की विशेषताएं (Characteristics of Social development)

सामाजिक विकास के अन्तर्गत समाज और व्यक्ति दोनों का सर्वांगीण विकास सन्निहित होने के कारण इसके लिए अपेक्षित विभिन्न पहलुओं यथा स्वच्छ पेयजल, पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोजगार, कार्य की उपयुक्त शर्तें एवं परिस्थितियां मनोरंजन तथा खेलकूद इत्यादि में चेतन, संगठित एवं नियोजित रूप से वांछित दिशामें परिवर्तन किये जाने आवश्यक है। सामाजिक विकास की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएं है:-

- समाज द्वारा व्यक्तित्व के विकास के लिए अपेक्षित विभिन्न प्रकार की सेवाओं का प्रावधान करते हुए मानव संसाधनों का समुचित विकास।
- समाज द्वारा विकसित किये गये मानव संसाधनों द्वारा उन्हें निर्धारित किये गये उत्तरदायित्वों को प्रभावपूर्ण रूप से निभाते हुए सामजिक क्रिया में अधिकतम योगदान।
- सामाजिक क्रिया से होने वाले लाभो में दिये गये अंशदान तथा किसी भी प्रकार की बाधिता के शिकार व्यक्तियों को सामाजिक न्याय के आधार पर साम्यपूर्ण वितरण।

9.6 सामाजिक विकास के प्रकार्य (Functions of Social development)

सम्पूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को एक ऐसी निश्चित दिशा की ओर ले जाना जिसमें मानवीय संसाधनों का सर्वांगीण विकास हो, उन्हें कार्य के उपयुक्त अवसर मिल सकें, वे सुरक्षित एवं स्वस्थ परिस्थितियों में संतोषजनक कार्य की शर्तों पर कार्य कर सकें और उन्हें सामाजिक सुरक्षा का समुचित आभास हो, सामाजिक विकास के प्रमुख प्रकार्य हैं। विशिष्ट रूप से सामाजिक विकास की प्रक्रिया के दौरान निम्नलिखित प्रकार्य सम्पादित किये जाते हैं।

1. सामाजिक न्याय का आश्वासन
2. आर्थिक विषमताओं की रोकथाम
3. सामाजिक असमानताओ का उन्मूलन
4. पिछड़े वर्गो का कल्याण एवं विकास
5. जीवन स्तर का उन्नयन
6. सामाजिक लाभों का साम्यपूर्ण वितरण
7. सेवायोजन के उपयुक्त अवसरों का निर्माण जनसंख्या वृद्धि पर रोक।

9.7 सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण कारक (Chief Factors of Social development)

निम्नलिखित कारक सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं:-

1. पोषाहार,
2. स्वच्छ पेयजल,
3. आवास,
4. शिक्षा,
5. कार्य/सेवा योजन;
6. स्वास्थ्य,
7. पर्यावरण की स्वच्छता, अनुरक्षण एवं विकास,
8. मनोरंजन एवं खेलकूद तथा
9. सांस्कृतिक विरासत का अनुरक्षण एवं विकास।

9.8 सामाजिक विकास में बाधाएं (Obstacles of Social Development)

सामाजिक विकास की प्रक्रिया व्यक्तित्व विकास व सम्पूर्ण समाज के निर्माण से सम्बन्धित होती है। इसलिए इसके मार्ग में अनेक बाधाएं आती है जिसका विवरण निम्नवत् है:-

1. उत्पादन के साधना में असमानता
2. जनयंख्या में तीव्र वृद्धि
3. निर्धनता
4. निरक्षरता
5. परम्परागत सांस्कृतिक मानसिकता
6. धर्म एवं जाति के कठोर बंधन
7. पोषाहार एवं सवास्थ्य सेवाओं में कमी
8. कार्य के अधिकार का आश्वासन न होना
9. दोषपूर्ण नियोजन
10. अपर्याप्त एवं भ्रष्ट सरकारी तंत्र
11. प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन
12. दोषपूर्ण औद्योगिकीकरण
13. नगरीकरण में तीव्र वृद्धि

14. महिलाओं की निम्न स्थिति
15. जनसहभागिता में कमी

9.9 सामाजिक विकास के प्रारूप (Models of Social development)

सामाजिक विकास के प्रारूप समय, स्थान एवं स्थिति पर निर्भर करते है अतः सामाजिक विकास के प्रारूप सार्वभौमिक नहीं हो सकते है। पी0 के0 बाजपेई ने सामाजिक विकास के प्रारूपों का उल्लेख (Encyclopaedia of Social Work, third Edition) निम्नवत् रूप में किया है:-

1. सामर्थ्य प्रारूप
2. आत्मचेतनात्मक प्रारूप
3. सशक्तीकरण प्रारूप
4. सहभागिता प्रारूप
5. सामाजिक विधान प्रारूप
6. प्रजातात्रिंक प्रारूप
7. आर्थिक प्रारूप
8. मानव विकास प्रारूप
9. पारिस्थितिकी प्रारूप

9.10 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस अध्याय में सामाजिक विकास की अवधारणा, आशय, परिभाषा,विशेषताएं, बाधाएं एवं प्रारूपोको स्पष्ट किया गया है।

9.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

1 सामाजिक विकास की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?
2 सामाजिक विकास के अर्थ एवं परिभाषा पर प्रकाश डालिए।
3 सामाजिक उद्विकास और सामाजिक विकास में अन्तर कीजिए।
4 मोर्गन के अनुसार विकास की अवस्थाओं को स्पष्ट कीजिए।
5 निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
    (अ) सामाजिक विकास के प्रारूप
    (ब) सामाजिक विकास में बाधाएं
    (स) सामाजिक प्रगति
    (द) सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक विकास में अन्तर

9.11 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

- Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II- Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
- Singh, S., Mishra, P.k. D.k. and Singh, A.k. N.k. Bharat Mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
- Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
- Agnihotri, I.k.and Awasthi, A.k.Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.
- Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig? K.Gokhle, S.k.D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.
- Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.
- Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.
- Economic Development-Principles and Patterns (ed.k. by H.F.k. Williamson and C.k. A.k. Buttrick)
- G.k. M.k. Meier and R.k. E.k. Baldwin, Economic Development Theory, History, Policy.
- L.k. W.k. Shanan, Underdeveloped Areas,.
- Buchnan and Ellis, Approaches to Economic Development.

इकाई-10

सामाजिक एवं आर्थिक विकास: विभिन्नताएँ एवं समानताएँ

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 सामाजिक विकास: अवधारणा

  10.2.1 सामाजिक विकास: अर्थ, परिभाषाएँ, विशेषताएँ

  10.2.2 सामाजिक विकास के उद्देश्य

  10.2.3 सामाजिक विकास के सूचक

10.3 आर्थिक विकास: अवधारणा

  10.3.1 आर्थिक विकास के उद्देश्य

  10.3.2 सामाजिक तथा आर्थिक विकास में समस्याएँ

10.4 आर्थिक एवं सामाजिक विकास: समानताएँ एवं विभिन्नताएँ

10.5 सारांश

10.6 शब्दावली

10.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.8 संदर्भ सूची

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के पश्चात आप

- समाजिक विकास की अवधारणा को जान पाएगें
- आर्थिक विकास की अवधारणा को समझ पाएगें
- सामाजिक एवं आर्थिक विकास में समानता तथा अन्तर समझ पांएगें

10.1 प्रस्तावना

सामाजिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति तथा समुदाय दोनों उन्नत एवं बेहतर जीवन स्तर को प्राप्त करते हैं। सामाजिक विकास सामाजिक परिवर्तन की व्यापक प्रक्रिया का एक विशेष अंग है जिसमें मानवीय संसाधनों को एक विशेष दिशा में जानबुझ कर चेतन, नियोजित एवं संगठित रूप से विकसित करते हुए जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने से विकसित किया जाता है।

वहीं आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को मजबूती देता है। सामाजिक तथा आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास की धुरी है।

10.2 सामाजिक विकास: अवधारणा

कोई भी समाज अपनी आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक विचारधारा को देखते हुए अपने लिये विकास के तरीके, विचारधारा, रणनीतियाँ तथा प्रारूपों का चयन करता है। विकास की अवधारणा के सम्बन्ध में हमेशा से ही मतभेद रहा है। विकास परिवर्तन भी एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विभेदीकरण की वृद्धि होती है इस प्रक्रिया के दौरान मानव में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

विकास को हमेशा से ही एक पृथकतावादी दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसमें एक तरफ सामाजिक विकास को महत्त्व दिया जाता है तो कभी आर्थिक विकास को।

10.2.1 सामाजिक विकास: अर्थ,परिभाषा एवं उद्देश्य

सामाजिक विकास का अर्थ सामान्य शब्दों में समाज में निहित सभी समुदायों के वर्गों, व्यक्तियों के उस विकास से है जो उन्हें सम्मान, समानता तथा सामाजिक न्याय उपलब्ध कराते हुए बेहतर जीवन की व्यवस्था करे।

सामाजिक विकास की परिभाषाएँ

1. सलीमा ओमर के अनुसार "सामाजिक विकास एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी समाज में समेकित, सन्तुलित एवं एकीकृत सामाजिक एवं आर्थिक विकास को प्राप्त किया जाता है। तथा यह समाज में मानवीय सम्मान, समानता तथा सामाजिक न्याय के मूल्यों को व्यक्त करती है।"
2. हाबहाउस के अनुसार "एक समुदाय उस समय विकसित होता है जबकि यह आप क्रम, कुशलता तथा सेवाओं की पारस्परिकता में आगे बढ़ता है।"
3. हेनरी मास के अनुसार "सामाजिक विकास ऐसी प्रक्रिया है जिसमें लोग इस योग्य हो जाते हैं कि वह पूर्ण क्षमताओं तथा उत्तरदायित्वों के साथ वार्तालाप कर पायें।"
4. एम. एस. राव के अनुसार "सामाजिक विकास में प्रमुख रूप से सामाजिक पर्यावरण, आवास, स्वास्थ्य एवं पोषाहार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, रोजगार एवं कार्य की परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक स्थायित्व एवं समान कल्याण से सम्बन्धित सामाजिक परिस्थितियों में सुधार लाने वाले प्रयास पाये जातें हैं।"
5. पाठक के अनुसार, "सामाजिक विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसमें महत्त्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जिन्हें समाज को परिवर्तित करने के लिये सोद्धेष्यपूर्ण क्रिया के एक अंश के रूप में लागू किया जाता है, सन्निहित होंते हैं।"
6. पैग के अनुसार "सामाजिक विकास के दो अन्तर्सम्बन्धित आयाम हैं । पहला अपने तथा समाज कल्याण हेतु अनवरत रूप से कार्य करने के लिये लोगों की क्षमता में विकास, दूसरा संस्थानों में परिवर्तन है ताकि आवश्यकताओं के प्रकरण तथा इनकी प्राप्ति हेतु साधनों के

बीच सम्बन्ध को सुधारने पर प्रक्रिया से मानव आवश्यकताओं की पूर्ति सभी स्तरों, विशेषरूप से निम्न स्तर पर हो सके।”

उपरोक्त परिभाषाओं से कहा जा सकता है कि सामाजिक विकास एक प्रक्रिया है जो समाज के समुचित,सन्तुलित तथा नियोजित विकास को इस प्रकार प्रोत्साहित करती है कि समाज के सदस्य मानवीय परिथितियों में सामाजिक न्याय, समानता के साथ अपना आर्थिक, सामाजिक सर्वांगिण विकास करने में सक्षम हो पाए। सामाजिक विकास की परिभाषाओं के आधार पर सामाजिक विकास की निम्न विशेषताएँ हो सकती हैं -

1. सामाजिक विकास प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक विकास से जुड़ा हुआ है।
2. यह एक अन्तरविषयी तथा बहुआयामी प्रक्रिया है जो विभिन्न सामाजिक विज्ञानो को समेटे हुए है।
3. सामाजिक विकास सतत् परिवर्तन की क्रिया को संभव बनाता है।
4. सामाजिक विकास संगठित तथा नीतिगत प्रयासों पर आधारित होता है।
5. सामाजिक विकास एक दीर्घकालीन नियोजन मुख्यतः मानव संसाधन, पर्यावरण तथा सामाजिक व्यवस्था में सुधार के लिये किया जाता है।
6. समानता तथा सामाजिक न्याय के उद्देश्यों पर केन्द्रित होता है।
7. समाजिक विकास के केन्द्र में सामाजिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाना होता है। आवास, स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा, रोजगार, प्रशिक्षण, कार्य दशायँ, सामाजिक सुरक्षा तथा समाज कल्याण आदि स्थितियों में सुधार से सम्बन्धित है।

10.2.2 सामाजिक विकास के उद्देश्य

समाजिक विकास के निम्नलिखित उद्देश्य होते है -

1. समाजिक स्थिति में सुधार लाना।
2. मानवीय भावनाओं, गरीमा, समानता तथा सामाजिक न्याय की व्यवस्था करना।
3. व्यक्ति के सम्मानजनक जीवन पर केन्द्रित
4. लोगों पर सम्मानजनक आधारित विकास के प्रारूप का चयन
5. सामाजिक तथा आर्थिक नीतियों को एक दूसरे का पूरक बनाना
6. सामाजिक गत्यात्मकता को बढ़ावा देना।
7. संरचना तथा संस्थागत परिवर्तनों को बढ़ावा देना।
8. समाज में प्रजातान्त्रिक मूल्यों की स्थापना करना।
9. सामाजिक सामंजस्यता, सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देना।
10. आर्थिक सामाजिक नीतियों, रणनीतियों, नियोजन को व्यक्ति व समाज के सर्वांगिण विकास के अनुरूप बनाना।

11. सामाजिक विकास हेतु दीर्घकालीन निवेश को प्रोत्साहन देना इत्यादि।

10.2.3 सामाजिक विकास के सूचक

किसी भी देश में सामाजिक विकास को मापने के लिये सूचक निर्धारित किये जाते हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने सामाजिक विकास के सूचकों का उल्लेख करते हुए इन्हें जनसंख्या, स्वास्थ्य, आवास, पोषण, शिक्षा तथा संस्कृति, रोजगार तथा सामाजिक श्रेणियों में विभक्त किया है। इन सूचको का मुख्य उद्देश्य उक्त क्षेत्रों की वर्तमान स्थिति का पता लगाना उनमें सकारात्मक बदलाव लाना होता है। उच्च जीवन स्तर के लिए निम्न सूचक हो सकतें हैं-

1. आवास
2. खाद्य सुरक्षा
3. स्वास्थ्य
4. रोजगार
5. समाजिक सुरक्षा
6. समाजिक न्याय
7. सहभागिता
8. अवसर आदि।

भारत विकास प्रतिवेदन के अनुसार समाजिक विकास के निम्न सूचक हो सकते हैं-

1. जननांक्कीय सूचक जिनमें जेण्डर, मातृ मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, विभिन्न आयु वर्ग में जनसंख्या की स्थिति, लिंग अनुपात आदि।
2. गरीबी जिसमें प्रति व्यक्ति आय, विभिन्न आयु वर्ग आदि सम्मिलित हैं
3. रोजगार दर
4. साक्षरता दर- जिसमें महिला पुरुष, प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा प्राथमिक विद्यालय में नामांकन आदि सम्मिलित है।
5. जीवन दर
6. पोषण आदि को सम्मिलित किया जाता है।

10.3 आर्थिक विकास: अवधारणा

आर्थिक विकास की परिभाषा विभिन्न प्रकार से की गई हैं। मोटे तौर से विकास के सम्बन्ध में तीन विचारधाराएँ उल्लेखनीय हैं। एक विचारधारा राष्ट्रीय आय में वृद्धि पर बल देती है; दूसरी विचारधारा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की बात उठाती है और तीसरी विचारधारा जीवन में गुणात्मक सुधार लाए जाने से सम्बन्धित है। इन तीनों विचारधाराओं के अलग-अलग विवेचन एवं उनके मूल्यांकन के सहारे आर्थिक विकास की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

(1) राष्ट्रीय आय में वृद्धि

विकास की इस परिभाषा में कुल वास्तविक उत्पादन अथवा वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि को आधार बनाया गया है। यहाँ वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि को विकास का संकेतक माना गया है। यदि वास्तविक उत्पादन या आय में दीर्घकालीन वृद्धि होती है तो कहा जाएगा कि देश आर्थिक विकास कर रहा है। जिस दर से उत्पादन में वृद्धि होगी वही विकास की दर ठहरेगी। यदि उत्पादन में 5 प्रतिशत की दर से वृद्धि होती है तो इसका अर्थ यह हुआ कि विकास दर 5प्रतिशत है।

इस परिभाषा का केन्द्र बिन्दु वास्तविक उत्पादन है न कि उत्पादन का मुद्रा-रूप। वास्तविक उत्पादन में परिवर्तन मालूम करने के लिए हमें कीमतों के प्रभाव को दूर करना होगा। यदि किसी अवधि में कीमतों में परिवर्तन होता है तो आधार वर्ष की कीमत के सहारे उत्पादन के मुद्रा मूल्य में उसी के अनुसार समंजन किया जाता है। ऐसा करने से उस अवधि में वास्तविक उत्पादन की मात्रा निकल आएगी। इस परिभाषा में यही विकास का सार और संकेतक ठहराया गया है।

(2) प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि

यह अधिक लोकप्रिय परिभाषा है। यहां प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के रूप में आर्थिक विकास की परिभाषा की गई है। इसके अनुसार आर्थिक विकास वह प्रक्रिया है जिसमें वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन वृद्धि होती है। आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है। विकास विभिन्न तत्त्वों व शक्तियों की क्रिया का फल है जो परस्पर कारणात्मक रूप से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए मान लिजिए कि किसी देश में ये चीजे उपलब्ध हैं- लोगों की बचत-राशियाँ इकट्ठा करने वाली संस्थाएँ; उद्यमकर्ता जो पूँजीगत वस्तुओं के उत्पादन के लिए बचत का उपयोग करते हैं और ये पूँजीगत-वस्तुएँ अधिक मात्रा में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में सहायक हैं ; कड़ी मेहनत से काम करने और तकनीकी जानकारी रखने वाले श्रमिक आदि। इन सब बातों के सुमेल से प्रक्रिया संघटित होती है जो अधिक मात्रा में वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में मदद देती है।

दूसरे इस परिभाषा में वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि को विकास का सूचक ठहराया गया है। इसे मालूम करने के लिए दो प्रकार की समंजन-क्रिया आवश्यक है। एक तो कीमत-परिवर्तनों का हिसाब करना होगा। इससे वास्तविक राष्ट्रीय आय ज्ञात हो सकेगी। इसके अतिरिक्त प्रति व्यक्ति आय निकालने के लिए वास्तविक राष्ट्रीय आय के मूल्य को जनसंख्या से भाग देना होगा। इस प्रकार यदि वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है तो इसका अर्थ यह होगा कि देश में आर्थिक विकास हो रहा है।

तीसरे इस परिभाषा में इस बात पर बल दिया गया है कि प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन वृद्धि हो अर्थात वृद्धि लम्बी अवधि तक बनी रहे। यदि वर्ष-विशेषया अल्पकाल में अनुकूल परिस्थितियों के कारण प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है, लेकिन आगे चलकर फिर घट जाती है या बढ़ती नहीं रहती है तो यह आर्थिक विकास नहीं कहलाएगा। आर्थिक विकास का होना उसी दशा के दौरान उत्तरोत्तर बढ़ती रहे। दूसरे शब्दों में, वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन वृद्धि को ही यहाँ विकास का संकेतक माना गया है।

अस्तु, इस परिभाषा के अनुसार यदि वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन वृद्धि होती है, तो कहा जाएगा कि देश आर्थिक विकास कर रहा है। इस प्रकार की वृद्धि के अभाव में यह अर्थ निकलेगा कि देश में आर्थिक विकास नहीं हो रहा है।

(3) जीवन-कोटि में सुधार

यह नवीनतम विचारधारा है जिसमें जीवन-कोटि में सुधार को विकास का संकेतक ठहराया गया है। जीवन-कोटि में सुधार की जानकारी के लिए जीवन के तीन अंगो में हुए सुधार को लिया जाता है- प्रत्याशित आयु, शिशु-मृत्यु संख्या तथा साक्षरता। इन तीनों को मिलाकर जीवन-सूचकांक तैयार किया जाता है। इस सूचक के आधार पर देश में विकास होने या न होने का पता चलता है। यदि जीवन-सूचकांक में स्थायी तौर पर वृद्धि हो जो कि तभी सम्भव है जबकि देश में राष्ट्रीय उत्पादन का बंटवारा और उपयोग इस ढंग से हो कि अधिकाधिक लोग लाभ उठा सकें और फलस्वरूप शिशु - मृत्यु संख्या घटे तथा प्रत्याशित आयु और साक्षरता बढ़े तो यह इस बात का सूचक होगा कि देश में आर्थिक विकास हो रहा है।

इस परिभाषा में जन-कल्याण में वृद्धि को केन्द्रीय स्थान दिया गया है। इसके लिए राष्ट्रीय आय में वृद्धि के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि समुचित ढंग से उसका वितरण और उपयोग हो। इससे जीवन के उपर्युक्त अंगो में सुधार हो सकेगा। जीवन-कोटि में सुधार ही आर्थिक विकास का सही सुचक ठहराया गया है।

10.3.1 आर्थिक विकास के उद्देश्य

आर्थिक विकास के निम्न उद्देश्य हो सकते हैं -

1. राष्ट्रीय आय में वृद्धि
2. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
3. सकल घरेलू उत्पादन में वृद्धि
4. पूँजी का पर्याप्त मात्रा में संचय
5. अधिक पूँजी निवेश तथा बचत
6. उत्पादकता में वृद्धि।
7. आय के साधनों में वृद्धि, रोजगार की उपलब्धता
8. यातायात तथा संचार के साधनों में वृद्धि
9. श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण
10. कृषि का तीव्र गति से विकास

10.3.2 भारत में सामाजिक तथा आर्थिक विकास में समस्याएँ

भारत में सामाजिक तथा आर्थिक विकास में निम्न समस्याएँ सामने आती है:-

1. जनसंख्या

सीमित संसाधनों की पृष्ठभूमि में जनसंख्या की वृद्धि आज भी तीव्र दर से हो रही है। अनेक प्रकार के प्रयासों के बावजूद परिवार कल्याण कार्यक्रम सफल नहीं हुआ है और जनसंख्या वृद्धि की दर को घटाकर इच्छित स्तर तक नहीं लाया जा सका है।

2. निरक्षरता

वर्तमान समय में सरकारी आँकडो के अनुसार साक्षरता में काफी हद तक वृद्धि हुयी है; किन्तु आज भी साक्षरता का प्रतिशत लगभग 65.38 है। महिलाओं में साक्षरता का स्तर 54.2 प्रतिशत ही है। शेष निरक्षर लोग उन अनेक योजनाओं से अनभिज्ञ है जो इनके विकास के लिये चलायी जा रही है। न केवल इतना, विकास की योजनाओं से लाभान्वित होने के लिये किये गये प्रयासों में इनका प्रबुद्ध एवं शक्तिशाली व्यक्तियों द्वारा शोषण भी किया जा रहा है।

3. उत्पादन के साधनों में असमानता

भूस्वामित्व की सीमा सम्बन्धी कानूनों एवं योजनाओं के लागू किये जाने के बावजूद भी कृषि प्रधान देश भारत में आज भी भूस्वामित्व के क्षेत्र में व्यापक एवं गंभीर असमानताएं हैं। कुछ लोग भूमि के बेनामी पट्टों का आश्रय लेकर भूस्वामित्व की सीमा सम्बन्धी कानूनों का उल्लंघन करते हुये बड़ी भूसम्पत्ति के स्वामी बने हुये हैं।

4. कृषि आधारित अर्थव्यवस्था

5. जातिवाद

भारतीय समाज में धर्म एवं जाति के बंधन आज भी कठोर हैं। विभिन्न धर्मों एवं जातियों के बीच सामाजिक दूरी बनी हुई है। जिसके परिणाम स्वरूप मिल जुल कर सहकारी ढंग से कार्य करने में अनेक व्यवधान उत्पन्न होते हैं। न केवल, यह धर्म एवं जाति के बंधन कुछ कार्यों को तुच्छ बताते हुये इन्हें न करने का भी निर्देष देते हैं।

6. पोषाहार एवं स्वास्थ्य सेवाओं की कमी

पोषाहार एवं अज्ञानता के कारण लोगों को आवश्यक पोषाहार उपलब्ध नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त हमारे देश में उपलब्ध सेवायें न केवल कम है बल्कि इनका प्रावधान भी ठीक से नहीं किया जा रहा है। इसका परिणाम यह होता है कि किसी भी राष्ट्र के विकास के लिये आवश्यक शारीरिक एवं मानसिक दोनों दृष्टियों से स्वस्थ व्यक्ति उपलब्ध नहीं हो पा रहें हैं।

7. भ्रष्टाचार

समाजिक विकास की विभिन्न योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिये विकसित किया गया सरकारी तंत्र न केवल परिमाणात्मक दृष्टि से अपर्याप्त है बल्कि गुणात्मक दृष्टि से अनेक प्रकार की कमियों से ग्रस्त है। यह सरकारी तंत्र अपने को जनता का सेवक न मानकर अधिकारी मानता है, अपने व्यक्तिगत हितों को सर्वाधिक प्रधानता प्रदान करता है तथा भ्रष्टाचार में लिप्त है।

8. दोषपूर्ण नीति क्रियान्वयन

हमारे देश में प्रत्येक स्तर पर जनसहभागिता के माध्यम से ग्रामीण अंचलो में गाँवों को तथा नगरीय क्षेत्रों में मोहल्लों को नियोजन की इकाई मानकर जिस प्रकार के यथार्थवादी एवं विकेन्द्रीकृत नियोजन की आवश्यकता थी, उस प्रकार का नियोजन नहीं किया गया। न केवल इतना, समाजिक न्याय के आधार पर आर्थिक अभिवृद्धि को प्रोत्साहित करते हुए समाज के निर्बल वर्गों के लिये विशेष प्रकार की योजनायें बनाकर उनके हितों का संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयास भी काफी देर से प्रारम्भ किये गये।

9. प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन

हमारे देश में व्यक्तिगत एवं सरकारी दोनों ही स्तरों पर प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन किया गया है जिसके परिणाम स्वरूप् पारिस्थितिकीय असंतुलन की समस्या उत्पन्न हो गयी है जो सामाजिक विकास की तो बात क्या सम्पूर्ण मानव प्रजाति के जीवन के लिये ही एक गंभीर खतरा बन गयी है।

10. जनसहभागिता की कमी

सरकारी तंत्र के परिमाणात्मक एवं गुंणांत्मक दोनोंदृष्टियों से अपर्याप्त एवं अनुपयुक्त होने के कारण देश के विकास के लिये प्रत्येक स्तर पर अधिक से अधिक जनसहभागिता आवश्यक थी। किन्तु दुर्भाग्य से इस दिशा में समुचित प्रयास नहीं किये गये और लोगों को देश के विभिन्न कार्यों में हर स्तर पर साझेदारी का आभास दिलाने के बजाय उन्हें विकास की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से सम्मिलित होने से जानबुझ कर अलग रखा गया।

11. निर्धनता तथा बेकारी।

10.4 आर्थिक एवं सामाजिक विकास: समानताएँ तथा विभिन्नताएँ

यद्यपि आर्थिक तथा सामाजिक विकास सम्पूर्ण विकास के सिक्के के दो पहलू हैं जो एक दूसरे से इतना घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है कि उन्हें एक दूसरे से पृथक कर पाना एक दुष्कर कार्य है और ये दोनों एक दूसरे के पूरक के रूप में कार्य करते हैं, फिर भी सैद्धान्तिक स्तर पर इनमें निम्नलिखित अन्तर स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है:-

1. आर्थिक विकास अर्थव्यवस्था तथा भौतिक संसाधनों में वृद्धि करता है। सामाजिक विकास समाज तथा मानव संसाधनों से सम्बन्धित शक्तियों में वृद्धि करता है।
2. आर्थिक विकास का प्रमुख उद्देश्य आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाना तथा भौतिक उन्नति करना है। सामाजिक विकास का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक न्याय तथा अवसरों की समानता का आश्वासन दिलाना है।
3. आर्थिक विकास में अभिवृद्धि, जीवन स्तर, आय के वितरण, उत्पादन, उपभोग, विनिमय, वितरण, निवेश, पूँजी, राजस्व इत्यादि का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक विकास में पोषाहार, पेयजल, आवास, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण, सेवायोजन, उपयुक्त कार्य की परिस्थितियों एवं शर्तों, सामाजिक सुरक्षा, उपयुक्त सामाजिक पर्यावरण, समाज कल्याण इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

4. आर्थिक विकास का कार्य अधिक मात्रा में पूँजी का संचय करना, बचत में वृद्धि करना, बड़ी संख्या में उद्योगों की स्थापना करना, उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ाना, कृषि का तीव्रता से विकास करना इत्यादि है। सामाजिक विकास का कार्य समाज सेवाओं, समाज कल्याण सेवाओं तथा सामाजिक सुरक्षा सेवाओं को इनकी आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों के लिये प्रभावपूर्ण रूप से आयोजित करना है।

5. आर्थिक विकास केवल इसलिय नहीं किया जाता कि आर्थिक समानता उत्पन्न हो। सामाजिक विकास सामाजिक समानता लाने के लिए ही किया जाता है।

6. आर्थिक विकास वितरण सम्बन्धी न्याय में विश्वास रखता है। सामाजिक विकास सामाजिक न्याय में विश्वास रखता है।

7. आर्थिक विकास की प्रक्रिया के दौरान राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि का प्रयास किया जाता है। सामाजिक विकास में जीवन स्तर में सुधार लाते हुये जीवन की गुणवत्ता को उन्नत बनाया जाता है।

8. आर्थिक विकास के अन्तर्गत निर्धारित किये गए उद्देश्यों की प्राप्ति एक निश्चित एवं सीमित अवधि के अन्तर्गत की जाती है। सामाजिक विकास के उद्देश्यों की प्राप्ति दीर्घकालीन योजना बनाते हुए लम्बी अवधि के दौरान की जाती है।

9. आर्थिक विकास में आर्थिक संस्थाओं की संरचना में परिवर्तन किया जाता है। सामाजिक विकास में व्यक्तियों की मनोवृत्तियों, मूल्यों, विश्वासों इत्यादि तथा समाज की संरचना एवं क्रिया में परिवर्तन किया जाता है।

10.5 सारांश

विकास की अवधारणा में प्रारम्भ से ही आर्थिक विकास को ही धुरी माना जाता रहा है। परन्तु समय के साथ-साथ सामाजिक विकास के अस्तित्व को भी स्वीकारा गया है। सामाजिक विकास जहाँ व्यक्ति तथा समाज की गरीमा, सम्मान, सामाजिक न्याय, सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था कर जीवन स्तर को उन्नत बनाता है। वहीं आर्थिक विकास पूँजी निवेश तथा बचत के द्वारा आय में तथा रोजगार में वृद्धि कर उन्नत जीवन स्तर का मार्ग प्रशस्त करता है।

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामाजिक विकास की अवधारणात्मक व्याख्या कीजिए।
2. सामाजिक विकास के अर्थ को बताते हुए उद्देश्यों को लिखिए।
3. भारत में सामाजिक तथा आर्थिक विकास में आने वाली समस्याओं को लिखिए।
4. समाजिक विकास तथा आर्थिक विकास के सुचकों को लिखिए।
5. आर्थिक एवं सामाजिक विकास में समानताएँ व असमानताएँ लिखिए।

10.7 संदर्भ ग्रन्थ

- सिंगर एच. डब्ल्यू (1968), रिसेन्ट ट्रेण्ड इन इकानोमिक थाट आन अण्डर डेवल्पड कण्ट्रीज, न्यूयार्क
- कूलकर्णी पी. डी. (1978) कंसेप्ट ऑफ सोशल डेवलपमेंट, राजस्थान जर्नल ऑफ सोशल वर्क
- हिगिन्स बेन्जामिन (1963) एवं इकानोमिक व्यू सोशल आस्पेक्ट ऑफ इकानोमिक डेवलपमेन्ट इन लेटिन अमेरिका, पेरिस
- अग्रवाल ए. एन. (1994) भारत में आयोजन एवं आर्थिक नीति, विश्व प्रकाशन

इकाई-11

सामाजिक विकास के प्रारूप

इकाई की रूप रेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 सामाजिक विकास के प्रारूप

 11.2.1. पूंजीवादी प्रारूप

 11.2.2. समाजवादी एवं साम्यवादी प्रारूप

 11.2.3. लोकतंत्रीय व समाजवादी प्रारूप

11.3 सारांश

11.4 शब्दावली

11.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन पश्चात आप -

- समाजिक विकास के पुंजीवादी प्रारूप को जान पायेगें।
- स्माजवादी एवं साम्यवादी प्रारूप को जान पायेंगे।
- लेकतंत्रीय समाजवादी प्रारूप को समझ पयेंगे।

11.1 प्रस्तावना

विकास के प्रतिरूप या प्रारूप से तात्पर्य उस नमुने या ढांचे से है जिसके आधार पर विकास के लिये विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को क्रियान्वित किया जाता है। किसी भी राष्ट्र का विकास किन्हीं पूर्व निश्चित् उद्देश्य एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु किया जाता है। इन उद्धेयों की प्राप्ति के लिये विकास के कारको के मध्य संतुलन स्थापित करने व सहसम्बन्ध बनाने की आवश्यकता पडती है।यह संतुलन किस प्राकर स्थापित किया जाये ? यह सहसम्बन्ध कैसे हो ? इन सबका ज्ञान हमे विकास के प्रारूप के माध्यम से होता है।

11.2 सामाजिक विकास के प्रारूप

संसार के विभिन्न देशों ने अपने सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिये कई पद्धतियों, नीतियों का पालन किया है। मुख्यतः वर्तमान में जो प्रारूप विभिन्न देशों में प्रचलन में है उनका वर्णन इस प्रकार है-

11.2.1.पूंजीवादी प्रारूप

विश्व के सबसे अधिक विकसित प्रजातंत्रों में संयुक्तराष्ट्रअमेरिका का स्थान सर्वप्रथम है। अमेरिका विकास के दृष्टिकोण से भी सर्वप्रथम माना जाता है। इस राष्ट्रके अन्तर्गत विकास पूँजीवादी संस्थाओं तथा स्वतंत्र आर्थिक व्यवस्था के माध्यम से हुआ है। जैसा कि हम जानते हैं कि शुद्ध पूँजीवादी और वैयक्तिक स्वाधीनता संसार के किसी देश में नहीं पाई जाती है। विश्व के प्रत्येक देश में कम से कम अनिवार्य सेवायें राज्य के क्षेत्र में हैं। लेकिन शेष आर्थिक क्रियाओं को स्वतंत्र छोड़ दिया गया है।

विकास का यह पूँजीवादी प्रतिरूप कुछ विशेष सिद्धांतों तथा उनकी लाभदायिकता पर आधारित है। विकास का यह प्रतिरूप स्वतंत्र स्पर्द्धा एवं प्राकृतिक विधान को स्वीकारता है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि नियमों को एक अहम सत्ता नियंत्रित करती है।

स्वतंत्र आर्थिक क्रिया में सम्मिलित होने वाला हर व्यक्ति, उद्योगपति अपनी व्यक्तिगत योग्यता के अनुसार इस क्रिया से लाभ ले पाता है। लाभ प्रेरणा निजी एवं स्वतंत्र व्यापार के लिए केन्द्रिय महत्व रखती है। हर व्यक्तिगत साहसी को पूर्ण प्रकार से अपनी आर्थिक क्रिया के साथ तादातम्य स्थापित करने के लिये बाध्य करता है। उसको विनियोजन का खतरा लेने की शक्ति भी प्रदान करता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्तिगत व्यापारी सम्पुर्ण एवं राष्ट्रीय आर्थिक क्रिया में अपना व्यक्तिगत योगदान करके सम्पुर्ण देश के आर्थिक तथा उससे सम्बन्धित विकास में सहायक होता है।

अमेरिका में इस प्रतिरूप की सफलता के विशेष कारण है। अमेरिका में प्राकृतिक साधनों का अत्यधिक महत्व रहा है। अनुकुल जलवायु, उपजाऊ भुमि तथा जल के उचित वितरण ने अमेरिका को पूँजीवाद , स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा और स्वतंत्र आर्थिक क्रिया के माध्यम से ही विकास के मार्ग में आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण कार्य किया।

पूंजीवदी आर्थिक व्यवस्था में व्यक्ति अपना हर कार्य बुद्धि एवं विवेक के आधार पर करता है। भावनाओं के आधार पर नहीं| अतः प्रत्येक क्रिया को एक मानदण्ड देकर चलता है। उदाहरणार्थ एक उत्पादक किसी वस्तु का उत्पदान करते समय उस वस्तु कीआवश्यकताओं के सम्बन्ध में ध्यान नहीं देता अपितु उत्पादन से प्राप्त लाभ की और उसका दृष्टिकोण होता है। अधिक लाभ की प्राप्ति के लिये मशीन लगाने, कुशल एवं सस्ते मजदुरों के चयन करने और उत्पत्ति के साधनों का उचित एवं सार्थक संगठन करने की आवश्यकता होती है।

इस कार्य में बुद्धि एवं विवेक की प्रधानता होती है, नकि आदर्शों एवं भावना की। इसके साथ ही प्रतियोगिता भी उचित रूप से तभी की जा सकती है जबकी व्यापक मात्र में उत्पादन कम मुल्य में, अच्छे माल का क्रय तथा बाजार की आवश्यकता, आदि विवेक पर आधरित होतें है। इसके लिये साहसी उत्पादक इस पूंजीवादी व्यवस्था में तैयार रहते है।

पूंजीवाद के रूप या ढंग

1. आर्थिक व्यक्तिवाद (समाज का न्युनतम नियंत्रण)
2. आर्थिक व्यवस्था की संरचना (कुलीनता)
3. वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का उपयोग
4. श्रम विभाजन तथा विषेशिकरण का महत्व
5. पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था विनियोग पर आधारित है।

पूंजीवादी व्यवस्था मे आर्थिक क्रिया के आर्थिक क्षेत्र पर राज्य या समाज के द्वारा निम्नतम नियंत्रण होता है। अन्य शब्दों में इसे ही आर्थिक व्यक्तिवाद से सम्बोधित किया जाता है। पूंजीवाद में निजी आर्थिक व्यवस्था पायी जाती है। व्यक्तिगत प्रयास उद्योग की क्षमता या लाभ हानि पर आधारित होता है।

दूसरी बात पुंजीवादी व्यवस्था में महत्व यह है कि पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था का ढ़ांचा कुलीनतंत्री होता है। उत्पादक एक होता है परन्तु उत्पादन में भाग लेने वाले अनेक होते है। उत्पादक वर्ग के थोड़े से लोग ही सत्ता को धारण करते है। यही कारण है कि इसे कुलीनतंत्री व्यवस्था के नाम से भी पुकारा जाता है। सोम्बार्ट कहता है कि इसी आर्थिक क्षेत्र में पूँजीपति और मजदूर का सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्ध में सेवायोजन की कुछ शर्ते भी होती हैं।

पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था में वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग होता है। इस कारण तकनीकि ज्ञान का महत्त्व बढ़ जाता है जो कि सीमित लोगों के पास होता है। इस प्रकार आर्थिक क्षेत्र पर नियन्त्रण थोड़े से तकनीति ज्ञान को जानने वालों का ही होता हैं। विशेषीकरण तथा बढ़ते हुए श्रम विभाजन के कारण आर्थिक व्यवस्था में विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति पैदा हो गई है। वर्तमान परिस्थितियों में कोई भी वस्तु विशेषीकृत ज्ञान वाले व्यक्तियों के सहयोग से ही बनती है। यद्यपि प्राचीन अवस्था में अर्थात् पूँजीवाद से पूर्व भी श्रम विभाजन था, परन्तु वह व्यक्ति को ध्यान में न रखकर जन्म व जाति के आधार पर था।

पूँजीवादी श्रम विभाजन कृत्रिम है। यह लाभ पर आधारित है क्योंकि यह व्यक्ति के व्यक्तित्व से सम्बन्धित नहीं है। उत्पादन केवल सीधे उपभोग के लिए न होकर विनियोग के लिए होता है। यहाँ तक कि मजदूर और पूँजीपति का सम्बन्ध भी एक बाजार सम्बन्ध है, क्योंकि मजदूर श्रम का विक्रय कर धन प्राप्त करता है और पूँजीपति वर्ग मजदूरी के बदले में श्रमिक से श्रम प्राप्त करता है।

इस प्रकार से पूँजीवादी व्यवस्था में बाजार एक महत्त्वपूर्ण संस्था है। वस्तुतः मार्क्स इस व्यवस्था को अमानवीकरण के नाम से सम्बोधित करता था। इस व्यवस्था में संतोष प्रत्यक्ष रूप के बारे में अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि इस व्यवस्था में पूँजीवादी को स्वतन्त्रता होती है। यह जैसा चाहता है वैसा ही करता है। उत्पत्ति में उसे पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। कुलीनतन्त्री व्यवस्था के समान पूँजीपति वर्ग समाज और उत्पत्ति के साधन पर अधिकार कर लेता है तथा जन-कल्याण की अपेक्षा श्रमिकों को उनके उचित मूल्य की अपेक्षा स्वयं के लाभ पर अधिक ध्यान दिया जाता है। पूंजीवादी प्रारूप इस बात पर केन्द्रित होता है कि अगर आर्थिक रूप से राष्ट्र समृद्ध होगा तो सामाजिक विकास स्वतः

हो जाएगा। उत्पादन में वृद्धि मशीनों का प्रयोग, आय में वृद्धि होने से समाज की उन्नति अपने आप हो जाती है। यही सोचकर अमेरिका जैसे राष्ट्र पूंजीवादी प्रारूप् को अपनाए हुए हैं।

11.2.2 समाजवादी एवं साम्यवादी प्रारूप

प्रथम श्रेणी के दूसरे विकसित देशों में वे राष्ट्र भी हैं जिन्होंने पूँजीवादी तथा प्रजातन्त्र के माध्यम से विकास न करके एक दूसरे प्रकार की सामाजिक-आर्थिक प्रविधि द्वारा समाजवाद एवं साम्यवाद के माध्यम से विकास का उच्च स्तर प्राप्त किया है। इन देशों में इस प्रकार के प्रतिरूपों की सफलता के लिये इन देशों में पाई जाने वाली दूसरे प्रकार की विशेष सामाजिक समस्याएँ, भौगोलिक पर्यावरण की विभिन्नता तथा दूसरे प्रकार की वैचारिकी की उत्पत्ति का प्रभाव इत्यादि उत्तरदायी है। रूस और चीन तथा इसके दूसरे साथी आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के सामूहिक नियन्त्रण तथा नियोजन के प्रतिरूपों को अपनाकर आगे बढ़ें है। विकास का यह समग्रवादी प्रतिरूप कार्ल मार्क्स तथा इंगेल्स के विचारों और लेनिन के व्यवहारिक प्रबन्धों से प्रभावित रहा है।

ये प्रतिरूप इस विश्वास पर आधारित है कि जब तक निजी सम्पत्ति को समाप्त नहीं किया जाता है और सम्पूर्ण आर्थिक क्रिया को एक शक्तिशाली केन्द्र से नियन्त्रित एवं नियोजित नहीं किया जाता तब तक देश में आर्थिक एवं सामाजिक विकास नहीं हो सकता है। उन सामाजिक समस्याओं को समाप्त नहीं किया जा सकता जिनको पूर्व की आर्थिक व्यवस्थाओं ने उत्पन्न किया था। क्योंकि रूस, चीन तथा इसके दूसरे सम्बन्धी देशों में भौगोलिक, आर्थिक एवं सामाजिक स्थितियाँ बिल्कुल दूसरे प्रकार की थीं।

अतः विकास के समग्रवादी प्रतिरूप को ही उचित समझा गया। इस सम्बन्ध में कार्ल मार्क्स की गहरीसोच थी कि व्यक्ति द्वारा व्यक्ति का शोषण एवं गुलामी को समाप्त करने के लिये इसको आवश्यक समझा गया कि निजी सम्पत्ति और प्रतिस्पर्धा को, जिसकी मुक्ति होना, वैयक्तिक स्वाधीनता की नीति के मानने वाले विचारकों का भ्रम है, समाप्त कर दिया जाये।

इस प्रकार देश की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर सामूहिक अधिकार प्राप्त कर लिया गया एवं अपूर्ण प्रतिस्पर्धा तथा एकाधिकार को समाप्त करने के लिए बाजार की शक्तियों को समाप्त कर दिया गया। इन देशों में राज्य जो कि सामूहिक इच्छा का प्रतिनिधित्व करता है, सम्पूर्ण आर्थिक क्रिया के लिए उत्तरदायी है। कौन-सी वस्तुएँ किन प्राथमिकताओं के साथ कितनी मात्रा में उत्पन्न की जायेंगी, कहाँ उत्पन्न की जायेंगी, कैसे उत्पन्न की जायेंगी, किन और कितने व्यक्तियों द्वारा उत्पन्न की जायेंगी और किनमें उनका वितरण किया जायेगा। इन सब निर्णयों का अधिकार राज्य के हाथ में है।

यही कारण है कि पश्चिमी देशों के लोग इस प्रतिरूप को राज्यवादी समाजवाद के नाम से पुकारते हैं। रूस और चीन ने इस प्रकार की आर्थिक एवं सामाजिक पद्धति के माध्यम से अपनी जनसंख्याओं को आर्थिक गुलामी तथा शोषण निर्धनता, बेरोजगारी, अज्ञान और अन्धविश्वास से निकालने का प्रयास किया है। इन देशों में यह मत प्रचलित है कि आर्थिक स्वतन्त्रता वास्तविक श्रेणी की स्वतन्त्रता है। इस विचारधारा का दूसरा पहलू यह भी है कि आर्थिक स्वतन्त्रता की दशा में तथाकथित राजनैतिक स्वतन्त्रताएँ कोई अर्थ नहीं रखती क्योंकि वास्तविक तथ्य स्वतन्त्रताओं को प्राप्त करने का नहीं वरन् उनसे लाभ उठाने का होता है। समाज के सदस्य की राजनैतिक स्वतन्त्रता से उस समय तक लाभ प्राप्त नहीं हो सकता जब तक उसको आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है।

मार्क्सवादी समाजवाद संसार में फैले अनेक सामाजवादों का जन्मदाता है। यह एक कट्टर मार्ग है, मूलतया यह एक ऐसा सिद्धान्त है जिसमें व्यक्तिगत पूँजी के लिए कोई स्थान नहीं है। मार्क्स का विचार था कि यदि मशीनों, पूँजी एवं भूमि आदि का उत्पादन के सम्पूर्ण साधनों पर समाज या राष्ट्र का स्वामित्व हो तो आर्थिक अन्याय एवं विषमतायें स्वयं समाप्त हो जायेंगी। बुर्जुवा वर्ग का अनुचित दबाव नष्ट हो जायेगा। स्वयं राज्य की कोई आवश्यकता नहीं रहेंगी, शोषण साधनों पर सर्वहारा वर्ग का स्वामित्व होगा, सम्पूर्ण उत्पादन पर श्रमिकों का अधिकार होने से उनके प्रयोग में आने वाली आवश्यक सुविधायें स्वयं जुट जायेंगी, सभी समाप्त हो जायेगा, मशीनें एवं कल-कारखाने श्रमिक वर्ग की होंगी, सभी लोग क्षमतानुसार कार्य करेंगे और उस पर किसी पूँजीवादी का अधिकार नहीं होगा। इसलिए वे स्वयं ही अपनी सम्पूर्ण क्षमता से कार्य करेंगे और अन्ततः उनका भौतिक एवं आर्थिक उत्थान अवश्यम्भावी होगा।

परन्तु यह सिद्धान्त दोष रहित नहीं है। कारण यह है कि इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सदैव ही हिंसा, शक्ति एवं राजनैतिक अधिनायकवाद का सहारा लिया गया है और प्रत्येक अवसर पर अन्त में मार्क्सवादी समाजवाद एक एकाधिकारी राज्य, पूँजीवाद में परिवर्तित हो गया है| सम्पूर्ण आर्थिक एवं राजनैतिक सत्ता, साम्यवादी दल में केन्द्रीभूत हो जाती है। दल लोकतन्त्रीय केन्द्रीकरण में निश्चित करता है और इस प्रकार सम्पूर्ण सत्ता सम्पन्न अधिनायकवाद को जन्म देता है। सिद्धांत लाभ एवं सम्पत्ति हो जाते हैं और व्यक्तिगत पूँजी के लिए कोई स्थान रिक्त नहीं रहता, किन्तु वेतन के रूप में अधिकारीयों की लम्बी चौड़ी आय होती है, उनका प्रभाव बहुमुखी होता है, वे विशेषाधिकार सम्पन्न होते हैं और निम्न वर्ग का उत्पीड़न एवं शोषण करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। उनके आदेशो को चुनौती नहीं दी जा सकती है। अपनी स्थिति के कारण ये दल एवं शासन दोनों पर ही सत्तारूढ़ रहते है। भय, विवषता एवं हिंसा कीशक्तियाँ सम्पूर्ण आर्थिक व्यवस्था को नियन्त्रित करती है। नैतिकता, अहिंसा एवं प्रेम के लिए कोई स्थान नही है। इन दुःखों के निवारण के लिए एक दूसरी क्रान्ति आवश्य क हो जाती है और यह क्रम निरन्तर चलता रहता है, इसके विपरित लोकतन्त्रीय समाजवाद, लोकतन्त्र पर आधारित है तथा मार्क्सवादी, समाजवाद एवं लोकतन्त्र के सर्वोत्तम गुणों से युक्त है।

11.2.3 लोकतन्त्रीय समाजवादी प्रारूप

लोकतन्त्रीय समाजवाद व्यक्ति की स्वतन्त्रता एवं महत्ता को स्वीकार करता है और साथ ही साथ सम्पूर्ण नागरिकों के लिए आवश्यक वस्तुओं यथा भोजन, कपड़ा, निवास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य की व्यवस्था करता है। धर्म, सम्प्रदाय, जाति, लिंग की सीमा के ऊपर यह लोकतन्त्रीय विधि द्वारा एवं शांतीपूर्ण साधनों से सभी को आर्थिक न्याय एवं समान-सुविधायें प्रदान कर विशमताओं को कम करता है। एक ओर यह आवश्यक एवं मूलभूत उद्योगों पर राष्ट्रीय नियन्त्रण का पक्षपाती है किन्तु साथ ही व्यक्तिगत क्षेत्र के उद्योगों की महत्ता स्वीकार करता है तथा उनकी सहायता करने में विश्वास रखता है। भारत देश ने इस प्रारूप को अपना रखा है।

इस प्रकार आर्थिक एवं राजनैतिक सत्ता विकेन्द्रीकरण होती है। सत्ता पर राज्य के एकाधिकार का ही दूसरा नाम साम्यवाद है। लोकतन्त्र जहाँ राजनैतिक स्वतन्त्रता एवं समानता पर बल देता है वहाँ साम्यवाद केवल आर्थिक न्याय पर। इसलिए दोनों ही अपूर्ण है। लोकतन्त्रीय समाजवाद दोनों सिद्धान्तों के उत्कृष्ट गुणों को संयुक्त करके एक नई एवं सर्व ग्राह्य विचारधारा को जन्म देता है जो

सम्पूर्ण समाज को लाभान्वित करती है तथा राजनैतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ आर्थिक न्याय प्रदान करती है।

लोकतन्त्रीय समाजवाद की विशेषताएँ

लोकतन्त्रीय समाजवाद की परिभाषा देना कठिन कार्य है और यही इसकी विशेष ता भी है। भारत जैसा देश विकास के एक ऐसे मार्ग से गुजर रहा है जिसमें सिद्धान्तों की कठोरता बाधक सिद्ध हो सकती है इसीलिए नम्यता अपनाना आवश्यक है, फिर भी देश एवं उसकी आर्थिक नीतियों को दिशा प्रदान करने के उद्देश्यों से एक स्पष्ट धारणा की आवश्यकता है फिर भी यह मान कर चलना कि सभी वस्तुओं पर सभी का अधिकार है यथोचित नहीं होगा। ऐसा करने से जनसाधारण में अकर्मण्यता व्याप्त हो जायगी तथा उसकी उत्थान भावना क्षीण हो जायगी और जो कुछ योगदान उससे मिल सकता था नहीं मिल पायेगा। इसलिए यह और भी अधिक आवष्यक हो जाता है कि लोकतन्त्रीय समाजवाद के अंगों एवं विभिन्न पहलूओं को ठीक से समझ लिया जाय|

1. **प्रत्येक के लिए न्यूनतम की व्यवस्था -** लोकतन्त्रीय समाजवाद में राज्य का प्रथम उद्देश्य, प्रत्येक नागरिक के लिये न्यूनतम आवश्यकताओं यथा, भोजन, कपड़ा, मकान, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की व्यवस्था करना है। यह देखना राज्य का कर्त्तव्य है कि कोई रोगी केवल इसीलिए न मर जाय कि इलाज कराने के लिये उसके पास धन नही था। राज्य इसके लिये निःशुल्क औशधालयों की व्यवस्था करेगा। कम से कम प्राथमिक शिक्षा सभी के लिये सुलभ हो। सभी के लिये आवास की व्यवस्था हो तथा प्रत्येक सक्षम व्यक्ति को रोजगार के साधन उपलब्ध हों जिससे रहन-सहन का एक स्तर बना रहे। अकालग्रस्त या प्राकृतिक विपदाओं से पीडित क्षेत्रों में मुफ्त भोजनादि की व्यवस्था करना लोकतन्त्रीय समाजवादी समाज का प्रथम कर्तव्य है।

2. **धन का न्यायपूर्ण वितरण -** धन सम्बन्धी विषमताओं को कम करना, लोकतन्त्रीय समाजवाद का द्वितीय प्रमुख उद्देश्य है। इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि सभी के पास समान धन हो या धनिकों का धन छीन कर गरीबों में बाँट दिया जाय। यदि ऐसा किया गया तो निर्धनों में काम करने की इच्छा ही समाप्त हो जायेगी तथा धनवानों का उत्साह भी ठंडा पड जायेगा। धन सम्बन्धी विषमताओं से नहीं बचा जा सकता और साथ ही साथ इस प्रकार की विषमता से देश की आर्थिक प्रगति होगी क्योंकि उन्नति के लिये स्पर्धा बनी रहेगी। किन्तु इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि कम से कम चरम विषमताओं को समाप्त करना लोकतन्त्रीय समाजवाद का कर्तव्य है। विषमता समाज की सहन शक्ति के भीतर हो। निम्न आय एवं अधिकतम आय में इतना अधिक अन्तर न हो कि सेवक स्वामी की तुलना में असहाय दिखाई पड़े।

3. **अवसर की समानता -** धर्म, सम्प्रदाय, जाति, लिंग या सामाजिक स्तर का भेदभाव किये बिना सभी को अवसर की समानता प्रदान करना समाजवादी समाज का आधार स्तम्भ है। अनादि काल से जातीय आधार पर एक निष्चित परिधि के भीतर कार्य करने के लिये मजबूर किया जाता था। समाजवादी समाज का उद्देश्य है कि योग्य एवं मेधावी छात्रों को सभी सुविधाएँ प्रदान की जाय जिससे वे निर्विध्न अपनी शिक्षा समाप्त कर सकें और अपने

उत्थान के साथ-साथ देश के उत्थान में भी सहायक सिद्ध हों। जाति, जन्म, धर्म, लिंग या सम्प्रदाय उनके व्यक्तित्व के विकास में बाधक न हो तथा सभी को समान अवसर प्राप्त हो।

4. **प्रत्येक के लिए सामाजिक सम्मान -** गाँधी जी का कथन है बिना इस बात का विचार किए कि अमुक सत्री या पुरुष, अमुक व्यवसाय करता है सभी को समान सम्मान प्रदान करना समाजवादी समाज का एक और सकारात्मक पहलू है। कोई कर्मचारी केवल इसलिए छोटा नहीं समझा जा सकता क्योंकि उसका वेतन कम है। कोई भी उत्तरदायित्व से वंचित नहीं है और इसीलिए सभी के पद का महत्त्व है। मेला साफ करने वाला केवल इस लिये नीचा नहीं समझा जाना चाहिए क्योंकि वह समाज की दृश्टि में वह एक नीच काम करता है यह तो उसके लिए गर्व की बात है कि वह ऐसा कार्य करता है जिसे समाज के 95 प्रतिशत व्यक्ति नहीं कर सकते हैं और साथ ही साथ वह समाज के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। समाजवादी समाज में सभी को समान सम्मान प्राप्त हैं।

5. **वैज्ञानिक प्रकृति -** पांचवें सकारात्मक पहलू का उद्देश्य आर्थिक एवं सामाजिक कठिनाईयों के निवारण हेतु एक ऐसे वैज्ञानिक स्वभाव का विकास करना है, जिसमें हिंसा के लिये कोई स्थान न हो तथा विकास की गति तेज हो जाय। केवल समाजवाद की स्थापना से ही किसी देश का उत्थान नहीं हो जाता। इसके लिए सबसे अधिक महत्त्व है वैज्ञानिक स्वभाव का जिसके बिना यदि समाजवाद आया भी तो वह ऐसा समाजवाद होगा जिसमें गरीबी एवं पिछड़ापन सर्वत्र होगा।

6. **धार्मिक एवं नैतिकता पहलू -** लोकतन्त्रीय समाजवाद एक आर्थिक विचारधारा ही नहीं अपितु सम्पूर्ण जीवन में नैतिकता का विकास है। इसका उद्देश्य जनसमुदाय में दक्षता, पवित्रता एक दूसरे के लिए सम्मान की भावना,निष्कपटता, कर्तव्य का विवेक तथा सभी के कल्याण के लिये आपस में सहयोग अर्थात् सर्वोदय जैसी उत्कृष्ट विशेषताओं को जन्म देकर उनका विकास करना है। यदि नैतिकता खो कर हमने सभी सुख प्राप्त कर भी लिये तो इन सुखों का लाभ क्या होगा। भौतिक सुखों के साथ ही साथ हमें अपनी आत्मा का भी विकास करना है। तकनीक एवं विज्ञान के इस युग में जहाँ चारों ओर भौतिक उपलब्धियों का ही बोलबाला है आध्यात्मिक विकास की ओर भी अधिक आवश्यकता है तभी बहुमुखी प्रतिभाशी समाज की कल्पना साकार हो सकेगी। भारत के लोकतन्त्रीय समाजवाद का उद्देश्य रहन-सहन का ही स्तर ऊँचा करना नहीं अपितु स्वयं जीवन का स्तर ऊँचा करना है। उसका उद्देश्य एक सर्वगुण सम्पन्न नागरिकों के समाज का विकास करना है|

लोकतन्त्रीय समाजवाद की स्थापना के लिए आवश्यक प्रयास -

लोकतन्त्रीय समाजवाद का सिद्धान्त ग्रहण करने मात्र से ही कोई विशेष लाभ नहीं होगा। इसके लिए नियोजित प्रयास करना आवश्यक है। समाजवाद या पूँजीवाद का सिद्धान्त ग्रहण करने से कोई देश गरीब या अमीर नहीं बन सकता। आवश्यकता इस बात की है कि उत्पादन का न्यायोचित वितरण हो। नागरिक परिश्रम एवं ईमानदारी से उत्पादन बढ़ाएँ। इस उपक्रम में देर लग सकती है फिर भी पूँजीवाद से कोई लाभ नहीं हो सकता। समाजवादी सिद्धान्त से क्रमशः उन्नति सम्भव हो सकेगी। इसके लिए नियोजित प्रयास की आवश्यकता है तभी समाज की रचना एवं विचारधारा सुनिश्चित मार्ग पर अग्रसर हो सकेगी।

1. अधिकतम उत्पादन -

समाजवादी समाज में नींव गरीबी, भुखमरी, अभाव एवं निराश्रयता के आधार पर नहीं रखी जा सकती है। बेरोजगारी दूर करनी होगी। एकाधिकार एवं केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति को नियन्त्रित करना होगा। उत्पादन इस सीमा तक बढ़ाना होगा कि अपनी जरूरत को पूरा करने के पश्चात भी, कुछ माल बाहर विदेशों में भेजा जा सके तथा उसका उत्पादन मूल्य इतना कम हो कि विकसित देशों के माल की तुलना में वह पहले बिक सके।

2. शिक्षा की सुविधा -

आज तक भारत की व्यवस्था इस प्रकार की रही है जहाँ श्री खुराना (नोबल पुरस्कार विजेता) और श्री जी. एस. सिरोही (प्रथम भारतीय जो उत्तरी ध्रुव पर पहुँचा) जैसे सुप्रतिष्ठित एवं मेधावी छात्रों के लिये उचित स्थान नहीं था। कितने ही ऐसे लोग जिनकी शिक्षा-दीक्षा का यदि उचित प्रबन्ध किया जाता तो सम्भवतः भारतीय इतिहास गगन देदीप्यमान तारागणों के रूप में उदय होते, निरक्षर रह जाते है और जो थोड़े से कुछ प्रयास करते भी है तो धनाभाव के कारण मार्ग में ही भटक जातें हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि विदेशी विश्वविद्यालयों की तरह ही यहाँ भी सरलता से मिल सकने वाली छात्रवृत्तियों की सुविधा, प्रत्येक योग्य एवं मेधावी छात्र को प्राप्त हो। छात्र देश की निधि है और इनका विकास स्वयं देश का विकास है। इस प्रकार की व्यवस्था करना लोकतन्त्रीय समाजवाद का प्रमुख कर्तव्य है।

3. बीमा की सुविधा -

विकासशील देशों में इस प्रकार की व्यवस्था है कि औद्योगिक एवं अन्य कर्मचारियों को इस प्रकार की सुविधायें स्वतः ही प्राप्त हो जाती है, किन्तु भारत जैसे पिछड़े देश में जहाँ अथक परिश्रम करने के पश्चात भी कठिनाई से दो वक्त का भोजन प्राप्त हो पाता है, जहाँ इस प्रकार की सुविधायें नाम मात्र को ही प्राप्त हैं। यह सत्य है कि राज्य बीमा निगम तथा इसी प्रकार की कुछ अन्य सुविधाओं के कारण आज का श्रमिक स्वयं को कुछ सुरक्षित समझने लगा है। फिर भी इस क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार की आवश्यकता है श्रमिकों, राज्य कर्मचारियों, निर्धनों, निराश्रितों, अपाहिजों एवं अनाथों के लिए कुछ नाम मात्र की सुविधायें प्रदान की गई किन्तु वे नगण्य है। साधनों की उपलब्धि के साथ-साथ इनका विस्तार किया जाना चाहिये।

4. संतुलित विकास-

समाजवादी अर्थव्यवस्था का उद्देश्य व्यक्तियों की विषमता एवं असमानता कम करना ही नही अपितु राष्ट्रके प्रत्येक क्षेत्र के सन्तुलित विकास की व्यवस्था करना है। क्षेत्र राष्ट्र का एक आवश्यक भाग है। इसलिए क्षेत्रिय विकास के अपूर्ण रहते राष्ट्र का आर्थिक विकास नहीं हो सकता।

तीसरी योजना में इस पहलू को ध्यान में रखते हुए विशेष प्रयास की व्यवस्था की गई। योजना आयोग ने स्वयं सन्तुलित रखते हुए विशेष प्रयास की व्यवस्था को समझा तथा उसे मान्यता प्रदान की।

5. पंचायती राज -

यह सोचना निरर्थक है कि व्यक्तिगत क्षेत्र के समाप्त कर देने से ही या उसका महत्व कम कर देने से सफलता एवं समृद्धि स्वयं दौड़ी चली आयेगी। जब तक सत्ता का विकेन्द्रीकरण नही किया जायेगा तथा उन वर्तमान कठिनाईयों को नही समझा जायेगा जो समाज में व्याप्त है तथा विकास की गति को अवरूद्ध करती है। तथा साथ ही स्थापना नहीं हो सकती।

सामुदायिक विकास -

कृषकों तथा कलकारखानों को तकनीकी जानकारी देने के लिये तथा उनका बहुमुखी विकास करनें के लिए विकास क्षेत्रों की स्थापना की गई। रूढिवादी कृषक धीरे-धीरे विकास मार्ग पर अग्रसर हो रहा है। अब वह समझने लगा है कि अपने परिश्रम का सदुपयोग कर अधिक से अधिक लाभ उठा सकता है। और बेकार समय में भी अपने आर्थिक उत्थान हेतु कुछ अंश कालिक कार्य कर सकता है। विकास क्षेत्रों के सम्बन्ध में समय-समाय पर शंकाएं प्रकट की गई वस्तुतः इनके ढाँचे को बदलने की आवश्यकता है तभी इनकी सेवाओं का सही उपयोग हो सकेगा।

भू दान आन्दोलन -

सहकारी एवं समाजवादी समाज की स्थापना के भूदान एवं ग्रामदान आन्दोलन महान नैतिक कदम है। भुमि का हिंसा रहित ढंग से बंटवारा करने का इससे अधिक अच्छा मार्ग हो ही नही सकता। इस आन्दोलन का जितना भोतिक महत्व है उससे कहिं अधिक नैतिक महत्व है। भारत जैसे गरीब एवं पिछड़े देश में यदि लाखों एकड़ जमीन एवं सैंकड़ो ग्राम, दान में दिये जा सकते हैं तो निश्चय ही हिंसा रहित आर्थिक क्रान्ति सम्भव है। हृदय परिवर्तित हो सकता है और स्वयं समाज की संरचना हो सकती है।

जनशिक्षा -

शिक्षा के अभाव में न लोकतंत्र पनप सकता है और न समाजवाद| कम से कम एक सिमित स्तर की शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये यदि आने वाली पीढ़ी ही अशिक्षित रह जायेगी तो देश के उत्थान में उनसे किस प्रकार के सहयोग की आशा की जा सकती है।

अ. व्यवासिक शिक्षा -

इस क्षेत्र में एक नये सिरे से विचार करने की आवश्यकता है आज की शिक्षा का ढ़ाँचा विदेशी शासनकाल में विदेशियों के लाभ के लिये स्थापित किया गया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी इस क्षेत्र में विशेष कार्य न हो सका। आज का युवक यदि बीस साल तक भी पढ़ता रहे तो भी नौकरी मिलना संभव नहीं है। यद्यपि कुछ शिक्षा संस्थान व्यवसायिक महत्व को ध्यान में रखकर खोले गए हैं किन्तु उनकी सरकार नगण्य है। आवश्यकता इस बात की है कि प्राथमिक शिक्षा तो सभी के लिए आवश्यक हो किन्तु एक स्तर विशेष के पश्चात विद्यार्थी को व्यवसायिक शिक्षा प्रदान की जाय। इससे जहाँ एक ओर बेरोजगारी समाप्त होगी वहीं राज्य के कन्धों का बोझ हलका होगा। युवकों में आत्म विश्वास उत्पन्न होगा तथा शिक्षा के प्रति नैराष्य की भावना समाप्त होगी।

ब. स्त्री शिक्षा -

स्वयं के उत्थान के अलावा इस वर्ग पर बालकों के पालन पोशण का भार भी है इन कारणों से इस वर्ग को शिक्षा विषेशकर उच्च शिक्षा कठिनाई से मिल पाती है। माँ स्वयं यदि शिक्षित नही है, तो बच्चों पर उनके रूढिवादी, अंधविश्वास, संकुचित प्रवृति आदि का प्रभावा पड़े बीना नहीं रहेगा फिर लालन पालन में इसकी और भी आवश्यकता है। जहाँ संतुलित भोजन का वैसे ही अभाव है और आवश्यक मात्रा में फल , दुध और जरूरत पड़ने पर दवा सुलभ होने की आशा ना हो वहाँ बच्चों का जीवन एवं स्वास्थ्य इस योग्यता पर निर्भर करता है कि प्राप्त प्रदार्थ के गुणों को समझते हुए उनका अधिकाधिक लाभ उठाया जा सके यह तभी संभव है जब माँ को विशय विशेष की शिक्षा प्रदान की गयी हो।

कल्याण -

अनेक अभावों के इस देश में भावी पीढ़ी के कल्याण का विशेष महत्व है। वृद्वों, आपाहिजों एवं रोगियों के कल्याण की आवश्यकता तो है हि किन्तु मातृ एवं शिशु कल्याण की और भी अधिक। यद्यपी इस ओर काफी कार्य हुआ है फिर भी इसे पर्याप्त मान लेना भुल होगी। शिशुओं के लालन-पालन के सम्बन्ध में आवष्यक निर्देष, प्रसवकाल में माताओं की उचित देखभाल, टानिक , विटामिन, प्रोटिन आदि युक्त पदार्थो की बहुलता औशधालय एवं शिशु कल्याण केन्द्र, जिनके कर्मचारी इस पवित्र क्षेत्र में कार्य करने के लिए हृदय से तत्पर हो। आदि के विस्तार की सर्वप्रथम आवश्यकता है। भविष्य नीधि की देखभाल किये बीना कोई भी वाद पनप नही सकता, चाहे वह लोकतंत्रिय समाजवाद ही क्यों ना हो|

एकता -

आजकल राष्ट्रविरोधी तत्व अत्यधिक सक्रिय है। सम्पुर्ण राष्ट्र को अपना देश मानकर चलना इनके लिए कठिन सा लगता है। दिन प्रतिदिन नई- नई मांगे सामने आती है। राष्ट्र प्रेम का अभाव हो गया है। सम्पूर्ण राष्ट्रके उत्थान के लिये कार्य करने की बात तो लोग सोचते ही नहीं। कभी भाषा के नाम पर , कभी प्रान्त के नाम पर, कभी धर्म, जाती या सम्प्रदाय के नाम पर नई समस्याऐं उठ खड़ी होती हैं इसके लिए आवश्यक है कि स्कुलों में एक ही पाठ्यक्रम हो। क्षेत्रिय भाषाओं के विकास के साथ साथ अधितर लोगों द्वारा बोली जाने वाली तथा समझी जाने वाली राष्ट्र भाषा का विकास हो। प्रसार की गति तेज की जाए सभी क्षेत्र के लोगों को शिक्षा, प्रसार तथा जनसंम्पर्क के द्वारा यह समझाने का प्रयास किया जाए कि एकता में बल है। सभी का संतुलित विकास होना है और सभी को समान अवसर प्राप्त होंगें। संकुचितता त्यागनी होगी।

स्वच्छ प्रशासन -

समाजवादी समाज की स्थापना के लिए स्वच्छ , सक्षम एवं ईमानदार प्रशासन की अत्यधिक आवश्यकता है। सरकारी कर्मचारी , नेतागण तथा राष्ट्र के कर्णधार यदी निष्चयात्मक ढंग से, अन्तर निहीत स्वार्थो को त्याग कर इस क्षेत्र में प्रयास करें तभी यह संभव होगा। श्रमिक एवं शिक्षक स्वार्थ की भावना से उपर उठकर अपने पद के अनुकुल सच्चाई एवं पवित्रता के आदर्शों पर चलकर इस क्षेत्र में वह महत्वपुर्ण योगदान दे सकते है। जन सेवाओं से बड़ा उद्देश्य और हो भी क्या सकता है ? प्रशासनिक सुधारों की सर्वाधिक आवश्यकता है। नौकरशाही या अधिकारी तंत्र की कमियाँ जो पुर्व

स्वतंत्र काल में व्याप्त थी आज भी पर्याप्त सीमा तक विद्यमान है। सरल प्रकृति के लागों को मुर्ख बनाना, रिश्वत, जानबुझ कर कार्य में विलम्ब करना अधिकार की भावना जैसे दोष कहीं भी देखे जा सकते है। लोकतंत्रिय सरकार होने के पश्चात भी यह दोष दूर नहीं किये जा सकें है। भ्रष्ट लोगों के विरूद्व कठोर कार्यवाही की जानी चाहिए तभी जनसाधारण के कष्टों का निवारण सम्भव है।

अनुसंधान-

समाजवादी समाज के उत्थान के लिए प्रत्येक क्षेत्र में आधुनिकतम वैज्ञानिक खोजों की आवश्यकता है। औद्यौगिक एवं तकनीक क्षेत्र में तो इसकी आवश्यकता है हि, इससे भी अधिक आवश्यकता कृषि क्षेत्र में है। कृषकों के पास इतनी अधिक भुमि नहीं रह गई है कि सभी मशीनों का प्रयोग कर सकें। आवश्यकता इसकी है कि नये तरीकों से नये बीज, नये खाद और नवीनतम अनुसंधानों के आधार पर वह कम से कम भुमि में इतना अधिक पैदा कर सके की उनकी आवश्यकता से अधिक हो । पुसा अनुसंधान संस्थान, उत्तर प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय आदि इस क्षेत्र में महत्वपुर्ण योगदान दे रहे हैं इनके अलावा मत्सयी पालन, मुर्गी पालन, दुग्ध उद्योग आदि के क्षेत्रों में उन्नति करने से उत्पादक एवं उपभोकता दोनो को लाभ होगा । परन्तु इस क्षेत्र में भयानक कमी यह है कि भारत में वैज्ञानिकों एवं अनुसंधान कर्ताओं को इतना सम्मान और सुविधाऐं प्राप्त नही है जितनी की अपेक्षित है। विद्यार्थी विदेशों में शिक्षा के लिए जाते है। और वही रह जातें हैं| यहाँ पर भी आधुनिकतम शिक्षा प्राप्त कर वह पष्चिमी देशों में चले जाते है। ब्रेन ड्रेन के समबन्ध में नित्य प्रति सुनने को मिल जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि वैज्ञानिकों के लिए हम स्वयं ही इतनी सुविधायें बटोर दें की वह विदेशों में जाने की बात सोचे ही नहीं । इस तरह दोहरे नुकसान से बचा जा सकेगा।

आर्थिक व्यवस्था -

अंतिम एवं सर्वाधिक महत्व्पूर्ण प्रश्न आर्थिक व्यवस्था का है। इस सम्बन्ध में तीन नाम गिनाए जा सकते है, सार्वजनिक क्षेत्र, व्यक्तिगत क्षेत्र एवं सहकारी क्षेत्र इन पर विचार करने के पुर्व श्री के. सन्थानम के विचार जान लेना अचित होगा, व्यक्तिगत, सार्वजनिक एवं सहकारी क्षेत्र आपस में प्रतिस्पर्धी नही अपितु एक दूसरे के पुरक है। देश के विकास के लिए तीनो का ही विकास आवश्यक है। एक की अपेक्षा दूसरे को महत्वपुर्ण समझना, या एक को समाप्त कर दूसरे के विकास के लिए प्रयत्न करना देश के विकास की गति को अवरूद्व कर देना है। इसलिए तीनों में समन्वय की आवश्यकता है।

11.3 सारांश

विभिन्न राष्ट्रअपनी-अपनी स्थितियों को देखते हुए अपने विकास के लिये प्रारूप का चयन करते हैं। पूँजीवादी प्रारूप जहाँ आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है, मशीनीकरण पर केन्द्रीत होता है तो समाजवादी प्रारूप सामाजिक कट्टरता पर आधारित होता है। देश अपनी-अपनी स्थितियों को देखते हुए अपने लिये सर्वोत्तम विकास के प्रारूप का चयन करते हैं।

11.4 शब्दावली

प्रतिरूप	माडल प्रारूप
आधुनिक	वर्तमान

एकाधिकार	संसाधनों पर व्यक्ति विषेश, वर्ग विशेषका अधिकार
माध्यम	वे द्वारा, की सहायता से, साधन

11.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामाजिक विकास के विभिन्न प्रारूपों को संक्षेप में लिखिए।
2. सामाजिक विकास के पूँजीवादी प्रारूप को लिखिए।
3. सामाजिक विकास के समाजवादी प्रारूप पर लेख लिखिए।
4. सामाजिक विकास के लोकतन्त्रीय समाजवादी विकास के प्रारूप को लिखिए।

11.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

- क्राम्पटन एच एण्ड काइजर के. (1970) सोषल वेलफेयर: इन्स्टीट्यूट एण्ड प्रोसेस, न्यूयार्क
- शंकर पाठक (1981) सोशल वेलफेयर एण्ड इवोलूशनरी डेवलपमेन्ट पर्सपेक्टि, मेक्मिलन, दिल्ली
- इन्साइक्लोपेडिया ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया (1987) वाल्यूम 11 व 111, मिनिस्ट्री ऑफ वेलफेयर, दिल्ली
- चिन आर (1969) यूटिलिटी ऑफ सिस्टम माडल एवं डेवलपमेन्ट माडल्स फार प्रेक्टिशनर्स, न्यू दिल्ली

इकाई - 12

सामाजिक विकास: गाँधी, विनोभा भावे एवं अम्बेड़कर के दृष्टिकोण

इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य
12.2 प्रस्तावना
12.3 महात्मा गाँधी एवं सामाजिक विकास
12.4 विनोबा भावे एवं सामाजिक विकास
12.5 अम्बेड़कर एवं सामाजिक विकास
12.6 सारांश
12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
12.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.1 उद्देश्य

इस इकाई के पश्चात आप -

- महात्मा गाँधी के सामाजिक विकास के दृष्टिकोण को समझ पांएगे।
- विनोबा भावे के सामाजिक विकास के दृष्टीकोण को समझ पांएगे।
- अम्बेडकर के सामाजिक विकास के दृष्टीकोण को समझ पांएगे।

12.2 प्रस्तावना

भारत में स्वतन्त्रता संग्राम के आरम्भ से ही विभिन्न महापुरुषों ने सामाजिक विकास को लेकर प्रयास किये। राजाराम मोहन राय, विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, अम्बेडकर आदि महापुरुषों ने तत्कालीन समाज को पिछड़ेपन से बाहर लाने, सशक्त बनाने के उपाय बताये। इस इकाई में महात्मा गाँधी, विनोबा भावे तथा अम्बेडकर के सामाजिक विकास के दृष्टिकोण को व्यक्त किया गया है।

12.3 महात्मा गाँधी एवं सामाजिक विकास

गाँधीजी ने जीवन के अनेक क्षेत्रों में अपने मौलिक विचार प्रदान किये। उनके विचारों को गाँधीवाद अथवा गाँधी दर्शन के नाम से जाना जाता है। गाँधीजी के दर्शन के 5 प्रमुख स्तम्भ- मानवतावाद, सत्य, अहिंसा, प्रेम तथा धर्म हैं। उनके दर्शन की आधारशिला नैतिकता है। वे नैतिकता के इतने बड़े पुजारी थे कि अनैतिक अथवा हिंसात्मक साधन द्वारा स्वतन्त्रता भी लेने के लिये तैयार नहीं थे।

उनका यह दृढ़ विश्वास था कि धर्म को रानीति से अलग नहीं किया जा सकता। बिना धर्म के राजनीति मृत्युपाष की तरह है जो आत्मा का हनन करती है। उनका धर्म से अभिप्राय आडम्बर अथवा रीतिरिवाज से न होकर ऐसे शाश्वत मूल्यों से था जो सम्पूर्ण मानवता के लिये कल्याणकारी हो। उन्होंने मानवतावाद को आधार मानकर ही सर्वोदय के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था।

गाँधीजी ने सत्य को, अहिंसा को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करते हुए उसे ईश्वर माना। उनका यह विचार था कि जो सत्य से जितना दूर होगा वह ईश्वर से भी उतना ही दूर होगा तथा सत्य का अनुसरण करने वाले व्यक्ति की कभी हार हो ही नहीं सकती क्योंकि उसे देवी शक्तियों का समर्थन प्राप्त होता है। इसीलिए गाँधीजी ने सत्याग्रह को लक्ष्यों की प्राप्ति का अमोघ अस्त्र बनाया। गाँधीजी का कहना था कि दूसरे शस्त्र असफल हो सकते हैं किन्तु सत्याग्रह का नहीं क्योंकि यह विरोधी के हृदय पर सीधे प्रहार करते हुए उसे जीत लेता है। यही वह साधन है जिसमें खून नहीं बहता।

गाँधीजी ने सत्य को अहिंसा से जोड़ा। उनके अनुसार सत्य ही अहिंसा है और अहिंसा ही सत्य। अहिंसा का स्त्रोत प्रेम है। गाँधी दर्शन में सत्य, अहिंसा और प्रेम न केवल एक दूसरे से भिन्न रूप से सम्बन्धित है बल्कि एक दूसरे के पर्यायवाची भी है। हिंसा सत्य के विरूद्ध है क्योंकि वह जीवन लीला को समाप्त करती है। अहिंसा का शाब्दिक अर्थ किसी भी प्राणी को मन, वचन एवं कर्म से कष्ट न पहुँचाना है। गाँधी जी का अहिंसा का अर्थ जीवों पर दया करना, सभी की भलाई करना तथा सभी के प्रति सद्भावना रखना था।

गाँधी दर्शन में साधन और साध्य दोनों ही महत्त्वपूर्ण है। इन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इन दोनो में बीज और वृक्ष जैसा सम्बन्ध है। जैसा बीज होगा, वैसा ही वृक्ष होगा। अनुचित साधनों से उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

गाँधी दर्शन मानवतावादी है। गाँधी जी मानव प्रतिष्ठा एवं गरिमा में अटुट विश्वास रखते थे। अष्पृष्यता के विरूद्ध उन्होंने संघर्श किया। उन्होंने हरिजनों को सार्वजनिक प्रकृति के सभी धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक स्थलों में प्रवेश दिलाने के लिए संघर्श किया। वे अष्पृष्यता को संवर्ण हिन्दुओं के लिए कलंक मानते थे जिसके लिये उन्हें उसका निवारण करते हुए प्रायष्चित करना चाहिए। वे मानव समानता के कट्टर समर्थक थे। गाँधी जी चरम समानता के कायल नहीं थे क्योंकि सभी व्यक्ति शक्ति, सामर्थ्य इत्यादि की दृष्टि से एक जैसे नहीं होते। वे व्यक्ति कर गरिमा एवं अवसरों की समानता में विश्वास रखते थे। उनका समाजवाद पष्चिमी समाजवाद से भिन्न हैं। वे साम्यवाद अथवा मार्क्सवाद के इसलिए विरोधी थे क्योंकि वे किसी भी कीमत पर समाज के विभिन्न वर्गों के बीच संघर्श नहीं चाहते थे। वे वर्गविहिन समाज की रचना करना चाहते थे ताकि प्रत्येक व्यक्ति को आर्थिक एवं सामाजिक समानता प्राप्त हो सके।

गाँधी जी ने न्यासधारिता के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया जिसके अनुसार पूँजीपति अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार पूँजी कमाये और उसे अपने पास समाज के न्यास के रूप में रखते हुए उसका प्रयोग समाज कल्याण हेतु करे। पूँजीपतियों को न्यास के रूप में अपने पास उपलब्ध धन में से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु केवल सीमित धन ही प्रयोग में लाना चाहिए। इसमें से आवष्यक आवश्यकताओं से अधिक धन का प्रयोग चोरी के समान है। गाँधी जी का यह विचार था कि पूँजीपतियों को श्रमिकों का शोषण नहीं करना चाहिए। इस प्रकार गाँधी जी ने पूँजीवाद और समाजवाद के बीच अद्भूत सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने रोटी और श्रम के

सिद्धान्त को प्रतिपादित किया जिसके अनुसार प्रत्येक मनुश्य को अपने हाथों से श्रम करते हुए अपनी आजीविका कमानी चाहिए। उनका दृढ़ विश्वास था कि शारीरिक श्रम के बिना जीवन में सुख सम्भव नहीं है। यदि सभी अपनी रोटी के लिये शारीरिक परिश्रम करें तो स्थिति एवं सम्बन्धी सभी प्रकार के भेद-भाव स्वतः समाप्त हो जायेंगे और समाजवाद के लिये मार्ग प्रषस्त हो जायेगा।

गाँधी जी व्यक्ति की स्वतन्त्रता को अत्यधिक महत्त्व प्रदान करते थे क्योंके उनकी योजना में व्यक्ति ही अधिकार एवं मान्यता का केन्द्र बिन्दु है। किसी भी समाज में तब तक कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हो सकती जब तक कि सभी व्यक्तियों को विकास के समुचित अवसर उपलब्ध न हो। उनका मत था कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता को समाज के परिपेक्ष्य में देखा जाना चाहिए और व्यक्ति को अपनी स्वतन्त्रता का प्रयोग समाज द्वारा निर्धारित की गयी सीमाओं एवं दूसरे व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की आवश्यकताओं के अधीन करना चाहिए। इस प्रकार गाँधी जी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के साथ-साथ संयम एवं अनुशासन पर भी बल देते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में गाँधी जी ने बुनियादी शिक्षा योजना प्रस्तुत की जिससे उनका अभिप्राय ऐसी शिक्षा से था जो जीने की कला सिखाये। उनके मत में वर्तमान शिक्षा पद्धति व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित न होने तथा इसके अन्तर्गत श्रम का कोई स्थान न होने के कारण दोषपूर्ण है। उन्होंने ऐसी शिक्षा पद्धति की जो मनुष्य के व्यवहारिक जीवन से सम्बन्धित थी तथा जिसका प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को जीवनयापन करने की दृश्टि से सबल बनाना था। गाँधी जी के मत में श्रम की प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जो श्रमिक की संस्कृति तथा उसके संतोष और कल्याण की वृद्धि करने में सहायक हो। जब श्रम का उद्देश्य केवल धनोपार्जन मात्र रह जाता है तब इसमें नैतिक पवित्रता समाप्त हो जाती है और इसके द्वारा आध्यात्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों का विकास नहीं हो पाता। श्रम के माध्यम से ही आध्यात्मिक तत्त्वों की स्थापना के लिये ही गाँधी जी ने बुनियादी शिक्षा की योजना प्रस्तुत की जिसके अधीन 7 से लेकर 14 वर्ष तक के बच्चों के लिये व्यवहारिक शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी। शिक्षा की इस योजना में बच्चों के रचनात्मक मष्तिष्क को बुनाई, कताई, सिलाई, बागवानी, चित्रकला इत्यादि व्यावहारिक क्षेत्रों में लगाने के लिये प्रावधान किया गया और साथ ही साथ प्रकृति का अध्ययन, ईष्वरीय गुणों एवं विषेशताओं के अध्ययन तक नैतिक शिक्षा को भी सम्मिलित किया गया। इस शिक्षा की योजना के माध्यम से गाँधी जी बच्चों के बोद्धिक, शारीरिक एवं नैतिक पहलूओं का संतुलित विकास करना चाहते थे ताकि वे अपने भावी जीवन में सर्वोदय समाज के ऐसे सदस्य बन सकें जो अपनी व्यावहारिक शिक्षा के आधार पर जीविकोपार्जन करने में स्वयं समर्थ हों। बुनियादी शिक्षा व्यवस्था में बौद्धिक शिक्षा हेतु इतिहास, भुगोल, अंकगणित तथा अन्य विज्ञानों की शिक्षा; शारीरिक शिक्षा हेतु सिलाई, कताई बुनाइ बागवानी इत्यादि की शिक्षा; तथा नैतिक शिक्षा हेतु धार्मिक शिक्षा का प्रावधान किया गया। धार्मिक शिक्षा का अभिप्राय साम्प्रदायिकता को प्रोत्साहित करने वाली शिक्षा से न होकर ऐसी शिक्षा से था जो बालक के व्यक्तित्व में आदर्षों एवं नैतिक मूल्यों का विकास कर सकें।

प्रचलित राज्य की व्यवस्था में पाये जाने वाले दोषों को देखकर गाँधी जी ने राज्य की नवीन रूपरेखा प्रस्तुत की जिसे उन्होंने रामराज्य कहा। यह एक आदर्श राज्य की रूपरेखा है। गाँधी जी का राजनीतिक आदर्शों का अन्तिम रूप रामराज्य था; और सामाजिक क्षेत्र का अन्तिम लक्ष्य सर्वोदय। उनके मत में सर्वोदय रामराज्य की आधारशिला है। उनका यह विचार था कि यदि समाज में राज

नीति का स्तर स्थानीय हो तो व्यक्ति पूर्ण राजनीतिक एवं आर्थिक स्वाधीनता का अनुभव कर सकता है। इस प्रकार उन्होंने सर्वोदय के लिये एक विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का प्रारूप प्रस्तुत किया। वे राज्य शक्ति का विकेन्द्रीकरण किये जाने के पक्षधर थे। वे राज्य शक्ति को राष्ट्र की सभी इकाईयों में इस प्रकार वितरित करना चाहते थे कि बुनियादी इकाई के पास सबसे अधिक शक्ति और केन्द्रीय स्तर पर सबसे कम शक्ति हो। राज्य के तत्कालीन स्वरूप के हिंसा पर आधारित होने के कारण गाँधी जी ने हिंसा रहित राज्य की कल्पना की। उनका रामराज्य पूर्ण प्रजातन्त्र वाला राज्य है जिसमें जन्म् वंश , धर्म, जाति, धन आदि के आधार पर कोई विषमतायें नहीं पायी जायेंगी और ऐसे राज्य में पुलिस का कार्य दमन न होकर सुधारवादी होगा। गाँधी जी राज्यविहीन समाज की स्थापना करना चाहते थे। गाँधी जी ने ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें शक्ति राज्य में संकेन्द्रित न होकर गाँव के स्तर पर पायी जाने वाली इकाईयों में सन्निहित हों। वे ऐसे राज्य का निर्माण करना चाहते थे जिसमें इसकी विभिन्न इकाईयाँ स्वतन्त्र हों और एक दूसरे के साथ ऐच्छिक सहयोग के आधार पर सम्बन्द्ध हों। इस प्रकार गाँधी जी ने एक राज्य रहित प्रजातन्त्र की कल्पना की जिसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपना शासक हो।

गाँधी जी ने जनप्रतिनिधित्व का समर्थन किया। उनके मत मे प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त होने चाहिये। वे अल्पमत को भी महत्त्व प्रदान करते थे। वे अध्यात्मपूर्ण प्रजातन्त्र के समर्थक थे। उनके मत में बहुमत के शासन का अर्थ अल्पमत की अभिलाशाओं को कुचलना नहीं था।

गाँधी जी विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के प्रतिपादक थे। ऐसी अर्थव्यवस्था रामराज्य के लिये आवश्यक है। इसके अन्तर्गत गाँवों का स्थान महत्वपूर्ण है। हर गाँव में एक पंचायत हो जो राज्य की एक बुनियादी इकाई हो और उसके हाथ में सम्पूर्ण शक्ति हो। हर गाँव स्वावलम्बी हो। किसी भी गाँव को अपनी आवश्यकता की वस्तुओं के लिये दूसरे गाँव पर निर्भर न रहना पड़े। गाँधी जी ने मशीनों के उपयोग का उसी सीमा तक समर्थन किया जिस तक वे व्यक्ति के महत्त्व एवं इसके नैतिक मूल्यों के लिये हानिकारक सिद्ध न हो।

गाँधी जी स्त्रियों की स्थिति सुधारते हुये उन्हें पुरुषों के समान स्तर दिलाना चाहते थे। उनके मत में स्त्री तथा पुरुष दोनों समान है। वे एक दूसरे के सहयोगी हैं। उन्हें समान अधिकार मिलने चाहिए। उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के लिये स्त्रियों का आहवान किया। पर्दा प्रथा का विरोध किया। उन्हें समाज में प्रतिष्ठा दिलायी। कानून की दृश्टि से स्त्रियों को समान अधिकार दिलाने का प्रयास किया। वे विधवा विवाह के समर्थक थे।

गाँधी जी का विकास से अभिप्राय निर्धनता विहिन समाज की स्थापना से था। गाँधी जी ने स्वयं यह लिखा था, "भावी समाज की बनावट ऐसी होनी चाहिए जिसमें गरीब एवं अमीर, काले और गौरे या मुल्क के बीच कोई अन्तर न रहे। उस समाज में मन की शुद्धि और दिल की फ़कीरी की जरूरत होगी।" गाँधी जी ने अहिंसक उपाय अपनाते हुये रचनात्मक कार्यक्रम को लागू कर सर्वोदयी समाज की स्थापना की बात कही। उनके रचनात्मक कार्यक्रम में (1) साम्प्रदायिक एकता, (2) अस्पृष्यता निवारण, (3) मद्य निशेध, (4) खादी, (5) ग्रामोद्योग, (6) नई तालीम (बेसिक शिक्षा (7) प्रौढ़ शिक्षा, (8) पिछड़ी जातियों की सेवा, (9)ग्राम स्वच्छता, (10) नारी उद्धार, (11) स्वास्थ्य एवं शिक्षा की शिक्षा, (12) राष्ट्रभाषा का प्रचार, (13) प्राकृतिक शिक्षा, (14) आर्थिक समानता से

सम्बन्धित कार्य, (15) किसानों, मजदूरों एवं युवकों के संगठनों की स्थापना, (16) निरन्तर आत्मिक उत्थान, (17) सर्व धर्म समभाव तथा (18) शारीरिक श्रम सम्मिलित थे।

सारांश में, गाँधी जी सत्य एवं अहिंसा के आधार पर रचनात्मक कार्यक्रम चलाते हुये गरीबी को दूर करना चाहते थे और सभी के हितों को प्रोत्साहित करना चाहते थे।

सर्वोदय एवं सामाजिक विकास

सर्वोदय का अर्थ - सर्व$उदय दो शब्दों से मिलकर बने हुये सर्वोदय शब्द का अर्थ 'सभी के कल्याण' से है। सर्वोदय की विचारधारा का बीजारोपण महात्मा गाँधी द्वारा किया गया था। उनका यह विचार था कि जब तक सम्पूर्ण समाज का विकास नहीं होगा तब तक स्थायी स्वतन्त्रता नहीं हो सकती है। 'सर्वजन सुखाय' का अर्थ भौतिक तथा आत्मिक दोनों प्रकार के सुख है। सर्वोदय के सिद्धान्त के आधारभूत तत्त्वों का निरूपम करते हुये गाँधी जी ने निम्नलिखित का उल्लेख किया है:-

1. सबके भले में ही अपना भला है।
2. वकील तथा नाई दोनों के काम का मूल्य एक सा होना चाहिए क्योंकि आजीविका पाने का दोनों का अधिकार एक सा है।
3. मजदूरों तथा कामगारों का जीवन ही सच्चा जीवन है।

सर्वोदयी समाज में उच्च विचारों का ही सर्वोपरि स्थान होता है। ऐसे समाज में व्यक्ति का सम्पूर्ण श्रम समाज कल्याण के लिये होता है तथा समाज व्यक्ति की पूर्ण वृद्धि एवं विकास के लिये सभी सुविधायें प्रदान करता है। ऐसे समाज में सभी व्यक्तियों के नैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक मूल्य समान होते हैं।

गाँधी जी ने सर्वोदय को सत्य एवं अहिंसा पर आधारित एक जीवन शैली के रूप में विकसित करने का प्रयास किया। गाँधी जी की मृत्यु के पश्चात विनोबा भावे ने भूदान तथा ग्रामदान की विचारधारा को सामने रखते हुये सर्वोदय के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। उनके मत में सर्वोदय सार्वलौकिक प्रेम पर आधारित एक आदर्श समाज व्यवस्था है जिसमें राजा और रंक, धनी एवं निर्धन सभी के अपने-अपने स्थान है। किसी भी व्यक्ति अथवा समूह का दमन, शोषण अथवा विनाष नहीं किया जा सकता। राधाकृशणन के मत में सर्वोदय का अर्थ यह है कि "सभी लोगों का हित प्रत्येक के हित में सन्निहित है और इसका प्रतिकूल भी सही है।"

सर्वोदय के लक्ष्य

सर्वोदय का उद्देश्य अहिंसात्मक साधनों का प्रयोग करते हुये जाति तथा वर्ग विहिन समाज की रचना करना है जिसमें व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा शोषण न हो, जिसमें धनी तथा निर्बल वर्ग न हो, जिसमें विचारों को व्यक्त करने तथा व्यवसाय करने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो, जिसमें विभिन्न धर्मों के अनुयायियों में घृणा की भावना न हो, जिसमें सभी लोग दूसरे लोगों के धर्म का आदर करतें हों तथा जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता के अनुसार कार्य के अवसर उपलब्ध हों और वह स्वैच्छिक रूप से समाज के विकास में अपना अधिक से अधिक योगदान देता हो।

सर्वोदय के 4 प्रमुख लक्ष्य हैं:-

(1) राजनीतिक लक्ष्य

ये लक्ष्य इस प्रकार है:

1. ग्राम्य स्वराज की स्थापना तथा राजनीति के स्थान पर लोक नीति का प्रादुर्भाव।
2. प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण पर आधारित नयी राजनीतिक व्यवस्था का विकास।

(2) आर्थिक लक्ष्य

ये लक्ष्य इस प्रकार है:

1. स्वेच्छापूर्ण शारीरिक श्रम, अस्वामित्व एवं आत्मविश्वास पर आधारित एक नयी समाज व्यवस्था का निर्माण।
2. भावना और पारस्परिक सहयोग में वृद्धि और परिणामतः वर्ग संघर्ष, द्वेश इत्यादि की समाप्ति।
3. भूस्वामियों के ह्रदय में प्रेम एवं श्रद्धा की भावनाओं की उत्पत्ति एवं सम्पूर्ण देश का नैतिक उत्थान।
4. त्याग एवं तपस्या पर आधारित भारतीय दर्शन का पुनरूत्थान।
5. आर्थिक विकेन्द्रीकरण हेतु ग्रामीण एवं कृषि पर आधारित उद्योगों का विकास।
6. मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु समुचित प्रौद्योगिकी का विकास।
7. औद्योगिक क्रियाओं में गाँधी न्यासधारिता का प्रयोग।

(3) सामाजिक लक्ष्य

ये लक्ष्य इस प्रकार है:

1. सुख समृद्धि, बन्धुत्व एवं सहयोग की भावना के विकास हेतु जीवन स्तर में सुधार।
2. जाति व्यवस्था एवं वर्ग भेद की समाप्ति।
3. शोषण को समाप्त करने के लिये सामाजिक समानता को प्रोत्साहन।

(4) नैतिक तथा धार्मिक लक्ष्य

ये लक्ष्य इस प्रकार है:

1. मानव व्यक्तित्व के समुचित विकास हेतु वैज्ञानिक ज्ञान के विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक पक्ष का विकास।
2. उचित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उचित साधनों का उपयोग।
3. जीवन के सभी पक्षों में नैतिक मूल्यों का विकास तथा उनके महत्त्व का ज्ञानवर्धन।

सर्वोदय के अधीन आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम इस प्रकार है:-

1.साम्प्रदायिक एकता, (2) अस्पृष्यता निवारण, (3) मद्यनिशेध, (4) खादी, (5) ग्रामोद्योग, (6) गाँव की सफाई, (7) बुनियादी तालीम, (8) प्रौढ़ शिक्षा, (9) स्त्री शिक्षा, (10) आरोग्य शिक्षा, (11) राष्ट्रभाषा एवं प्रान्तीय भाषाएँ , (12) आर्थिक समानताएँ, (13) आदिवासियों का विकास तथा (14) कुष्ठ रोगी, विद्यार्थी एवं पशु सुधार।

12.4 विनोबा भावे एवं सामाजिक विकास

भूदान की विचारधारा सर्वप्रथम 1953 में कोचमपल्ली में उभर कर सामने आयी जब संत विनोबा भावे की अपील पर एक धनाढ्य व्यक्ति ने अपनी भूमि का कुछ भाग भूमिहीनों के लिये दान कर दिया। विनोबा भावे जी का यह विचार था कि भारत के प्रत्येक नागरिक को अपना यह कर्तव्य समझना चाहिये कि वह अपने पड़ोसी को लाभ पहुँचाये, उसके हित को प्रोत्साहित करे तथा उसके दुःख में काम आये। भूदान के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए विनोबा जी ने कहा कि समय आ गया है कि लोग ईश्वर प्रदत्त इस भूमि को स्वयं ही आपस में स्वेच्छापूर्वक बाँट लें ताकि भूमि से व्यक्तिगत अधिकार को सदा सर्वदा के लिये समाप्त किया जा सके।

भूदान का उद्देश्य भूमि के स्वामित्व पर एकाधिकार को ऐच्छिक रूप से समाप्त करना है जिससे सामाजिक न्याय का आश्वासन प्रदान किया जा सके तथा धन का समुचित वितरण हो सके। विनोबा जी ने लोगों से इस बात की अपील की कि वे अपनी भूमि का छठवां भाग दान कर दें ताकि भूमिहीनों को भी भू-स्वामित्व प्राप्त हो सके।

भूदान के मुख्य आधार निम्नलिखित हैं:-

1. भूदान की भूमि पर होने वाले उत्पादन का बीसवाँ भाग ग्रामकोश के लिये दान किया जाय।
2. गाँव में पायी जाने वाली सम्पूर्ण भूमि का छठवाँ भाग दान कर दिया जाय।
3. भूदान में प्राप्त हुई भूमि का निर्धनों में वितरण कर दिया जाय।
4. गाँव के झगड़ों को गाँव के स्तर पर ही सुलझाया जाय।
5. गाँव के उत्थान से सम्बन्धित सभी निर्णय लोकमत अथवा सर्वसम्मति के आधार पर लिये जाय, मतदान के आधार पर नहीं।

ग्रामदान

यदि किसी गाँव में रहने वाले 80 प्रतिशत भू-स्वामी अपनी भूमि का स्वामित्व भूमिहीनों को प्रदान कर दें तथा प्रदान की गयी यह भूमि सम्पूर्ण भूमि के 51 प्रतिशत से अधिक हो तो ऐसे गाँव को ग्रामदान में मिली हुई भूमि का स्वामित्व सम्पूर्ण समुदाय का होता है किसी एक व्यक्ति का नहीं। ग्रामदान के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए विनोबा जी ने इसके सात लाभ बतायें हैं:-

1. निर्धनता उन्मूलन
2. भू-स्वामी के ह्रदय में प्रेम एवं श्रद्धा की उत्पत्ति तथा उसका नैतिक उत्थान।
3. मित्रता की भावना एवं पारस्परिक सहयोग की वृद्धि, वर्ग संघर्ष में कमीं, घृणा की भावना की समाप्ति।
4. धार्मिक उत्थान तथा सत्य एवं धर्म में विश्वास।
5. नवीन सामाजिक व्यवस्था का अभ्युदय।
6. रचनात्मक कार्यों में वृद्धि तथा समाज का उत्थान।
7. विश्व शांति में सहयोग।

लोक शक्ति

विनोबा भावे जी ने लोक शक्ति के निर्माण का संकल्प किया ताकि जनसंख्या में आत्मविश्वास एवं अहिंसा की भावना को सुदृढ़ बनाया जा सकें। लोकशक्ति हिंसा शक्ति और सैनिक शक्ति के विपरित है। सरकारी कानून लोक शक्ति का निर्माण नहीं कर सकते।लोक शक्ति समाप्त हो जाने पर राज्य एवं समाज का स्वतः विनाश हो जायेगा। लोक शक्ति का प्रादुर्भाव तभी हो सकता है जब लोग आत्म कस्ट एवं सत्याग्रह के लिये तैयार हों। लोकशक्ति में वृद्धि के साथ-साथ उसी अनुपात में राज्य शक्ति का ह्रास होता है; तथा राज्य शक्ति के कम होने पर लोगों में सुख एवं समृद्धि की वृद्धि होती है। समाज में शान्ति की स्थापना तब तक नहीं की जा सकती है जब तक कि लोक शक्ति में वृद्धि न हो। यदि सरकारी कानून ही अद्भूत चमत्कार कर पाने में समर्थहोते तो स्टालिन, हिटलर जैसे शक्तिशाली शासक कम से कम अपने-अपने देशों में स्वर्ग की स्थापना अवश्य कर देते किन्तु एसा हुआ नहीं क्योंकि लोकशक्ति का अभाव था। लोकशक्ति को विकसित करना ही एक ऐसा मार्ग है जिस पर आगे चलकर एक वर्ग विहिन, राज्य विहिन तथा शोषण मुक्त समाज अर्थात् सर्वोदय समाज की स्थापना कही जा सकती है।

12.5 अम्बेडकर एवं सामाजिक विकास

भीमराव अम्बेडकर ने हमेशा ही सामाजिक विकास के लिये निम्न वर्ग , दरिद्र व पिछड़े तबके के अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के कल्याण को सर्वोपरि बताया। अम्बेडकर सामाजिक तथा आर्थिक विकास को देश के सम्पूर्ण विकास का केन्द्र मानते थे। अम्बेडकर ने पिछडे तथा दलित वर्गो को न्याय तथा समान अधिकार दिलाने का भरसक प्रयास किया। वह सामाजिक भेदभाव के प्रखर विरोधी थे। वे दलित महिलाओं तथा श्रमिकों के हितों की रक्षा को सर्वोपरि मानते थे। अम्बेडकर स्वयं एक अधिवक्ता थे। उन्होंने अपने जर्नल के माध्यम से अछुत वर्ग के सामाजिक उत्थान तथा राजनैतिक अधिकारों के प्रति आवाज उठाई। उन्होंने अछुत तथा दलितों के उत्थान के लिये बहिश्कृत हितकारिणी सभा का गठन किया। जिसके द्वारा अछुत तथा दलितों के कल्याण, सामाजिक व आर्थिक उत्थान के लिये आवाज उठायी गयी। 1930 में अम्बेडकर ने कालाराम मन्दिर आन्दोलन किया जिसका उद्देश्य पूरे देश से अछुत व दलित वर्ग को एकत्रित कर कालाराम मन्दिर में प्रवेष कर भगवान के दर्शन करना था। यह आन्दोलन मानवीय गरिमा, सम्मान तथा समानता पर आधारित था। अम्बेडकर स्वतन्त्र भारत के संविधान निर्मात्री समिति में भी थे। भारत के संविधान में उन्होंने अस्पृष्यता, छुआछुत, भेदभाव का पुरजोर विरोध करते हुए भारत के सभी नागरिकों के मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की।

12.6 सारांश

महात्मा गाँधी ने सभी के कल्याण को स्वीकारते हुए सर्वोदय की भावना को व्यक्त किया। उन्होंने ग्राम स्वराज्य, चरखा, सत्य व अहिंसा को सामाजिक विकास में महत्त्वपूर्ण माना। विनोबा भावे ने ग्रामदान, भूदान के महत्त्व को बताते हुए संसाधनों के पूनर्वितरण की व्यवस्था की बात कही। अम्बेडकर ने अस्पृष्यता, भेदभाव, छुआछुत, पिछड़े वर्गों का उद्धार व उनके कल्याण को सामाजिक विकास की नींव माना।

12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामाजिक विकास पर महात्मा गाँधी के दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिये।
2. सामाजिक विकास पर विनोबा भावे के दृष्टिकोण के बारे में लिखिए।
3. सामाजिक विकास पर अम्बेडकर के दृष्टीकोण के बारे में बताइए।
4. सर्वोदय पर निबन्ध लिखिए।
5. ग्रामदान तथा भूदान की व्याख्या कीजिये।

12.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- जगन मोहन (2000) सोशल प्राब्लम एण्ड वेलफेयर इन इण्डिया आशीष पब्लिकेशन
- विनोद के अग्रवालः (2004) स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महत्वपूर्ण अधिनियम, रोजगार समाचार का लेख
- उलिन्स मार्टिन (1967) “द सोसाइटल फन्कसन्स ऑफ सोशल वेलफेयर” जर्नल ऑफ सोशल वेलफेयर
- सिंह, मिश्र, सिंह (2006) भारत में सामाजिक नीति, नियोजन एवं सामाजिक विकास